आर.एन.आई. नं. 3653/57
मुद्रण तिथि 5 से 8 फरवरी, 2023
डाक प्रेषण तिथि 10 फरवरी, 2023

वर्ष : 81 अंक : 02
फाल्गुन, 2079 मूल्य : ₹ 10
पृष्ठ संख्या 104

डाक पंजीयन संख्या Jaipur City/413/2021-23
WPP Licence No. Jaipur City/WPP-04/2021-23
Posted at Jaipur RMS (PSO)

ISSN 2249-2011

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

फरवरी, 2023

Website : www.jinwani.in

जीवदया का भाव जीवन में ऊर्जा, उदारता, उल्लास, सहिष्णुता, संवेदनशीलता, सहानुभूति, मैत्रीभाव, सौहार्द आदि से मनुष्य को जीवन्त रखता है।

गुरुदेव फ़रमाते हैं

(आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के प्रवचन-वाक्यांश)

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल द्वारा आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के 60वें दीक्षादिवस पर उनके प्रवचनों से संकलित प्रेरक एवं बोधपरक सुवाक्यों की पुस्तक 'गुरुदेव फ़रमाते हैं' का प्रकाशन किया गया। तकनीकी त्रुटि के कारण क्रमांक 64 से 70 तक के विषयों से सम्बन्धित जो सुवाक्य प्रकाशित होने से रह गये उन्हें विषयवार प्रस्तुत किया जा रहा है। -सम्पादक

64. व्रत

- जिसका जीवन और मरण पर नियन्त्रण होगा, उसकी यहाँ भी जय है और आगे भी जय है।
- ज्ञान करने से भी बढ़कर मर्यादा-पालन है और मर्यादा-पालन में ही समाधि है।
- मर्यादा-तोड़ने के कार्य में भागीदार मत बनिए, अपितु स्वयं मर्यादा में रहना सीखिए।
- जिस व्यक्ति के नियम नहीं, मर्यादा नहीं तो वह स्वयं खतरे में है, उसके पास जो बैठा है वह भी खतरे में है।
- आप मर्यादा में हैं तब तक सुखी हैं। जिस दिन मर्यादा छोड़ देंगे तो घर वाले भी दु:ख देने वाले हो जायेंगे।
- आप संयम में हैं, मर्यादा में हैं और आपका आचरण शुद्ध है तो ही आपके जीवन की शोभा है।
- गुब्बारा दिखने में बड़ा, पर हाथ में लेने पर भारी नहीं, लोटा भर पानी उठाकर चलो तो भारी, पीकर चलो तो भारी नहीं, कन्धे पर कम्बल भारी, ओढ़ने पर भारी नहीं, वैसे ही धर्म-नियम-प्रत्याख्यान दिखने में भारी लगते हैं, पर धारण करने पर भारी नहीं होते।
- मानव जीवन को सार्थक बनाने के लिए व्रती बनिये।
- व्रत ग्रहण करिये और पापों से हटिये। सन्त नहीं बन सकते तो श्रावक तो बनिये।
- एक सामायिक, एक नवकारसी भी पापों का शमन करती है।
- जैसे बिना बाढ़ के खेत लुट जाता है, बिना पतवार की नौका डूब जाती है, बिना ताले के खज़ाना चुरा लिया जाता है, वैसे ही बिना नियम के जीवन में सद्गुणों की सम्पत्ति भी लुट जाती है।
- जीवमात्र के प्रति करुणा-प्रेम-अनुकम्पा का विस्तार है- महाव्रत।

65. शान्ति

- अशान्ति व्यक्ति के विकास का मार्ग अवरुद्ध कर देती है। जहाँ अशान्ति है वहाँ विकास की गति स्वत: रुक जाती है।
- साधक का मुख्य लक्ष्य आत्मिक शान्ति की प्राप्ति होता है।
- शान्ति के लिए संयम, तप, त्याग, करुणा एवं अहिंसा का पथ ग्रहण करना होता है।

66. सजगता

- प्रमादी के लिए भूल होना अनहोनी बात नहीं है। सावधानी से चलने वाला भी कभी ठोकर खा सकता है।
- नादान की भूल क्षम्य है। आवेग से हुई भूल के सुधार के लिए क्षमायाचना करनी होती है और इरादतन भूल के शुद्धीकरण के लिए आलोचना है, प्रतिक्रमण है, प्रायश्चित्त है।

67. सत्य

- जो वचन या व्यवहार, जगत के समस्त प्राणियों के लिए सर्वथा सुखदायी है, वही सत्य है।
- जिसका आचरण पवित्र, अन्त:करण निर्मल तथा आचार-विचार ऊँचा नहीं होगा, वह सत्यवादिता का साया नहीं पकड़ सकता। जैसे शूरता और वीरता की भावना से रहित व्यक्ति का युद्ध के मैदान में ठहरना असम्भव है वैसे ही शुचिता और निर्मलता के बिना सत्यवादिता का प्रयोग कँपकँपी पैदा करने वाला होता है।
- सत्यप्रिय व्यक्ति को संसार में कोई भी ऐसा बुरा कर्म करना पसन्द नहीं आता, जिसकी अभिव्यक्ति या प्रकाशन में उसे मुँह बन्द करना पड़े, घुटन और विवशता अनुभव करनी पड़े।
- वाणी का प्रयोग सत्य को आवृत्त करने या दबाने के लिए नहीं, किन्तु उसको विकसित और उद्योतित करने के लिए होना चाहिए।
- सत्य से अलग होकर यदि कोई व्यवहार किया जाय तो अर्थ का अनर्थ हुए बिना नहीं रहता, किसी भी वस्तु की कोई प्रामाणिकता नहीं रहती और इससे सब कुछ नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है।
- सत्य का सबसे बड़ा अभिनन्दन और स्तुतीकरण यही है कि हम उसके अनुसार स्वयं चलें और दूसरे को भी चलाने की चेष्टा करते रहें।
- धर्म का सार सत्य है, विद्या का सार निश्चय है तथा सुख का सार सन्तोष है।
- सामान्य व्यक्ति जो न्याय-नीतिपूर्वक ईमानदारी और सच्चाई से जीवनयापन करता है, उसके जीवन में विकारों का स्थान प्राय: नहीं होता।
- बारह वर्ष तक यदि कोई सत्य भाषण एवं सदाचरण करे, तो उसे वचनसिद्धि हो जाती है।
- असत्य को असत्य मानकर उसका सेवन करने वाला, सम्भव है शीघ्र सत्य के मार्ग पर आ जाए, किन्तु सत्य का ढोंग करने वाला सत्य की राह पर नहीं आ सकता।
- आग से सीञ्चे जाने पर भी जैसे वृक्ष बढ़ नहीं पाता, वैसे ही सत्य को छोड़कर धर्म कभी भी पुष्ट नहीं हो सकता।
- धर्म सत्य है और सत्य धर्म है, दोनों युक्तिपूर्ण सत्य हैं।
- जो सत्यवादी होता है, उस पर उसका शत्रु भी विश्वास करता है।

68. सत्संग

- नदी किनारे बैठने पर पानी नहीं पीयें तो भी सुकून मिलता है, वैसे ही सत्संग में बैठोगे तो कुछ नहीं करने पर भी शान्ति की अनुभूति होगी ही।
- कुसगंति किसे कहना? जहाँ बैठने से बुरी भावना उठे, काम-क्रोध भड़के, वही कुसंग है।
- जैसे नदी का मीठा जल खारे समुद्र की संगति से खारा हो जाता है, वैसे ही सुशील व्यक्ति भी कुशीलों की संगति से बिगड़ जाता है।
- सत्संग पाकर जो लाभ नहीं उठाते वे कल्पतरु के नीचे भूखे-प्यासे बैठे व्यक्ति के समान हैं।
- जैसे पारस लोहे को स्वर्ण बनाता है वैसे ही सत्संग क्रूर एवं दुष्ट जनमानस को पावन बना देता है।

69. समता

- अपकारी के प्रति अपनत्व की भावना जगाना ही समत्व की साधना है।
- सच्चे सन्त की पहचान उसके भक्तों की संख्या से नहीं, उसकी समत्व-साधना से होती है।
- देव में सर्वज्ञता एवं वीतराग भाव और साधु में समताभाव के गुणों का समावेश होने पर ही वे वन्दनीय तथा आराध्य रूप में स्मरणीय माने जाते हैं।

- प्रतिदिन काम में ली जाने वाली तलवार पर जंग नहीं होती, प्रतिदिन काम में लिये जाने वाले बर्तन-भाण्डों पर धूल नहीं होता, प्रतिदिन सफाई होने वाले आँगन में रेत की जाजम नहीं होती तथा प्रतिदिन मधुर-मिलन से प्रेम में कमी नहीं आती वैसे ही प्रतिदिन समभाव के अभ्यास से विषम भावों का कचरा नहीं आ सकता।
- दुःख, कठिनाइयाँ और आपत्तियाँ हमारे समभाव की परीक्षा लेने आती हैं।
- कर्मों को समता के साथ भोगेंगे तो नये कर्मों से बचे रहेंगे।
- कषायों का शमन करना सबसे बड़ा व्रत है।
- समता की साधना नहीं है तो बड़े-बड़े त्याग करने वाले भी छोटी-छोटी बातों के लिए लड़ पड़ते हैं।
- जो समता रख सकता है, वही परीषह सहन कर सकता है। समत्व ही साधुत्व की कसौटी है। विषम परिस्थिति में समत्व रखें, व्यग्रता में नहीं झूलें।
- साधु और श्रावक में देखने की बस एक ही बात है- समता।
- परीषह-विजय समत्व-भाव से सम्भव है।
- प्रतिदिन सन्ध्या के समय अपनी भूलों को याद कीजिये, डायरी में लिख डालिये। प्रतिदिन लिखते-लिखते कभी उन्हें मिटाने का विचार आएगा। भूलें मिटेंगी, समता बढ़ेगी। समता बढ़ेगी तो कषाय घटेंगे।
- सुख और दुःख की भोगजन्य स्थिति में हर्ष या शोक के स्थान पर समभाव रखना चाहिए।
- पीड़ा और कष्ट कहने के लिए नहीं, सहने के लिए आते हैं।

70. समय

- समय की जो कीमत करेगा, समय उसकी कीमत करेगा।
- जीवन में समय बिताने के लिए नहीं, बल्कि समय जीवन को बनाने के लिए है।
- क्षण-क्षण गतिशील इस काल को सुई के काँटे से मानव जान तो सकता है, पर रोक नहीं सकता।

संसार की समस्त सम्पदा और भोग के साधन भी मनुष्य की इच्छा को पूरी नहीं कर सकते हैं।

-आचार्यश्री हस्ती

आवश्यकता जीवन को चलाने के लिए जरूरी है, पर इच्छा जीवन को बिगाड़ने वाली है, इच्छाओं पर नियन्त्रण आवश्यक है।

-आचार्यश्री हीरा

जिनका जीवन बोलता है,
उनको बोलने की उतनी जरूरत भी नहीं है।

-उपाध्याय मान

With Best Compliments :
Rajeev Nita Daga Foundation Huston

ISSN 2249 - 2011 हिन्दी-मासिक

जिनवाणी

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी'।।

卐 संरक्षक
अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
प्लॉट नं. 2, नेहरुपार्क, जोधपुर (राज.), फोन-0291-2636763
E-mail : absjrhssangh@gmail.com

卐 संस्थापक
श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

卐 प्रकाशक
अशोककुमार सेठ, मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नं. 182, के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003(राज.)
फोन-0141-2575997, 2705088
जिनवाणी वेबसाइट- www.jinwani.in

卐 प्रधान सम्पादक
प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन

卐 सह-सम्पादक
नौरतनमल मेहता, जोधपुर
त्रिलोकचन्द जैन, जयपुर
मनोज कुमार जैन, जयपुर

卐 सम्पादकीय कार्यालय
ए-9, महावीर उद्यान पथ, बजाजनगर, जयपुर-302015 (राज.)
फोन : 0141-2705088
E-mail : editorjinwani@gmail.com / editorjinvani@gmail.com

卐 भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं.-JaipurCity/413/2021-23
WPP Licence No. JaipurCity-WPP-04/2021-23
Posted at Jaipur RMS (PSO)

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

अभिक्खणं कोही हवइ,
पबंधं च पकुव्वइ।
मेत्तिज्जमाणो वमइ,
सुयं लद्धूण मज्जइ।।

-उत्तराध्ययन सूत्र, 11.7

करता जो बार-बार क्रोध,
या क्रोध टिका कर रखता है।
ठुकराता प्रेमी की मैत्री,
श्रुत पाकर जो मद करता है।।

फरवरी 2023
वीर निर्वाण सम्वत्, 2549
फाल्गुन, 2079

वर्ष 81 अंक 2

सदस्यता शुल्क

त्रिवार्षिक : 250 रु.	स्तम्भ सदस्यता : 21000/-
20 वर्षीय, देश में : 1000 रु.	संरक्षक सदस्यता : 11000/-
20 वर्षीय, विदेश में : 12500 रु.	साहित्य आजीवन सदस्यता- 8000/-

एक प्रति का मूल्य : 10 रु.

शुल्क/सहयोग राशि ``JINWANI'' बैंक खाता संख्या SBI 51026632986 IFSC No. SBIN 0031843 में NEFT/RTGS से जमा कराकर जमापर्ची के साथ पेन नं. भी (काउन्टर-प्रति) श्री अनिलजी जैन के व्हाट्स एप्प नं. 9314635755 पर भेजें।

जिनवाणी में प्रदत्त सहयोग राशि पर आयकर में 80G की छूट उपलब्ध है।

मुद्रक : डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन- 0141-4043938

नोट- यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो।

विषयानुक्रम

सम्पादकीय-	जीवदया का प्रयोजन	–डॉ. धर्मचन्द जैन	7
अमृत-चिन्तन-	आगम-वाणी	–डॉ. धर्मचन्द जैन	10
विचार-वारिधि-	जीवन-निर्माण के सूत्र	–आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा.	12
प्रवचन-	हिंसा का परिणाम दुःख है और अहिंसा का सुख	–आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा.	13
	श्रद्धामय आचरण आत्मोन्नति का साधन	–भावीआचार्यश्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.	17
	जीव पर दृष्टि स्वमत है, पुद्गल पर दृष्टि परमत है	–तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा.	20
	सम्यक् विधि से फेरें माला	–श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा.	24
English-section	**Acharya Shri Hasti on Contemporary Global Problems and Remedial Measures**	–*Prof. S. R. Bhatt*	27
शोधालेख-	प्राकृत का हिन्दी को योगदान	–डॉ. दिलीप धींग	34
	'तित्थयरभावणा' में तत्त्वविचार एवं नयसमीक्षा	–ब्र. चन्द्रप्रभा जैन	41
परिवार-स्तम्भ-	बुरे व्यक्ति के जीवन में भी परिवर्तन आ सकता है	–श्री मोहन कोठारी 'विनर'	46
तत्त्व-चर्चा-	आओ मिलकर कर्मों को समझें (25)	–श्री धर्मचन्द जैन	48
इतिहास-	ज्ञान चौपड़ से लेकर साँप सीढ़ी के खेल की यात्रा	–श्री नमन डागा	52
युवा-स्तम्भ-	आदर्शों की खोज एवं श्रेष्ठता का आधान	–श्री पदमचन्द गाँधी	54
जीवन-व्यवहार-	दर्द देते समय ही हो जाए अहसास तो...	–श्री गौतम पारख	57
	यह जीवन काँच का बाजा	–साध्वीयुगल निधि–कृपा	64
जीवन-शैली-	शाकाहार ही सुखी एवं नीरोगी जीवन का आधार है	–श्री शान्तिलाल कुचेरिया	59
प्रेरणा-	अभिनव पहल	–श्री ओमप्रकाश गुप्ता	62
स्वास्थ्य-विज्ञान-	शारीरिक स्वास्थ्य पर पंचकारण समवाय का प्रभाव	–डॉ. चंचलमल चोरड़िया	66
जीवन-मूल्य-	समय के हर क्षण का सम्मान करें	–श्री दिलीप गाँधी	68
प्रेरक-प्रसङ्ग-	कैंसर तुम्हारा स्वागत है	–श्री वीरेन्द्र कांकरिया	69
गीत/कविता-	मैं साधु हूँ	–श्रीमती रेणु जैन 'साक्षी'	16
	हवा से लौ लगाए बैठे हैं	–श्री राजेन्द्र जैन 'राजा'	26
	जीवन सफल बनाता है-मौन	–श्री देवेन्द्रनाथ मोदी	51
	लहरों की कश्मकश	–श्री निपुण डागा	53
	जिसके दिल में है दया की धारा	–श्री सुशील चाणोदिया	58
	बढ़ा ले एक क़दम	–श्री तरुण बोहरा 'तीर्थ'	60
	जिज्ञासा	–डॉ. रमेश 'मयंक'	61
	सुख की छाँव में रहते हैं	–श्रीमती भारती जैन	65
	कोई साथ नहीं जायेगा	–श्री विजेन्द्र जैन	65
	मुस्कराना सीख ले	–श्री महेश नाहटा	67
	जीवन-बोध क्षणिकाएँ	–श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.	72
	हस्ती के जैसा गुरुवर पाया	–श्री गोरांश जैन	72
विचार/चिन्तन-	बहू क्या लाई है?	–श्रीमती निधि दिनेश लोढ़ा	23
	व्यवहार को प्रभावी बनाने के गुर	–श्री नवरतन डागा	51
	धन की गति	–श्री अजीत भण्डारी	63
	गुरु की महिमा	–श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा.	88
	परोपकार	–श्री एस. कन्हैयालाल गोलेच्छा	90
साहित्य-समीक्षा-	नूतन साहित्य	–श्री गौत्तमचन्द जैन	73
समाचार-विविधा-	समाचार-संकलन	-संकलित	75
	साभार-प्राप्ति-स्वीकार	-संकलित	89
बाल-जिनवाणी -	विभिन्न आलेख/रचनाएँ	–विभिन्न लेखक	91

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 7
ISSN 2249-2011

सम्पादकीय

जीवदया का प्रयोजन

डॉ. धर्मचन्द जैन

जैनदर्शन में अहिंसा का एक प्रायोगिक रूप है- दया। प्रश्नव्याकरणसूत्र में अहिंसा के 60 नाम दिये गये हैं, जिनमें रक्षा, दया, अमारि, विशुद्धि आदि अनेक नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। अहिंसा के दो पक्ष हैं-(1) किसी प्राणी की हिंसा न करना, (2) प्राणियों की रक्षा करना, उन पर दया करना। रक्षा एवं दया करने का तात्पर्य उनकी प्राण रक्षा करने के साथ, उनके जीवन में सहयोगी बनना भी है। यही जीवदया है। स्थानकवासी परम्परा में साधु-साध्वी आगन्तुक श्रावक-श्राविकाओं को 'दया पालो' का सन्देश देते हैं। 'दया' शब्द अन्य प्राणियों के प्रति अनुकम्पा एवं करुणा को अपने में अन्तर्निहित करता है। जो क्रूर, निष्ठुर, निष्करुण एवं अनुकम्पारहित होते हैं, उनको अन्य प्राणियों के प्रति आत्मवद् भाव एवं मैत्री की अनुभूति नहीं होती। वे क्षुद्र स्वार्थ में निष्करुण बनकर अहिंसा की अवहेलना करते हैं। अन्य प्राणियों के दु:खदर्द को अपने दु:खदर्द के समान समझने पर दया का आविर्भाव होता है। एक पाश्चात्य विद्वान् ने कहा है- "Non violence is the heart of Jainism, but this non-violence has no heart." इसका तात्पर्य यह है कि जैनधर्म का प्राण अहिंसा है, किन्तु वह अहिंसा हृदयहीन है। अहिंसा को पाश्चात्य विद्वान् इस तरह से विश्लेषित कर रहे हैं, इसका कारण जैनधर्म में कुछ उन परम्पराओं की मान्यता है जिनमें करुणा, अनुकम्पा रूप दया-दान को हेय माना गया है। जबकि जैन आगम एवं उत्तरवर्ती साहित्य में दया को उच्च स्थान दिया गया है। 'पढम नाणं तओ दया' (दशवैकालिकसूत्र) 'दयामूलो भवेद् धर्मो' (आदिपुराण), 'धम्मो दयाविसुद्धो' (आचार्य कुन्दकुन्द) आदि इसी प्रकार के वाक्य हैं जो दया को धर्म का मूल प्रतिपादित करते हैं।

जीवों पर अनुकम्पा के बिना दया का होना सम्भव नहीं है। अनुकम्पा को सम्यग्दर्शन का व्यावहारिक लक्षण कहा गया है। दूसरों के दु:ख से कम्पित होना अनुकम्पा है। यह अनुकम्पा बिना रिश्ते-नाते के, बिना मोह के होती है तब सम्यग्दर्शन का स्वरूप ग्रहण करती है। अनुकम्पा आर्त्तध्यान नहीं है और न ही आर्त्तध्यान का कारण है। अपितु यह जीव की संवेदनशीलता को प्रकट करती है। यह संवेदनशीलता मनुष्य की जड़ता एवं निष्ठुरता का नाश करती है। यह प्राकृतिक नियम है कि जो दूसरे के दु:ख को देखकर अनुकम्पित होता है, उसके प्रति सद्भावों को प्रवाहित करता है वह अपनी दु:खद परिस्थितियों को भूल जाता है।

कोई भी दर्शन या व्यक्ति जो आत्महित और सर्वहित से जुड़ा होता है, वही मानवमात्र के लिए कल्याणकारी होता है। जो अपने को संकुचित बनाता है, आत्महित के नाम पर मानवीय मूल्यों की अवहेलना करता है तथा अन्य प्राणियों के प्रति निष्ठुरता का व्यवहार करता है वह वस्तुत: अपनी चेतना का भी विकास करने से वञ्चित रहता है। करुणा को धवला टीका (पुस्तक 13, पृष्ठ 362) में जीव का स्वभाव निरूपित किया गया है-**करुणाए जीव सहावस्स कम्मजणिदत्त-विरोहादो।**

करुणा किसी कर्म के उदय से प्रकट नहीं होती है। करुणा को पर-दु:खविनाशिनी कहा गया है। मेघकुमार ने हाथी के पूर्व भव में प्राणानुकम्पा, भूतानुकम्पा, जीवानु-कम्पा तथा सत्त्वानुकम्पा से संसार परीत किया था (ज्ञाताधर्मकथासूत्र, अध्याय 1) इसका तात्पर्य है कि अनुकम्पा से संसार सीमित होता है।

जीवों के प्रति दया अर्थात् जीवदया से अनुकम्पा एवं करुणाभाव का विकास होता है। करुणा और मोह में महद् अन्तर है। मोह में दूसरों से सुख पाने की इच्छा

निहित रहती है इसलिये जिसके प्रति मोह है उसके दु:खी होने पर जो दु:ख का अनुभव होता है वह मोह के कारण होता है। करुणा में सभी प्राणियों के दु:ख से अनुकम्पा का अनुभव होता है। वह बिना मोह के होता है। करुणा, अनुकम्पा और दया जीव के सात्त्विक भाव हैं जो उसकी चेतना को विकसित करते हैं। करुणा में जाति-पाँति, धनी-निर्धन, छोटा-बड़ा, स्वजन-परिजन आदि का भेद नहीं होता। तत्त्वार्थवार्त्तिक (1.2.30) में भट्ट अकलंक ने समस्त प्राणियों के प्रति मैत्री भाव को अनुकम्पा कहा है।

भगवान ने समस्त जगत के जीवों पर रक्षा एवं दया के भाव से प्रवचन फरमाया था-**सव्व-जग-जीव रक्खणदयट्ठयाए भगवया पावयण सुकहियं।** (प्रश्नव्याकरणसूत्र, प्रथम संवर द्वार) तीर्थङ्कर नेमिनाथजी ने बाड़े में बन्द पशुओं पर अनुकम्पा करके उन्हें बन्धन मुक्त करवाया तथा स्वयं ने विवाह न करने का निर्णय लिया। इस अनुकम्पा को मोह नहीं कहा जा सकता है। राजप्रश्नीयसूत्र में केशीश्रमण ने राजा प्रदेशी को श्रावक धर्म स्वीकार करने के साथ लोकहितकारी कार्य करने के लिए प्रेरित किया। अनेक जैन सन्तों एवं आचार्यों ने देवी-देवताओं के समक्ष होने वाली पशुबलि बन्द करवाकर लाखों पशुओं को अभयदान प्रदान किया है। यह भी अनुकम्पा एवं करुणा का फल है। इसे मोह नहीं कहा जा सकता। अज्ञान एवं अन्धश्रद्धा के कारण सदियों तक पशुबलि का प्रवाह चलता रहा, किन्तु अब इसे अन्धश्रद्धा मानकर प्राय: त्याज्य समझा जा रहा है। मांसाहार का सेवन, क्रूरता एवं करुणाहीनता का परिचायक है। जिनमें अन्य प्राणियों के प्रति आत्मवद्भाव है, वे अपने भोजन के लिए कत्ल हो रहे पशु-पक्षियों को देखकर अनुकम्पित हुए बिना नहीं रह सकते, क्योंकि उन प्राणियों को भी वेदना का अनुभव होता है। वे भी उसी प्रकार जीना चाहते हैं, जिस प्रकार मनुष्य जीना चाहता है। भगवान महावीर ने आचाराङ्गसूत्र में यह उद्घोष किया है कि-सभी प्राणियों को आयुष्य प्रिय है, सुख प्रिय है, दु:ख प्रतिकूल लगता है, वध किसी को प्रिय नहीं है, सबको जीवन प्यारा है, सब जीव जीना चाहते हैं इसलिये उनके प्रति आत्मवद्भाव के विकास की आवश्यकता है। इस सन्देश को अपनाने पर मांसाहार कदापि सम्भव नहीं है। जैन ग्रन्थों में सप्त कुव्यसनों की चर्चा प्राप्त होती है उनमें मांसाहार को भी एक कुव्यसन की कोटि में रखा गया है।

कुछ लोग यह प्रश्न खड़ा करते हैं कि सभी जीव समान हैं, इसलिये शाकाहार में भी अनेक प्राणियों की हिंसा होती है, तो फिर मांसाहार में क्या बुराई है? इसके उत्तर में कहा जा सकता है कि जिन जीवों की चेतना विकसित है तथा जिनमें चेतना का हमें साक्षात् अनुभव होता है, उन त्रस जीवों की रक्षा करना हमारा पहला दायित्व बनता है। द्वीन्द्रिय से लेकर संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पशु-पक्षियों में और मनुष्यों में उनके शरीर की क्रियाओं को देखकर चेतना का सहज अनुमान होता है। इसलिये उनके प्राणों की रक्षा करना, प्रथम कर्त्तव्य बनता है। पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु में एकेन्द्रिय जीव होते हुए भी वे हमें दृग्गोचर नहीं होते हैं तथा उनके बिना हमारा जीवन नहीं चल पाता है। इसलिये विवशता में उनका उपयोग करना पड़ता है। उपयोग में भी हिंसा को अल्पतम करने का भाव रहना चाहिये। वनस्पति में जीवन का हमें बोध होता है, किन्तु संसार में भोज्य सामग्री के अन्तर्गत यही सहज, सुलभ एवं शरीर के लिए अनुकूल भोजन का कार्य करती है। वनस्पति की एक विशेषता है कि इसमें जो फल उत्पन्न होते हैं वे पकने के पश्चात् पेड़ के नीचे गिर जाते हैं। मनुष्य उनको अपना भोजन बना सकता है। मांसाहार को सम्पूर्ण विश्व में त्याज्य समझा जा रहा है तथा उसके स्थान पर शाकाहार या वीगन को अपनाया जा रहा है। कुछ वनस्पतियों के पत्ते सूख जाते हैं पुन: उनका कोई उपयोग नहीं होता, उनका भी सेवन किया जा सकता है। साधु-साध्वियों के लिए एकेन्द्रिय से लेकर पञ्चेन्द्रिय तक के सभी जीवों की हिंसा त्याज्य होती है। न वे स्वयं हिंसा करते हैं, न करवाते हैं और न ही करने वाले का अनुमोदन करते हैं। वे गृहस्थ के घर से अचित्त आहार एवं अचित्त ही फल ग्रहण करते हैं। शाकाहार को सात्त्विक आहार माना गया है। शाकाहार सुपाच्य होता है, मांसाहार

दुष्पाच्य होता है। पशु-पक्षियों के रोगी होने पर उनका मांस रोगोत्पत्ति का भी कारण बनता है। अत: मांसाहार सर्वथा त्याज्य है। यह भी जीवदया का ही एक रूप है।

जिनके हृदय में सम्यक् दया होती है वे धन्य हैं, कृत पुण्य हैं। दया के प्रभाव से जीव अनेक गुणों का पात्र बनता है, जैसा कि आचार्य श्री उमेशमुनिजी ने कहा है-

धण्णा ते कयपुण्णा ते, जेसिं उरंसि सद्दया।
जीवो दयापभावेणं, होइ गुणाण भायणं।।

(मोक्खपुरिसत्थो, 7.60)

दया एक शुभ भाव है, जो क्लिष्ट चित्त वाले पापियों के हृदय में प्रकट नहीं होता है। पुण्यशालियों के चित्त में दया का भाव प्रकट होता है। दया के अनेक रूप होते हैं-द्रव्यदया, भावदया, स्वदया, परदया आदि। तत्त्व श्रद्धान एवं भावों के बिना जो देखादेखी अथवा कुल परम्परा से दया के कार्य किए जाते हैं वे द्रव्यदया के अन्तर्गत आते हैं। इस द्रव्यदया से भी अन्य प्राणियों की रक्षा होती है, अत: यह भी उपादेय है, किन्तु भावदया अधिक महत्त्वपूर्ण है। इसमें अनुकम्पाभाव का उद्रेक होता है। भावदया तो साधु-साध्वीजी भी कर सकते हैं, किन्तु गृहस्थ भावदयापूर्वक द्रव्यदया भी कर सकता है। द्रव्यदया क्रियात्मक दया है। भावदया से आत्मविशुद्धि होती है तथा द्रव्यदया से अन्य प्राणियों की रक्षा होती है, उनका पालन होता है, उनकी सेवा होती है। भावपूर्वक दया में उल्लास होता है, जो चित्त में विद्यमान संकुचित स्वार्थ का विनाश करता है तथा मैत्रीभाव का विकास करता है। साधु-साध्वी प्रवचन, उपदेश आदि के रूप में क्रियात्मक दया भी कर सकते हैं। अपने कृत दुष्कर्मों के दु:खद परिणामों को देखकर स्वयं पर दया करके पुन: उस प्रकार के दुष्कर्म न करना स्वदया है। अन्य प्राणियों पर दया करना परदया है। उस परदया में अनुकम्पा एवं करुणाभाव के साथ दूसरों के दु:ख के विनाश की भावना होती है।

जीवदया के अनेक लाभ हैं-1. जीवदया करने वाले के भावों की विशुद्धि होती है एवं पुण्य का अर्जन होता है। 2. जिस जीव पर दया की जाती है वह जीव भी लाभान्वित होता है। उसके प्राणों की रक्षा होती है। 3. उसकी शुभभावनाएँ वातावरण को पवित्र करती हैं तथा जीवदयाकर्त्ता तक भी वे भावनाएँ पहुँचती हैं, जिससे वातावरण में मैत्री का सन्देश प्रसारित होता है।

अहिंसा को धर्म स्वीकार किया गया है; जीवदया उसी का एक रूप है। कोई यह कहे कि क्रियात्मक जीवदया में भी हिंसा होती है, तो यह आक्षेप जीवदया के महत्त्व को कम नहीं कर सकता। प्रकृति में वायु एवं जल के सेवन का सभी प्राणियों को अधिकार है। भूमि पर रहने का तथा पेड़-पौधों से प्राप्त भोज्य पदार्थों के सेवन का भी सभी प्राणियों को अधिकार है, किन्तु इनका व्यर्थ विनाश करने का किसी को भी अधिकार नहीं है। 'परस्परोपग्रहो जीवानाम्' के सूत्र से सबका जीवन सञ्चालित होता है। एक-दूसरे के जीवन में सभी सहयोगी बनते हैं। साधु-साध्वी का जीवन अत्यन्त त्यागी-वैरागी होता है। वे इनका सेवन अचित्त होने पर तथा वायु के अतिरिक्त अन्य पदार्थों का सेवन एषणा समिति के नियमों से प्रदत्त होने पर किया जाता है।

जैन समाज जीवदया की दृष्टि से अनेक गतिविधियों में संलग्न है, यथा-(1) गोशालाओं का सञ्चालन तथा इनके सञ्चालन में सर्वविध सहयोग। (2) बकराशाला का सञ्चालन। इनको काटने से बचाने के लिए इन्हें अभयदान देकर कसाइयों को आर्थिक सहयोग। (3) पक्षी-चिकित्सालयों का सञ्चालन। (4) कबूतरों को चुग्गा की व्यवस्था। (5) अकाल, भूकम्प आदि प्राकृतिक आपदाओं के समय मनुष्यों सहित सभी प्राणियों को चारा-पानी आदि का सहयोग। (6) निर्धनों, विधवाओं, छात्रों एवं जरूरतमन्दों को सहयोग। इस प्रकार विविध गतिविधियों के माध्यम से जैन समाज जीवदया के कार्यों में संलग्न है।

जीवदया का भाव जीवन में ऊर्जा, उदारता, उल्लास, सहिष्णुता, संवेदनशीलता, सहानुभूति, मैत्रीभाव, सौहार्द आदि से मनुष्य को जीवन्त रखता है। उसको समस्त प्राणियों से मंगलमैत्री प्राप्त होती है। जीवदया भी धर्म का अंग है, जो प्रत्येक गृहस्थ के लिए दान, शील, तप एवं भावों के साथ सम्यग्दृष्टि रखकर आचरणीय है।

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 10
ISSN 2249-2011

अमृत-चिन्तन

आगम-वाणी

डॉ. धर्मचन्द जैन

जस्सऽत्थि मच्चुणा सक्खं, जस्स वाऽत्थि पलायणं।
जो जाणे न मरिस्सामि, सो हु कंखे सुए सिया।।
अज्जेव धम्मं पडिवज्जयामो, जहिं पवन्ना न पुणब्भवामो।
अणागयं नेव य अत्थि किंचि, सद्धाखमं णे विणइत्तु रागं।।

-उत्तराध्ययनसूत्र, अध्ययन 14, गाथा 27-28

अर्थ-जिसकी मृत्यु के साथ मैत्री है अथवा मृत्यु के आने पर जो दूर भाग सकता है या जो यह जानता है कि मैं कभी मरूँगा ही नहीं, वही आगामी कल का भरोसा कर सकता है।

हम आज ही राग को दूर करके हमारी श्रद्धा के योग्य मुनिधर्म को अङ्गीकार कर लें, जिसे प्राप्त कर लेने पर हमें पुन: जन्म नहीं लेगा पड़ेगा। कोई भी विषय-सुखभोग अनागत-अभुक्त नहीं है, क्योंकि इस संसार में सब प्राणियों को ये सब भोग अनन्त बार प्राप्त हो चुके हैं।

विवेचन-उत्तराध्ययनसूत्र के 14वें 'इषुकारीय' अध्ययन में भृगु राजपुरोहित के दोनों पुत्रों को वैराग्य जाग्रत हो जाता है तथा वे प्रव्रज्या अङ्गीकार करने के लिए माता-पिता से अनुमति चाहते हैं। तब परस्पर तर्क-वितर्क होते हैं। तर्क-वितर्क में पिता ने अन्त में कहा कि हम सब कुछ समय साथ रहकर सम्यक्त्व और व्रतों से युक्त होकर बाद में एक साथ प्रव्रज्या अङ्गीकार करेंगे। वैराग्य के गहरे रंग में रंगे हुए दोनों पुत्र पिता के इस प्रस्ताव को भी अस्वीकार करते हुए तर्क देते हैं कि जिसकी मृत्यु के साथ मित्रता है अथवा जो मृत्यु के आने पर उससे पलायन कर सकता है तथा जिसको यह ज्ञान हो गया कि वह नहीं मरेगा, वह ही कल के लिए प्रव्रज्या को टाल सकता है। यह एक ऐसा तर्क था जिसका भृगु पुरोहित के पास कोई प्रत्युत्तर नहीं था।

समय का जीवन में महत्त्व सर्वविदित है। किन्तु मानव को यह विदित नहीं है कि कब, कैसे और कहाँ वह मृत्यु का ग्रास बन जायेगा। इसलिये शुभ कार्य में विलम्ब करना उचित नहीं है। उस प्रकार के शुभभाव पुन: उत्पन्न हों या न हों इसका भी कोई भरोसा नहीं है, इसलिये इस जीवन में जब कोई शुभभाव प्रकट हो, तो उसका अविलम्ब उपयोग कर लेना चाहिए।

परिवार में दो ही पुत्र हैं। उन पुत्रों पर भृगु पुरोहित और उनकी पत्नी के जीवन की आशाएँ टिकी हुई हैं। इसलिये वे अपने पुत्रों से कहते हैं कि जिस प्रकार पंखहीन पक्षी की दशा होती है, सेना के बिना युद्ध क्षेत्र में राजा की स्थिति बनती है तथा नौका में धनरहित वणिक् की हालत होती है, वैसी ही हालत पुत्र के बिना माता-पिता की हो जायेगी।

भृगु पुरोहित का अपने दोनों पुत्रों के प्रति राग है, किन्तु दोनों पुत्र प्रबल तर्क के साथ कहते हैं कि यह जीवन अनित्य है और भोगों का परिणाम दु:ख है। वे धन की अपेक्षा धर्म की धुरा को अधिक महत्त्व देते हैं तथा गुणधारक श्रमण बनना चाहते हैं, क्योंकि मृत्यु का कोई भरोसा नहीं है कि वह किस क्षण आ धमके। उसके साथ मित्रता नहीं है कि मृत्यु को आने से रोक सकें और ऐसा भी सम्भव नहीं है कि मृत्यु के आने पर वे पलायन कर सकें। पुरोहित पुत्रों के ये कथन आज के आधुनिक चिकित्सकीय युग में भी उचित ही सिद्ध होते हैं।

वर्तमान में रोग नियन्त्रण, उसकी जाँच और चिकित्सा के अनेक साधन विकसित हो गये हैं। फिर भी बालवय, किशोरवय, युवावय, प्रौढ़वय, वृद्धवय आदि किसी भी वय में जीवन-लीला समाप्त होती देखी जा रही है। भगवान महावीर के समय बालक अतिमुक्तकुमार ने अपने माता-पिता से कहा-मैं जिसे जानता हूँ, उसे नहीं जानता हूँ। उसके कथन का अभिप्राय था कि मैं यह तो जानता हूँ कि मृत्यु होना निश्चित है, किन्तु यह नहीं जानता कि मृत्यु कब होगी।

मृत्यु का होना हर प्राणी के लिए निश्चित होते हुए भी उसके घटित होने का समय ज्ञात नहीं है। इसलिये प्रतिपल यह मानकर कि मृत्यु किसी भी क्षण अवश्यम्भावी है, अपने जीवन को सार्थक बना लेना चाहिए। जिसको ज्ञानी पुरुषों से मृत्यु का समय ज्ञात हो जाता है, वह यथासमय अपने जीवन को आमूल-चूल परिवर्तित कर सही दिशा में लगा सकता है।

इसलिए भृगु पुत्र कहते हैं कि कल का क्या भरोसा है, हम आज ही उस मुनिधर्म को स्वीकार करेंगे, जिसे प्राप्त कर संसार में पुनः जन्म ग्रहण न करना पड़े। हमारे लिए विषय-सुख का कोई भी भोग अप्राप्त नहीं रहा है। सब प्रकार के भोग पूर्व भवों में भोग चुके हैं। पूर्व भवों में भोगने का ज्ञान उन्हें जातिस्मरण ज्ञान से हो गया था।

इन गाथाओं से निम्नांकित सत्य उद्घाटित होते हैं-1. मृत्यु की किसी से मित्रता नहीं है। कोई उससे बच नहीं सकता है, इसलिये शुभ कार्य में विलम्ब नहीं करना चाहिए। 2. धर्म ही जीवन को सफल बनाने का साधन है। संसार के भोग त्याज्य हैं क्योंकि उनका परिणाम दु:ख है। 3. जन्म-मरण की निरन्तरता का अन्त सम्भव है। 4. भोगों के कारण जन्म-मरण की शृङ्खला जारी रहती है। 5. संसार एवं भोगों के प्रति राग त्याज्य है। 6. धर्म पर श्रद्धा करणीय है जो एक प्रकार से सम्यग्दर्शन है। 7. पापकार्य में भले ही विलम्ब हो, किन्तु धर्मकार्य में विलम्ब नहीं करना चाहिए।

मरणोपरान्त गजेन्द्रनिधि ट्रस्टी बनने का विशिष्ट उदाहरण

श्री महेन्द्र कुम्भट

वीर भ्राता, दृढ़धर्मी, सन्तसेवी, संघनिष्ठ श्रावकरत्न श्री मानमलजी सुराणा, अयनावरम्-चेन्नई का 5 फरवरी, 2022 को स्वर्गगमन हो गया था। तब तक गजेन्द्रनिधि को उनकी 5 लाख की राशि प्राप्त हुई थी। उनकी सुपुत्री श्रीमती हेमलताजी धर्मसहायिका श्री धर्मचन्दजी छल्लाणी ने संघ को शेष 6 लाख रुपये की राशि जमा कराकर एक आदर्श उपस्थित किया है। साथ ही वे स्वयं भी गजेन्द्रनिधि की ट्रस्टी बनी हैं। श्री मानमलजी सुराणा की गुरु हस्ती-हीरा-महेन्द्र के प्रति अनन्य भक्ति एवं श्रद्धा रही। आपश्री के दो भ्राता एवं दो बहिनें हैं। बड़े भ्राता रत्नसंघ में श्रद्धेय श्री बलभद्रमुनिजी म.सा. के नाम से दीक्षित थे। दूसरे बड़े भ्राता श्री इन्द्रचन्दजी सुराणा अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, तमिलनाडु सम्भाग के क्षेत्रीय प्रधान हैं। आपश्री की दो बहिनें श्रीमती कंचनदेवी-श्री खेमचन्दजी कांकरिया, श्रीमती तारादेवीजी-श्री रिखबचन्दजी बागमार भी धार्मिक क्षेत्र में अग्रणी हैं। आप रत्नसंघीय महासती श्री मुदितप्रभाजी म.सा. के सांसारिक मामाजी थे।

आपकी धर्मसहायिका श्रीमती कमलाबाईजी सुराणा का वर्ष 2008 तक साथ मिला। उसके पश्चात् आप आचार्यश्री की सेवा में डेढ़ वर्ष मुमुक्षु भी रहे तथा स्वाध्यायी के रूप में सेवाएँ प्रदान की।

आपने बजरिया-सवाईमाधोपुर में स्वाध्याय भवन के निर्माण में भी मुक्तहस्त से उदारता के साथ अर्थसहयोग प्रदान किया। आप रत्नसंघ स्वाध्याय भवन, चेन्नई के विशिष्ट ट्रस्टी थे। आपकी तीन दौहित्रियाँ तमन्ना, गुञ्जन एवं सुदर्शना भी धर्मनिष्ठ हैं। आपकी सुपुत्री भी पिताश्री के पदचिह्नों का अनुसरण करते हुए संघ एवं गुरु के प्रति निष्ठावान है एवं संघसेवा में संलग्न है।

-कोषाध्यक्ष

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

अहंकारी से समाधि कोसों दूर होती है, वह स्वयं अपने अहंकार के कारण असमाधि में रहता है और संघ में भी असमाधि फैलाता है। **-आचार्यश्री हीरा**

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 12
ISSN 2249-2011

विचार-वारिधि

जीवन-निर्माण के सूत्र

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा.

- अपशब्द के प्रत्युत्तर में निरुत्तर रहना, अपशब्द बोलने वाले को हराने की सर्वोत्तम कला है। काँटे का जवाब फूल से देना सज्जनाचार है।
- जिस धन और साधन से जीवन सुधरे, वास्तव में वही धन और साधन उत्तम है।
- चाहे साधुधर्म हो या गृहस्थधर्म, सम्यग्दर्शन की दृढ़ भूमिका, दोनों के लिए अत्यावश्यक है।
- पाप और दु:ख इन दोनों में कारण-कार्य भाव है।
- स्वार्थ की भावना से व्रत करना, व्रत के महत्त्व को कम करना है।
- सम्यग्दर्शनी दिखावे से आकर्षित नहीं होता, क्योंकि दिखावे की ओर झुकने वाला ठगा जाता है।
- भीतर का मूल्य जहाँ अधिक होगा, वहाँ बाह्य दिखावा कम होगा। काँसे की थाली के गिरने पर अधिक आवाज होती है वैसी सोने की थाली के गिरने पर नहीं होती। मूल्य सोने की थाली का अधिक है, अत: उसमें आवाज़ कम है।
- परिग्रह आत्मा को पकड़ने वाला है, जकड़ने वाला है, यह दु:ख और बन्ध का प्रधान कारण है।
- जिनशासन त्यागियों का शासन है, रागियों का नहीं।
- यदि मूर्च्छाभाव है तो शरीर भी परिग्रह है और वस्त्रादि भी।
- अपनी सम्पदा का उपयोग करना सीखेंगे तो आपका परिग्रह अधिकरण बनने के बजाय उपकरण बन जायेगा।
- परिग्रह का सम्बन्ध जितना चीजों से, वस्तुओं से नहीं है, उतना उनकी ममता से है।
- परिग्रह एवं बन्धन की गाँठ को ढीली करोगे तो बाहर की सामग्रियाँ तुम्हारे पास रहकर भी दु:खदायी नहीं बनेंगी।
- धन के लिए नीति-अनीति को भूलना, यह जैन का लक्षण नहीं है।
- सच्चा जैन लक्ष्मी-दास नहीं, अपितु लक्ष्मी-पति होता है।
- धन कदापि तारने वाला नहीं, केवल धर्म ही तारने वाला है।
- जो व्यक्ति जितना अधिक संयम से रहेगा, वह उतना ही अधिक सुखी और सब तरह से स्वस्थ रहेगा।
- संयम सब प्रकार के दु:खों के मूल कारण पाप से बचाने वाला और अन्ततोगत्वा अक्षय सुख का दाता है।
- चारित्र-धर्म का पहला चरण है-तन और वाणी का संयम।
- तन, मन, वाणी भोगोपभोगादि और विषय-कषायों का संयम; धर्म का प्रमुख अंग है।
- जीवन में यदि धर्म और चारित्र नहीं है, तो जीवन फीका है।
- मुनियों के सौम्य जीवन और त्यागमय चर्या का चिन्तन करके भी व्यक्ति ज्ञान की प्राप्ति कर लेता है।
- भूमि, भवन, जायदाद आदि से अधिक ध्यान आपका ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप पर होना चाहिए, क्योंकि ये आपके निज-गुण हैं।
- जब तक हमारा सम्यग्ज्ञान मजबूत रहेगा, तब तक हम कभी नहीं डिगेंगे।

-'अमृत-वाक्' पुस्तक से गृहीत

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 13
ISSN 2249-2011

प्रवचन

हिंसा का परिणाम दुःख है और अहिंसा का सुख

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. द्वारा महावीर भवन, लाखन कोटड़ी, अजमेर में फरमाये गए इस प्रवचन का आशुलेखन श्री धर्मपालजी मेहता द्वारा एवं सम्पादन डॉ. दिलीपजी धींग द्वारा किया गया है।

-सम्पादक

संसार के समस्त दुःखों का अन्त करके अनन्त अव्याबाध सुख को प्राप्त करने वाले तीर्थंकर भगवान एवं कर्मबन्ध के हेतुओं को छोड़कर साधना में चरण बढ़ाने वाले गुरु भगवन्तों के चरणों में कोटि-कोटि वन्दन!

तीर्थंकर भगवान महावीर की आदेय, अनुपम वाणी आगम स्थानाङ्गसूत्र के माध्यम से संग्रहनय की अपेक्षा तत्त्वों का स्वरूप एक सूत्र में प्रदान कर रही है। कल एक सूत्र रखा गया था-'एगे पाणाइवाए' अर्थात् प्राणों का अतिपात करना, जीवों को दुःख देना, पीड़ा पहुँचाना अथवा उन्हें जीने योग्य प्राणों से अलग कर देना प्राणातिपात है। यह पाप का मूल है। नीचे गिराने वाला है। सुख को समाप्त करने वाला है। दुःख और द्वन्द्व को बढ़ाने वाला है। जीवन की सरिता के प्रवाह को अवरुद्ध करने वाला है। प्राणातिपात सबसे बड़ा पाप है। संसार के दुःखों को देखकर मन-मस्तिष्क में अनेक प्रश्न कौंधते हैं। सामान्य-सी वेदना का प्रतिकार करने वाले लोग दूसरों को दुःख देने पर, दूसरों के प्राण-हरण करने हेतु तत्पर क्यों हो जाते हैं? झूठ का पाप विश्वास समाप्त करता है, चोरी का पाप अपनों को पराया बनाता है, क्रोध प्रीति का नाश करता है और अहंकार नम्रता को समाप्त करता है। इन सब बातों को जानते हुए भी व्यक्ति इनमें क्यों प्रवृत्त होता है? दया और क्रूरता के सम्बन्ध में भी यही बात है।

जीवदया की बड़ी महिमा है। एक-एक जीव की दया करने वाला जमीन से उठता है और महल तक पहुँच जाता है। महल में रहने वाला एक दया के कारण विमान (स्वर्ग) में पहुँच जाता है। विमानवासी (देव) इस दया की आराधना करने वाले की अनुमोदना करने मात्र से मनुष्य भव में आकर जन्म-मरण के बन्धन काट जाता है। घास-फूस खाने वाला, जंगल में रहकर जीवन बिताने वाला, अपनी मस्ती में मस्त रहने वाला गजराज भी मात्र एक खरगोश जीव की दया के कारण महाराजा श्रेणिक के महलों में पहुँच जाता है।

हाथी के भव में रहने वाला मेरुप्रभ पूर्व जन्म के ज्ञान के कारण जब दावानल लगता है, तब उसे ऐसा दिखता है कि ऐसी आग उसने कहीं देखी है। कई बार आदमी का चिन्तन चलता है कि ऐसा झूठ बोलने वाला मैंने देखा है। ऐसे चोरी करने वाले मैंने देखे हैं जो जेल में जाते हैं। वे जिन्दगीभर पराधीन रहकर न जाने कितनी वेदनाएँ, दुःख एवं पीड़ाएँ भोगते हैं। हम सब ऐसी स्थितियाँ देखते हैं, लेकिन देखकर चिन्तन नहीं करते हैं। यदि चिन्तन चलता तो वह पाप का मार्ग छूट जाता, परन्तु छूटा क्यों नहीं? क्योंकि चिन्तन-मनन नहीं किया।

तो आग देखकर मेरुप्रभ का चिन्तन चल रहा है। सर्वस्व स्वाहा करने वाली वह आग त्रस जीवों को और हाथी को विचलित करती है। हाथी सोचता है, प्रत्येक प्राणी को नष्ट करने वाली ऐसी आग मैंने कहीं देखी है। ऐसा चिन्तन करते-करते उसे जातिस्मरण ज्ञान हो गया। वह पूर्व भव का हाल देखने लगा। उसने अपने परिवार का रक्षण और सबका जीवन बचाने के लिए हितकारी उपाय किया।

उसने एक माँडला तैयार किया। उस माँडले में आग लगने के जितने भी कारण थे, यथा-सूखी

लकड़ियाँ, घास-फूस आदि हटा दिये। सफाई करने में हाथी ही नहीं लगा, परन्तु उसका सारा परिवार भी लगा। जिसके जो देखने में आया, उसे हटाया और उस माँडले को ईंधन से रहित कर दिया गया। आग कब बढ़ती है, जब उसे ईंधन मिलता है। इसी प्रकार इच्छाओं के सहारे पाप बढ़ते हैं। यदि इच्छाओं पर विराम लग जाए तो पापों से किनारा हो जाएगा।

जब सारा ईंधन हटा दिया गया तब उस माँडले में जंगल के सभी प्राणी शरण लेने लगे। मेरुप्रभ और उसके परिवार ने मेहनत की और इसलिये अनेक जीव माँडले में आराम पाने लगे। जंगल में रहने वाले चीते, हिरण, खरगोश आदि हर एक प्राणी दौड़-दौड़कर वहाँ माँडले में पहुँचते हैं। जैसे आप अधर्म से बचने के लिए धर्मस्थान पर आ रहे हैं, वैसे ही जंगल के जीव आग से बचने के लिए माँडले में आ रहे हैं। तभी एक खरगोश भी वहाँ पहुँचा। जगह नहीं मिलने के कारण वह कभी शेर पर, कभी चीते पर तो कभी हाथी पर, अनेक प्राणियों के ऊपर घूमता-घूमता जगह ढूँढ़ रहा है। उसी समय अचानक मेरुप्रभ हाथी के पैर में खुजली आई और उसके पैर ऊपर उठाने से रिक्त हुए स्थान पर उस खरगोश ने शरण ले ली। खरगोश के बैठ जाने से अनुकम्पावश हाथी ने अपना पैर नीचे नहीं रखा। अनुकम्पा और दया के साथ अढ़ाई दिन तक अपना पैर ऊपर ही रखा। आग के शान्त होने पर खरगोश पैर के नीचे से चला गया। इतने समय की पीड़ा के बाद हाथी ने जैसे ही अपना पैर नीचे रखा, अकड़न के कारण गिर पड़ा और काल कवलित हो गया। वही हाथी महाराजा श्रेणिक के यहाँ राजकुमार के रूप में जन्म लेता है। तो भाई, यह है दया की महिमा। न जाने कितने ऐसे दृष्टान्त हैं, शास्त्र भरे पड़े हैं। जीवमात्र के लिए दया होनी चाहिए। जीवों पर दया करने वालों का जीवन धन्य है। किसी कवि ने कहा है-

दया से दुःख दरिद्र जावे, अचिन्त्य कमला घर आवे।
सुयश कीरति दह दिशि छावे, इन्द्र अहमिन्द्र पद पावे।।

कवि ने कहा कि दया से दुःख-दरिद्रता जाती है, अचिन्त्य लक्ष्मी घर में आती है, चहुँ ओर कीर्ति बढ़ती है और उच्च देवपद मिलता है। इसी प्रकार एक अन्य कवि ने दया की महिमा में दोहा बनाया-

अष्ट-सिद्धि नवनिधि मिले, बिना उपाय सुख भोग।
टले विघ्न बिना जतन ही, सफल होय उद्योग।।

दया पालन करने से, अनुकम्पा करने से आठ सिद्धियाँ और नव निधियाँ तक मिल सकती हैं। विघ्न बिना उपाय के ही टल जाते हैं तथा सभी कार्य सफल होते हैं। इसलिए प्रबुद्धजनों को दया पालनी चाहिए-

दया पालो बुध जन प्राणी, स्वर्ग-अपवर्ग सौख्यदानी।
बात यह गुरु मुख से जानी, दया पालो बुधजन प्राणी।।

तिर्यञ्चों को अनेक पीड़ाएँ होती हैं। वे परवशता से भी दुःखी रहते हैं। लेकिन एक जीव की दया ने एक तिर्यञ्च को राजा श्रेणिक के घर पहुँचा दिया। कहिये, किसने? दया ने। तो दया से इतना मिलता है।

हिंसा के दो प्रकार बताये गये हैं, एक प्रयोजनकारी हिंसा और दूसरी निष्प्रयोजन हिंसा। प्रयोजनकारी हिंसा में लाचारी, परतन्त्रता और परिस्थिति है। इसके बगैर जीवन चलने वाला नहीं है। लेकिन कितने ही लोग अपने मिथ्या-अहंकार, अपनी नामवरी और झूठी प्रतिष्ठा के लिए अनर्थ की हिंसा कर रहे हैं। कमरे को सजाने के लिए शेर, चीते और अन्य जानवरों के चमड़े लगे हुए हैं। न जाने आज कितने-कितने नये-नये आविष्कारों के माध्यम से नये-नये रूपों में हिंसाएँ हो रही हैं और बढ़ रही हैं। ऐसी हिंसा को आप देख रहे हैं। देख ही नहीं रहे हैं, परन्तु आप स्वयं उसमें भागीदार भी बन रहे हैं।

किसी समय सेठ साहब कसीदे की थैली रखते थे। सब जगह उसे ले जाते थे। अब सेठ के पास भी चमड़े की थैली हो गई है। धन बढ़ा, प्रतिष्ठा बढ़ी अथवा मिथ्या कामनाएँ बढ़ीं? धन से अहंकार बढ़ा तो सादगी में जीवन बिताने की बजाय लोगों ने हिंसा का कार्य करना चालू कर दिया। प्राणियों को जीते-जी उबालकर और चमड़ी उतारकर चीजें बनाई जा रही हैं। चमड़े के

जूते, बेल्ट आदि पहनने में भी आदमी अपनी शान मानने लगा है। अपना जीवन, जीवन है और दूसरों के जीवन से खिलवाड़। कितना अन्याय है यह?

आप जिस खानदान और कुल में जन्मे हैं, वहाँ खान-पान के व्यवहार का पालन निर्दोष होना चाहिए। कभी ढड्ढा की हवेली में जाने का काम पड़ा तो वहाँ प्राचीन काल के कुछ चित्र लगे हुए देखे। वही शेरवानी, वही दुपट्टा, वही लम्बी दाढ़ी, भेष भी वही। क्या वे लोग प्रतिष्ठा का जीवन नहीं जीते थे? क्या वे अपना जीवन नगर सेठ की तरह रुतबे से नहीं चलाते थे? वे लोग हिंसा से प्राप्त चीजों के बगैर अपना रुतबा रखते थे। लेकिन आजकल अनर्थकारी हिंसाएँ बहुत बढ़ रही हैं। ऐसी हिंसा से बचने के लिए ही व्रत की बात की जा रही है। लाखों वर्षों की उम्र वालों का जीवन भी चला गया तो आपका जीवन कितना है? यह तो सैकड़ों वर्षों का भी नहीं है। यह भी चला जाएगा। फिर इस अल्पकाल में भी प्राणियों की अनर्थ हिंसा की जा रही है। उनके जीवन को समाप्त किया जा रहा है। उनके प्राणों के साथ खिलवाड़ किया जा रहा है। हिंसा के परिणामस्वरूप जब दु:ख आयेंगे तब भगवान याद आ जायेंगे।

कभी विहार में साथ चलने वाली बहिनों की जेब में रुपये रहते थे अथवा कपड़ों का बेग रहता था। मैं अचम्भा करता हूँ कि वे आज चमड़े का मनीबेग हाथ में लटकाए हुए हैं। कभी अपनी रकम की हिफ़ाजत के लिए उसे नोलिया में बन्द करके भीतर की जेब में रखा जाता था, लेकिन आज लड़कियाँ आधे-अधूरे कपड़ों को पहनकर हाथ में चमड़े का बेग लिये जा रही हैं। कहीं कुछ हो जाता है तो पुलिस की शरण में जाते हैं और शिकायत करते हैं कि बेग चोरी हो गया। तो भाई, रकम बाहर दिखाने को रखी ही क्यों थी? तो मैं कह रहा था कि अनर्थ के पापों से बचें।

लोग मनोरञ्जन के लिए पशु-पक्षियों को लड़ाते हैं। बैल लड़ाए जा रहे हैं, मुर्गे लड़ाए जा रहे हैं, मेंढे लड़ाये जा रहे हैं। पहले कभी चोर को दण्डित किया जाता था तो उसे शेर के पिंजड़े में डालकर या हाथी से कुचलवाकर क्रूर खेल किये जाते थे। यह सब सुनकर ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं तो देखने वालों के मन में क्या विचार आते होंगे? यह सब हिंसा की अनुमोदना और अनर्थदण्ड है। चार आदमी ताश खेल रहे हैं और आप उनके पास खड़े हैं। आपके मन में आयेगा कि मैं भी खेलूँ। मैंने एक ऐसा व्यक्ति देखा है, जो वालीबॉल खेल रहा था। खेलते हुए उसकी हड्डी क्रेक हो गई। फिर भी वह खेलता रहा, पॉइंट बनाता रहा। बाहर लाये जाने पर भी उसने मैदान के बाहर से गेंद के ठोकर लगाई। ये सब देखते हुए आपके मन में क्या आयेगा? जोश आयेगा कि सामने वाला लहूलुहान हो रहा है। सामने वाला अपनी जान की बाजी लगा रहा है। परन्तु देखने वाले देख रहे हैं, मन बहला रहे हैं तो यह पाप की श्रेणि में आता है। ऐसी घटनाओं को शास्त्रकारों ने अनर्थदण्ड कहा है।

कितने लोग अनर्थदण्ड को जानकर भी इसे नहीं रोक रहे हैं। इसीलिए भेड़-बकरियों को बेरोकटोक गाड़ियों में भरकर ले जाया जा रहा है। क्या ऐसा दृश्य देखकर आपके मन में व्रत-नियम का विचार आता है? क्या आपको लगेगा कि हमारे ये क्षण बेकार जा रहे हैं? मानव भव का एक-एक क्षण लाखीणा है, अनमोल है। कितने ही व्यक्ति केवल दिखावे के रूप में अपना जीवन बिता रहे हैं, परन्तु इस दिखावे से कुछ लाभ होने वाला नहीं है।

आचार्य भगवन्त (पूज्य श्री हस्तीमलजी म.सा.) ने एक व्यक्ति से कहा-''काम सम्भलकर करना। काम करना आवश्यक है, लेकिन उसे ध्यानपूर्वक करना है। एक काम जीवन चलाने का है और दूसरा जीवन बनाने का। बनाने के लिए भी चलाने को गौण नहीं किया जा सकता है। जीवन में खाने-पीने की, मकान की जरूरत रहती है। जीवन के लिए अनिवार्य हिंसा करनी पड़ती है, लेकिन अनर्थकारी हिंसा से तो पूर्णतया बचा जा सकता है, बचा जाना चाहिए।''

पहले खेल होने पर उसका प्रसारण रेडियो पर

आँखों देखा सुनाया जाता था। मैंने सुना कि बाबू साहब साइकिल पर जा रहे हैं और कॉमेण्ट्री सुन रहे हैं और इधर-उधर ध्यान गया कि अचानक एक्सीडेंट हो जाता है। कहिये क्या मिला? कुछ नहीं मिला। प्रमाद और लापरवाही से भी अनर्थ हो जाता है। इसलिए कहा जाता है-

खण निकम्मो रहणो नहीं, करनो आतम काम।
भणनो, गुणनो, सीखणो, रमणो ज्ञान आराम।।

ज्ञान के बगीचे में स्वाध्याय के माध्यम से, सत्संग के माध्यम से, मन में दया-दान के भाव उपजाने चाहिए, जिससे जीवन ऊँचा उठे। परन्तु आजकल आदमी के जीने का तरीका बदल गया है। आदमी मन के वश में हो गया है। मन की मनमानी से अनेक अनर्थ हो रहे हैं। आदमी की दृष्टि केवल खाने-कमाने में ही लग रही है। लेकिन आदमी को धर्माचरण के लिए भी समय निकालना चाहिए। दया को धर्म का मूल बताया गया है। यह दया-धर्म तिराने वाला है, ऊँचा उठाने वाला है और यही सारे कष्ट मिटाता है। गृहस्थ जीवन में रहते हुए हिंसा का पूर्ण रूप से त्याग सम्भव नहीं हो पाता है, लेकिन अनर्थकारी हिंसा से पूरी तरह बचना सम्भव है।

किसी भी प्रवृत्ति में लोभ आ जाए, अहंकार आ जाए, प्रतिष्ठा का खयाल आ जाए कि मैंने कितनी अच्छी चीज़ बनाई है तो कर्मबन्ध होते हैं। काचरा छीलने-काटने में भी अहंकार जुड़ जाए तो अनर्थकारी हिंसा हो जाती है। रसोई के काम-काज करते हुए हमारी बहिनें सब्जी को तराशकर एवं बनाकर प्रसन्न होती हैं और यह कहेंगी कि आप खाकर तो देखो। स्वाद के चक्कर में कहीं अंगुली नहीं चबा बैठे तो कहना। इस प्रकार के अहंकार से कर्मबन्ध होता है। जितने कषाय, उतनी पीड़ा और दुःख हैं। चिकित्सक यदि शरीर के उपयुक्त स्थान पर ऑपरेशन नहीं करे तो उसका उल्टा परिणाम होगा। इसलिए प्रयोजन में सीमा कीजिये और बिना प्रयोजन के अनर्थदण्ड मत कीजिए।

अनर्थदण्ड जीवों के साथ खिलवाड़ है। दुःख देने वाले के कष्ट बढ़ जाते हैं। आप इस झूठी प्रतिष्ठा के लिए अनर्थदण्ड करते जा रहे हैं तो उसका भी परिणाम आएगा। इसलिए सच्चा ज्ञानी वही है, जो ज्ञान को जीवन में उतारे। आपका मन हिंसा से बचकर अहिंसा के पावन पथ पर चलेगा और व्रतों को ग्रहण करेगा तो अपनी आत्मा के लिए और दूसरों को साता उपजाने की अपेक्षा श्रेयस्कर होगा। दूसरों को शान्ति देने की दृष्टि से, परिवार में एक आदर्श उपस्थित करने के रूप में यह धर्म आपको परम्परागत सुख देने वाला बनेगा। जो इसका पालन करेगा वह अक्षय सुख पाएगा। ■

मैं साधु हूँ

श्रीमती रेणु जैन 'साक्षी'

पीछे छोड़ा संसार को
संयम को अपनाया मैंने,
बनकर साधु इस जीवन में
ज्ञान का दीप जलाया मैंने।
गुण हैं मेरे पूरे सत्ताईस
महाव्रतों को पालूँ मैं,
छह काय की रक्षा करूँ
और कुव्यसनों को त्यागूँ मैं।
आठ मदों को छोड़कर ब्रह्मचर्य को पालूँ मैं,
बारह भेदे तप करूँ और
पाप अठारह त्यागूँ मैं।
नंगे पैर चलूँ सदा केशों का लोच करूँ मैं,
घर-घर में करूँ गोचरी
दोष बयालीस टालूँ मैं।
सचित्त का करूँ नहीं भोग कदा
निर्दोष संयम पालूँ सदा,
जो भी आए शरण में मेरे
टालूँ उसकी सारी विपदा।

-द्वारा श्री कन्हैयालालजी जैन, आजाद नगर, भीलवाड़ा (राजस्थान)

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 17
ISSN 2249-2011

प्रवचन

श्रद्धामय आचरण आत्मोन्नति का साधन

भावी आचार्य श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.

भावी आचार्य, महान् अध्यवसायी, सरस व्याख्यानी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. द्वारा 30 मई, 2022 को सामायिक-स्वाध्याय भवन, शक्तिनगर-जोधपुर में फरमाए गए इस प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सह सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर ने किया है। -सम्पादक

बन्धुओं!

अनुभवियों के अनुभूत वचनों में एक वचन है- जैसा दिया है वैसा ही प्राप्त होता है। आज आपको सुख-सुविधाएँ, धन-वैभव, उत्तम स्वास्थ्य, अनुकूल परिवाजन और यश-कीर्ति आदि जो भी प्राप्त हैं, उसके मूल कारण में जायें तो जैसा जिस भावना से आपने पूर्व में दिया है, वैसा ही आज आपको मिला है। जैसा आप आज देंगे, वैसा ही आपको आने वाले भविष्य में मिलेगा।

सुख का सच्चा मार्ग बताने वाले आगमों में एक सुखविपाकसूत्र भी हैं, जिसके प्रथम अध्ययन में सुबाहुकुमार का वर्णन चलता है। परम पुण्य के उदय से सुबाहुकुमार का जन्म राज-परिवार में हुआ। साथ ही भगवान महावीर के समागम का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ। सुबाहुकुमार प्रभु महावीर के पास धर्मदेशना सुनने एवं वन्दन करने के लिए उपस्थित होता है। वह धर्मदेशना सुनकर बारह व्रतों को अङ्गीकार कर गृहस्थ धर्म अपनाता है। सुबाहुकुमार के रूप-सौन्दर्य-आभा को देखकर स्वयं गणधर गौतमस्वामी ने प्रभु के समक्ष जिज्ञासा रखी-''प्रभो! सुबाहु ने पूर्व में **'किं वा दच्चा, किं वा भोच्चा, किं वा समायरित्ता'** ऐसा क्या दिया, क्या खाया, क्या धर्म का समाचरण किया, जिससे इस प्रकार का इष्ट, कान्त, प्रिय, मनोज्ञ, सौम्य, सुभग, प्रियदर्शन और सुन्दर रूप प्राप्त किया? प्रभु के द्वारा दिया हुआ समाधान आप सभी को ध्यान में ही है कि सुबाहुकुमार ने सुमुख गाथापति के भव में सुदत्त अनगार को मासखमण के पारणे में अहोभाव से निर्दोष आहार दान किया था, जिसका परिणाम ही इस भव में दृष्टिगोचर हो रहा है।

सुबाहुकुमार के द्वारा बहराये गये निर्दोष आहार से सुपात्रदान की विधि भी बताई गई है। सुबाहुकुमार पूर्वभव में सुमुख गाथापति के रूप में सुदत्त अनगार को आते हुए देखकर अत्यन्त प्रसन्न एवं हर्षित होता है। अपनी पादुकाओं को छोड़कर उत्तरासङ्ग धारण करता है। तत्पश्चात् सुदत्त अनगार के सम्मान में सात-आठ क़दम सामने जाता है। तीन बार वन्दन-नमस्कार करता है। फिर अपने साथ अपनी भोजन शाला में लाकर भक्तिभाव से विपुल अशन-पान आदि बहराता है। वह आहार दान देने से पहले, देते समय एवं देने के बाद भी प्रसन्न होता है। इस सुपात्रदान के प्रभाव से ही वह इस भव में सौन्दर्यशाली सुबाहुकुमार बना। सुमुख गाथापति के भव में दिया गया सुपात्रदान फलदायी हो गया। लेकिन ध्यान रखना सुपात्रदान भी सम्यक् विधि से ही करना, जैसा कि सुमुख गाथापति ने किया। आप गृहस्थ धर्म का पालन कर रहे हैं, आपको सुपात्रदान की विधि भी यहाँ बताई गयी है।

सुबाहुकुमार का जीवन मात्र बाह्य सौन्दर्य से ही सम्पन्न नहीं था, अपितु आध्यात्मिक सौन्दर्य से भी परिपूर्ण था। उसका हृदय धर्मश्रद्धा, धर्मरुचि और धर्मप्रतीति से आप्लावित था। सुबाहुकुमार का जीवन चरित्र आपने अनेक बार सुना है। आपसे प्रश्न पूछता हूँ कि श्रद्धा, रुचि और प्रतीति क्या है? आप सभी शान्त बैठे हैं, किसी का भी जवाब नहीं आ रहा है। हमें आगम पढ़ने की तथा अनुप्रेक्षा करने की आवश्यकता है।

आगम-ज्ञान के बिना जीवन-निर्माण सम्भव नहीं है। कोई बात नहीं, मैं ही बताता हूँ। श्रद्धा का मतलब है- जिनवचनों पर नि:शंक भावों से दृढ़-विश्वास करना। श्रद्धा हो जाने पर रुचि होती है अर्थात् प्रभु वचनों में जो रहस्य रहा हुआ है, उसे जानने की, खोजने की, समझने की जिज्ञासा होती है तथा उल्लास होता है।

जिज्ञासु व्यक्ति ही अध्यात्म-मार्ग पर अग्रसर होता है। आज लोग सन्तों के पास जिज्ञासा लेकर तो आते हैं, लेकिन संसार सम्बन्धी। अरे भाई! संयमी के पास सांसारिक जिज्ञासाओं का क्या अभिप्राय? संयमियों के पास तो आत्म-उत्थान की, आत्म-कल्याण की, जीवन-निर्माण की, तात्त्विक जिज्ञासाएँ रखनी चाहिए। जिससे सन्तों के शुभ अध्यवसायों में भी वृद्धि हो और हमें भी जीवन-निर्माण के सूत्र प्राप्त हों। रुचि होने पर प्रतीति होती है। प्रतीति अर्थात् प्रभु वचनों पर विश्वास होता है और फिर उसके अनुसार आचरण होता है। परन्तु आजकल तो उल्टी ही गंगा बह रही है, प्रभु वचनों के अनुरूप आचरण तो दूर रहा, प्रभु के वचनों की जानकारी का भी अभाव ही नज़र आता है। प्रभु वचनों को जानकर, सुनकर जीवन में उतारेंगे तो जीवन में प्रतीति एवं आचरण साकार हो पायेंगे।

आप नित्य प्रति जिनवाणी श्रवण करते हैं। जोधपुर को तो धर्मनगरी का गौरव प्राप्त हुआ है, यहाँ सन्त-मुनिराजों अथवा महासतियाँजी का सुयोग मिलता रहता है। क्या हमारे जीवन में भी श्रद्धा-रुचि-प्रतीति है। प्रतीति होने पर व्यक्ति व्रत-महाव्रत ग्रहण करने में देरी नहीं करता, लेकिन आपसे पूछूँ कि इस सभा में बारह व्रतधारी श्रावक कितने हैं? आज तो स्थिति यह है कि 12 व्रतों के नाम भी पूछ लिये जायें तो अनेक व्यक्ति नाम भी नहीं बता पाते हैं, क्योंकि हमारी ज्ञान-प्राप्ति की भावना कम हो रही है, ज्ञान का स्तर घट रहा है।

भगवान महावीर के प्रथम शिष्य गौतम गणधर चौदह हजार साधुओं के मुखिया थे। मति, श्रुत, अवधि और मन:पर्यव ज्ञान के धारक थे, फिर भी उनकी सरलता, गुरुवचनों पर विश्वास देखिए कि छोटी-से-छोटी जिज्ञासाएँ भी प्रभु चरणों में रखते थे। गौतम स्वामी ने भगवान से छोटे-छोटे एवं सरल प्रश्न क्यों पूछे? इसका समाधान करते हुए अभयदेवसूरि ने कहा कि गौतम स्वामी अपनी जिज्ञासा तृप्ति, अज्ञान निवृत्ति एवं मन की प्रसन्नता के लिए ही प्रश्न नहीं पूछते थे, बल्कि सामान्य जनों को भी भगवान की वाणी पर श्रद्धा हो, वे भी प्रतिबोध प्राप्त करें, इसलिये वे ऐसे सरल प्रश्न पूछते थे। वे प्रश्नों के पूछने के पाँच कारण बताते हैं-1. गौतम स्वामी स्वयं केवलज्ञानी नहीं थे, प्रभु द्वारा प्रश्नों के समाधान पर केवलज्ञानी भगवान की मोहर लग जाती है, इसलिए वे प्रश्न पूछते थे। 2. स्वयं जानते हुए भी पूर्ण स्पष्टता के लिए वे भगवान से सरल प्रश्न भी पूछ लेते थे। 3. अन्य अज्ञजनों को प्रतिबोध प्राप्त हो, इस हेतु सामान्य प्रश्न भी पूछते थे। 4. शिष्यों को अपने वचन में विश्वास पैदा हो कि मैंने जो कहा है वह सर्वज्ञ भगवान द्वारा सुना हुआ ही कहा है। 5. शास्त्र रचना की यही विशेष प्रश्नोत्तर शैली होने के कारण भी वे प्रश्न पूछते थे।

देखिए ज्ञानवान तिरे या नहीं तिरे, पर जिन्हें ज्ञान के साथ गुरु के वचनों पर दृढ़-श्रद्धा है वह जरूर तिरेगा।

श्रद्धावान भक्त ही मोक्ष-मार्ग में पुरुषार्थ कर सकता है। पुरुषार्थ करने वाले के लिए सबकुछ आसान हो जाता है। आपने गुरु-शिष्य का वह दृष्टान्त अनेक बार सुना होगा कि गुरु अपने मन्दमति शिष्य को अल्प शब्दों में बड़ी महत्त्वपूर्ण शिक्षा देते हैं। गुरु कहते हैं कि शिष्य तुम इतना-सा याद कर लो 'मा रुष, मा तुष' अर्थात् किसी के द्वारा अपशब्द कहने पर रोष मत करना और प्रशंसा करने पर प्रसन्न भी मत होना। इस छोटी-सी शिक्षा में मात्र चार शब्द हैं, इसे याद करना भारी नहीं है, पर इसके हार्द का व्यवहार में आचरण करना कठिन है। शिष्य मन्दमति जरूर था, परन्तु श्रद्धावान और मुमुक्षु था। इन चार शब्दों को रटते-रटते शब्दों को भूल गया और 'मासतुष' रटने लगा। मास कहते हैं उड़द को और तुष कहते हैं छिलके को। एक दिन वे गोचरी के लिए

किसी गृहस्थ के घर गए। उस घर में बहिन उड़द की दाल धो रही थी। उन्होंने देखा कि उड़द के छिलका हट जाए तो कालापन नहीं रहता। छिलका हटने पर उड़द श्वेत और उज्ज्वल हो जाते हैं। सन्त का चिन्तन चलता है कि ''इस आत्मा पर भी कर्म की कालिमा लगी हुई है, बस उस आवरण को धोकर आत्मा को धवल और उज्ज्वल बनाना है।''

उसने आत्मा को उज्ज्वल करने का पुरुषार्थ करना प्रारम्भ कर दिया। इस 'मासतुष' शब्द के चिन्तन को आत्मस्थ करके अपने जीवन में साकार किया, वही मुनि आगे जाकर मासतुष मुनि कहलाये।

उन्होंने गुरुवचनों पर दृढ़-श्रद्धा एवं पुरुषार्थ से केवलज्ञान प्राप्त कर लिया। करने वाले के लिए असम्भव भी सम्भव बन जाता है। आपको हम कहते हैं, सामायिक-प्रतिक्रमण सीखो तो हमें प्रत्युत्तर मिलता है कि बाबजी! इधर याद करते हैं उधर भूल जाते हैं। लेकिन भाई! अभ्यास करने से क्या नहीं हो सकता?

हमारे संघ में एक महासतीजी पानकँवरजी महाराज हुए। उन्हें अक्षर ज्ञान नहीं था, लेकिन ज्ञान सीखने की ललक थी। उमङ्ग होने से सीखते-सीखते, याद करते-करते कई आगम कण्ठस्थ कर लिए।

रत्नसंघ में एक तमिलभाषी सन्त हुए हैं श्रीचन्दजी महाराज। तमिलभाषी होने के कारण आपको हिन्दी, संस्कृत एवं प्राकृत सीखने में कठिनाई हुई। गुरु हस्ती के चरणों में आये। क्षयोपशम की मन्दता से उन्हें नमस्कार मन्त्र याद करने में भी सात या नौ दिन लग गए। लेकिन उन्होंने पुरुषार्थ किया और करते-करते बाद में उन्होंने बहुत से शास्त्रों का ज्ञान कर लिया, 200 से ऊपर भजनों को याद किया तथा सैकड़ों थोकड़ों पर अपना अधिकार जमा लिया। आपके ओजस्वी प्रवचन एवं बुलन्द आवाज से युक्त स्तवन श्रोताओं को बहुत प्रभावित करते थे। दक्षिण भारत के राजपूत कुल के होने के बावजूद आपने साधना के क्षेत्र में प्रबल पुरुषार्थ किया। अठारह वर्षों तक आड़ा आसन नहीं किया, पचोले-पचोले की तपस्या करके भी कर्म निर्जरा की।

सन्त-सतियों की बात छोड़िये, इसी जोधपुर में इन्दरकँवरजी बाईसा और सज्जनकँवरजी बाईसा ने अनेक अनपढ़ बहिनों को एक-एक शब्द याद कराते-कराते पूरा प्रतिक्रमण याद करा दिया।

आवश्यकता है जागने की और प्रबल पुरुषार्थ करने की। पूज्य गुरुदेव (आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा.) का सान्निध्य ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप के क्षेत्र में अग्रसर होने के लिए ही प्राप्त हुआ है। अपने सामर्थ्य को भली-भाँति जानकर पराक्रम करना है। पुरुषार्थ से कर्म-कालिमा को समाप्त करके उज्ज्वल बनाना है।

हमें भी प्रभु वचनों पर, गुरुवचनों पर विश्वास करके श्रद्धा को स्थिर करना है। यदि हमारा गुरुवचनों पर श्रद्धाभाव कायम हो गया तो फिर रुचि और प्रतीति होने में देर नहीं लगेगी। जीवन में सच्ची श्रद्धा-भक्ति होने पर शेष सारे सुख स्वत: ही प्राप्त हो जाते हैं। इसलिए आप गुरु मुख से थोड़ा सुनें या अधिक सुनें, लेकिन जो भी सुनें उसे आचरण में लाने का प्रयास अवश्य करें। इसी भावना के साथ....। ■

सूचना-प्रतिमाह गजेन्द्र निधि, गजेन्द्र फाउण्डेशन और संघ-सेवा-सोपान के अन्तर्गत संघ के कई सदस्यों से निरन्तर फण्ड प्राप्त हो रहा है। संघ-सेवा में योगदान देने वाले प्रत्येक सदस्य को संघ साधुवाद ज्ञापित करता है। जो भी सदस्य अपना फण्ड सीधे बैंक में जमा कर सहयोग दे रहे हैं, वे अपनी जमापूँजी का पूर्ण विवरण (मय पता, पेन कार्ड, मोबाइल नं.) मोबाइल 9867325842 के व्हाट्स एप्प अथवा absjrhssangh@gmail.com पर भिजवाएँ, जिससे समय पर आपश्री की सेवा में रसीद प्रेषित की जा सके।

-महेन्द्र कुम्भट, कोषाध्यक्ष-अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 20
ISSN 2249-2011

प्रवचन

जीव पर दृष्टि स्वमत है, पुद्गल पर दृष्टि परमत है

तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. द्वारा सामायिक-स्वाध्याय भवन, पावटा, जोधपुर में 18 मई, 2017 को फरमाए गए इस प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सह सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर ने किया है। **-सम्पादक**

बन्धुओं!

औदारिक शरीर, तेजस शरीर और कार्मण शरीर ये तीनों शरीर प्रत्येक मनुष्य के साथ रहे हुए हैं। इनको दूसरे रूप में स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर और कारण शरीर भी बोला जाता है। तेजस शरीर से उष्ण लेश्या भी प्रकट होती है और शीतलेश्या भी तेजस शरीर से ही निकलती है। भगवतीसूत्र शतक 15 में वर्णन आता है कि सूर्य की आतापना लेने वाले, लम्बी-लम्बी जटाओं में पड़े जीवों को बचाने की चेष्टा करने वाले उस बाल तपस्वी का गोशालक ने तिरस्कार किया। गोशालक तपस्वी को अन्यथा शब्दों से, व्यंग्यपूर्वक एवं कटुतापूर्ण वाक्यों से जुओं का शय्यातर तक कहने लगा। बार-बार तिरस्कृत शब्दों को सुनकर क्रोधित होकर तपस्वीजी ने उष्ण तेजोलेश्या का प्रहार कर दिया। अनुकम्पा करके भगवान महावीर ने शीतलेश्या से उष्णलेश्या को प्रतिहत किया।

आचाराङ्गसूत्र की टीका में आहार संज्ञा का कारण तेजस नाम-कर्म का उदय बताया गया है। आहार संज्ञा के कारण के विषय में यह बात पहली बार पढ़ने को मिली। ज्ञानियों का कथन है कि स्थूल शरीर को ऊष्मा प्रदान करने का काम तेजस शरीर का है। तेजस शरीर के निकलने से शरीर ठण्डा पड़ जाता है।

अग्नि में जठराग्नि, क्रोधाग्नि और कामाग्नि इन तीन शब्दों का प्रयोग मिलता है। जठराग्नि को जठरानल भी बोलते हैं। अनल का मतलब आग होता है। जठराग्नि का शमन नहीं हुआ तो क्रोधाग्नि प्रकट हो जाती है। तपस्वी को गुस्सा अधिक आता है। इसका कारण है तपस्वी की जठराग्नि समुचित रूप से शान्त नहीं हुई है, इसलिए क्रोधाग्नि जाग्रत हो गई। खाने के लिए अधिक पुष्टिकर वस्तु मिल गई तो कामाग्नि जाग्रत होगी। इसलिए कहा है-आहार मित और एषणिक हो। ब्रह्मचर्य की नौ बाड़ में कह दिया है कि सन्निपात के रोगी को दूध-मिश्री का दृष्टान्त। दूसरे शब्दों में सेर की हाण्डी में सवा सेर का दृष्टान्त। उत्तराध्ययनसूत्र के बत्तीसवें अध्ययन की नौवीं गाथा में राग-द्वेष और मोह को जीतने की चर्चा की गई है। आगे दसवीं गाथा में कहा-

रसा पगामं ण निसेवियव्वा, पायं रसा दित्तिकरा नराणं।
दित्तं च कामा समभिद्दवंति, दुमं जहा साउफलं व पक्खी।।

अर्थात् रसों का अत्यधिक सेवन नहीं करना चाहिए। रसों के अत्यधिक सेवन से शरीर की पुष्टि होती है। शरीर की पुष्टि होने से कामाग्नि जाग्रत होती है। कामाग्नि जाग्रत हुए मनुष्य को कामभोग वैसे ही पीड़ित करते हैं जैसे स्वादिष्ट फल वाले वृक्ष को पक्षी। भूख हो, प्यास हो, छींक हो, खाँसी हो, मल हो, मूत्र हो इन वेगों को नहीं रोकना चाहिए, लेकिन काम का वेग सबसे अधिक खतरनाक है, इसे तो रोकने में ही भलाई है।

इस पृथ्वी तल पर सर्वश्रेष्ठ भूषण चौबीस तीर्थंकर हैं, उनमें सिर्फ दो तीर्थंकर ही अविवाहित रहे। 19वें तीर्थंकर मल्लीनाथजी और 22वें तीर्थंकर अरिष्टनेमिजी। मल्ली भगवती को प्राप्त करने के लिए छह-छह राजा आए थे और अरिष्टनेमिजी की तो बारात ही पहुँच गई थी, लेकिन फिर भी उन्होंने विवाह नहीं किया। भगवान पार्श्वनाथ का विवाह हुआ, भगवान महावीर का भी विवाह हुआ, लेकिन यह भी ध्यान

रखना चाहिये कि तीर्थंकर जो भी होते हैं वे संसार से उदासीन होते हैं, संसार से निर्लिप्त रहते हैं फिर भी भोगावलि कर्म के शेष होने से उनको विवाह करना पड़ा। सारी इन्द्रियों का निग्रह ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मचर्य का मतलब है-ब्रह्म में रमण। श्रावक के बारह व्रत में चौथा व्रत ब्रह्मचर्य का है। मैं आपसे प्रश्न करूँ कि श्रावक के बारह व्रतों में करण और योग कितनी बार आते हैं? देखिए, प्रश्न टेढ़ा जरूर है। आप प्रतिक्रमण में बोलते हैं, फिर भी उपयोग नहीं लग पाता है। प्रतिक्रमण में करण और योग तेरह बार आता है। बारहवें व्रत में तो आता ही नहीं है, चौथे और दसवें व्रत में दो बार आता है। चौथे व्रत के अन्तर्गत मैथुन सेवन का त्याग मनुष्य और तिर्यञ्च सम्बन्धी एक करण, एक योग से अर्थात् न करेमि, न कायसा है। काया से मैथुन सेवन नहीं करना।

हम उदारवादी हैं। हम श्रेष्ठ गुरु के शिष्य हैं। आचार्य भगवन्त पूज्यश्री हस्तीमलजी म.सा. का जोधपुर चातुर्मास था। उस समय रोटरी क्लब 305 के गवर्नर श्री सम्पतसिंहजी भाण्डावत साहब थे। वहाँ रोटरी क्लब के सदस्यों की सभा में जैनेतर समाज के लोग भी आए थे। उनमें अलवर के सदस्य भी आए हुए थे। मैं नवदीक्षित था। जैन और जैनेतर क्लब के सदस्य गुरुदेव के दर्शन करने आए। जैनेतर लोगों से गुरुदेव ने पूछा- ''गीता पढ़ते हो क्या?'' जैनेतर समाज के लोगों से यह पूछना कि आप गीता पढ़ते हो क्या? यह उदारता के संस्कारों के बिना नहीं पूछा जा सकता है।

हमारा वीतराग धर्म है। इसमें स्वलिङ्ग सिद्ध, अन्यलिङ्ग सिद्ध, गृहस्थलिङ्ग सिद्ध भी कहा है। बाबा हैं, संन्यासी हैं, गेरुए वस्त्र धारण करने वाले हैं ऐसे अन्यलिङ्गी भी एक समय में दस जीव मोक्ष जा सकते हैं। गृहस्थलिङ्ग से भी एक समय में चार जीव मोक्ष जा सकते हैं, यह उदारता नहीं तो और क्या है?

भगवान से जब किसी मिथ्याभाषण के विषय में पृच्छा की जाती है तो भगवान का समाधानपरक उत्तर होता है कि-''वह ऐसा बोलता है, उसका ऐसा कहना मिथ्या है।'' देखिये, भाषा की कितनी कोमलता एवं उदारता है। **भगवान व्यक्ति को मिथ्यादृष्टि नहीं कह रहे, अपितु उसके कथन को मिथ्या कह रहे हैं।** क्योंकि हमारा धर्म सिखाता है-**मित्ती मे सव्वभूएसु।** हमारा धर्म गलत मान्यता से तो बचता है, पर किसी से वैमनस्य भी नहीं रखता है।

आज हमारी स्थिति क्या है? किसी की मान्यता गलत हो सकती है, परन्तु मान्यता को मानने वाले को यदि गलत समझ लिया जाता है तो कहना होगा-यह विपरीत मान्यता है, मिथ्या मान्यता है। **सही मान्यता पापी को गलत नहीं बताती, अपितु पाप को गलत बताती है।** मिथ्यादृष्टि मिथ्यात्व मोहनीय के प्रभाव से पुद्गल को सर्वस्व मानता है। विपरीत मान्यताएँ सब पुद्गल रूप हैं। वे सब वर्ण-रस-गन्ध-स्पर्श वाली हैं।

दो मत होते हैं-एक स्वमत और दूसरा परमत। जीव पर दृष्टि स्वमत है, पुद्गल पर दृष्टि परमत है। जीव पर अजीव हावी हो रहा है। **हिंसा, झूठ, चोरी ये सब अजीव के हावी होने से होते हैं। पैसा जड़ है। भीतर में रही कषाय जड़ है।** जो भी जड़ हैं वे अजीव हैं। अजीव के पोषण के लिए हिंसा की जा रही है।

आपका और हमारा मानव जीवन है। मानव के जीवन में ही सारी समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। मिथ्यात्व की जड़ को केवल मनुष्य ही काट सकता है। हम सीख सकते हैं, आगे बढ़ सकते हैं। मिथ्यात्व की क्षपणा सिर्फ मनुष्य गति में ही होती है। जीव में अन्यथा भाव कब आते हैं? जब वह परमत अर्थात् पुद्गलों से प्रभावित रहता है। शास्त्र चेता रहा है कि हम सबके साथ मैत्री भाव रखें। यह धर्म की आधारशिला है। सब जीवों को अपने समान देखने पर ही विकास हो सकता है और पुद्गल के प्रपञ्च से बचा जा सकता है।

हमने एक देव भव में असंख्य तीर्थंकरों की सन्निधि पाई है। असंख्य तीर्थंकरों के जन्म कल्याणक मनाए हैं। हमारा यह जीव तीर्थंकर भगवन्तों के

केवलज्ञान से निसृत देशना सुनकर भी आया है। इतना सब कुछ होते हुए भी मेरा जीव आपके सामने बैठा है। अगर मैं इस भव में ईमानदार बन जाऊँ तो मेरे जीव को छठे आरे में जन्म लेने की नौबत नहीं आयेगी।

आज का किया गया धर्म मुझे खराब आरे में जन्मने से बचा सकता है। आज हमें लगता है-अमुक व्यक्ति तनाव पैदा कर रहा है, वह आंतकवादी बम फोड़ रहा है आदि। इन बातों पर ही ध्यान लगा रहता है, लेकिन यदि मैं ईमानदारी से धर्म का पालन कर लूँगा तो मनुष्य और वैमानिक को छोड़कर शेष 22 दण्डकों में जाने का नम्बर आएगा ही नहीं।

भीतर छोड़ बाहर को भागे, भीतर मिले न बाहर पावे।
बाहर छोड़ भीतर में आवे, भीतर मिले न बाहर जावे।।

जो भीतर को छोड़कर बाहर भागता है, उसे न भीतर का मिलता है और न बाहर का मिलता है। जो बाहर को छोड़कर भीतर में आता है, उसे भीतर में सब कुछ मिल जाता है, फिर वह बाहर जाता ही नहीं है। छप्पन करोड़ की सौनैया मिल गई तब भी और पाने की लालसा है। छह खण्ड जीत लिए तो सातवें खण्ड को जीतने की कामना है। जबकि यह कभी होता नहीं कि सातवाँ खण्ड भी जीता जा सके।

सन्त घर पर पधारें। सन्त को हाथ से बहराऊँगा, ऐसे सत्कर्म का सार्थक चिन्तन शुरू होता है तब कोई संकल्प-विकल्प नहीं होता है। जब निर्विकल्प दशा आ जाती है तब मिथ्यादृष्टि सम्यग्दृष्टि बन जाता है। यह चमत्कार है। मिथ्यात्व से सम्यक्त्व में आना सबसे बड़ा चमत्कार है। सन्त को घर आए देखकर रोम-रोम पुलकित होता है। जीतमलजी चौपड़ा आचार्यश्री के पधारने पर कहते थे-

आज तो आनन्द म्हारे गुरु पधारिया पाहुँना।।

जीतमलजी चौपड़ा अजमेर संघ के मन्त्री थे। उनकी अच्छी लेखन कला थी, बोलते भी अच्छा थे। वे संघ को सम्भालकर चलते थे। मैंने दो आदमी देखे हैं- एक थे ताराचन्दजी सिंघवी, पाली और एक थे जीतमलजी चौपड़ा, अजमेर। उन्होंने खड़े होकर विनति कर ली तो गुरुदेव चौमासा फरमा ही देते थे। पाँचोड़ी ग्राम में अजमेर संघ विनति करने आया। चातुर्मास नागौर में खुलने जैसा ही था, पर कह दिया कि 99 शर्त आपकी और एक शर्त मेरी। मैंने बाहर में विनति कर दी तो अब कृपा कर दो। ऐसे-ऐसे पुण्यशाली श्रावक होते थे। उन पर गुरुदेव की कृपा हो जाती थी।

जिनशासन में पुण्य को लेकर बड़ी विडम्बना है। पुण्य उपादेय है फिर भी कइयों के मन में भ्रान्ति घुसी हुई है। मिले हुए का सदुपयोग पुण्य है। पुण्य आगे बढ़ाने वाला है। एक भी जीव बिना पुण्य के आगे नहीं बढ़ सकता। आप इस सूत्र को अच्छी तरह भीतर जमा लें।

कोलकाता से इगतपुरी तक एक इञ्जन पूरी रेलगाड़ी को खींच कर ला सकता है। लेकिन इगतपुरी से तीन इञ्जिन लगते हैं। कोलकाता से इगतपुरी 1,900 किलोमीटर तक केवल एक इञ्जन और इगतपुरी से 100 किलोमीटर आगे के लिए तीन इञ्जन, आखिर क्यों? कारण क्या? इगतपुरी से चढ़ाई का रास्ता है, एक इञ्जन के बजाय तीन इञ्जन लगाने पड़ते हैं। लोनावाला में खण्डाला घाट है। यात्री गाड़ी में तीन इञ्जन और मालगाड़ी में पाँच इञ्जन लगाने पड़ते हैं।

70 कोटाकोटि सागरोपम कर्म स्थिति में से 69 कोटाकोटि सागरोपम स्थिति को अकेले पुण्य के बल पर तोड़ा जा सकता है। फिर शेष बचे एक कोटाकोटि के भीतर की स्थिति को संवर, निर्जरा और पुण्य रूपी तीन-तीन इञ्जनों के माध्यम से तोड़ा जाता है। तब कहीं जाकर जीव मोक्ष तक पहुँचता है।

सार्थक चिन्तन से पुण्य बढ़ेगा। पहला गुणस्थान पार करने में पुण्य सहयोगी बनेगा। मन के अच्छे परिणाम नहीं तो अच्छा कार्य भी पुण्य नहीं कहलायेगा। किसी ने किसी को रोटी डाली। रोटी तो दी, लेकिन रोटी में ज़हर था, जिसको खाकर वह मर जाएगा। इस स्थिति में रोटी डालना पुण्य नहीं है। पुण्य का सम्बन्ध भावना से अधिक है।

एक भिखारी जो भूखा है। उसको किसी ने अच्छा

खाना खिलाया, खाना भी मिष्ठान्न और पक्वान्न सहित था। चाँदी का बाजोट, चाँदी का थाल और चाँदी के बर्तनों में खाना खिलाया। पहले अच्छी तरह स्नान करवाया, तेल मालिश की, फिर भोजन कराया। जब वह भोजन कर चुका तो उससे कहा कि क्या तुम्हारे बाप-दादा ने कभी ऐसा भोजन खाया है? वास्तव में भिखारी ने ऐसा स्वादिष्ट भोजन नहीं किया था, उसके बाप-दादा ने भी नहीं खाया था लेकिन क्या उसे ये व्यंग्यात्मक वाक्य अच्छे लगेंगे। कभी भी नहीं। अच्छा भोजन खिलाकर वचन के बुरे प्रयोग से किया कराया बिगड़ तो नहीं जाएगा? लेकिन कहना होगा कि-अच्छा खिलाकर भावना को बिगाड़ लिया तो कात्या-पींजिया कपास कर दिया।

देने के पहले, देते समय और देने के बाद अच्छी भावना होने से फल मिलता है। नहीं तो, आपको ध्यान होगा कि मुम्मण सेठ ने भी दिया था। सन्त के ना-ना करते हुए भी पूरा बहरा दिया। लड्डू के कुछ खेरे थाल में चिपके रह गए। उनको खाया, बड़े स्वादिष्ट लगे। मन में विचार आया कि सब नहीं बहराता तो अच्छा रहता। महाराज तो मना कर ही रहे थे। बहराना पुण्य है, लेकिन भावना में परिवर्तन आने पर वह पुण्य नहीं, पाप हो गया। इसलिए कहा है-अच्छे कार्य का विचार, निर्णय, प्रवृत्ति और अनुमोदना, इन चारों से लाभ होता है। मैं दीक्षा लूँगा इसका विचार भी अच्छा है। इस विचार के बाद निर्णय होने पर उसमें प्रवृत्ति और उस प्रवृत्ति की अनुमोदना का भी लाभ मिलता है।

आप तीन मनोरथ का चिन्तन करते हैं तो यह महान् लाभ का कारण है। विचारों से भी लाभ होता है। निर्णय भी लाभ का कारण है। जो भी गलत मान्यता है वह अजीव है। अजीव से प्रभावित होकर जीव अपना नुकसान कर रहा है।

गलत भावना रखने से जीव के अशुभ कर्मबन्ध का मीटर लगातार चल रहा है। पुद्गल में संसार मानने वाला पुण्य नहीं कर सकता। हम जीव-अजीव का स्वरूप समझें, पुण्य-पाप को जानें तभी आत्म-कल्याण की ओर बढ़ सकेंगे।

बहू क्या लाई है?

श्रीमती निधि दिनेश लोढ़ा

रोहन और रानू की शादी बड़ी धूमधाम से हुई। लगभग सब रिश्तेदार वापस जा चुके थे। केवल चाचा, चाची, बुआ और मौसी वहीं थे।

बुआजी ने कहा-''लगता है बहू अधिक माल नहीं लाई है। अच्छा-खासा माल होता तो सबके सामने दिखाया जाता।''

रोहन की माँ ने तपाक से कहा-''जीजी, हम कौनसी सदी में जी रहे हैं। उन्होंने अपनी नाज़ों से पली-बढ़ी, संस्कारित लड़की हमें सौंप दी। इससे अधिक हमें क्या चाहिए? सबसे बड़ा धन तो शिक्षा है, रानू ने सालों मेहनत करके इंजीनियरिंग की है। वह चाहे किसी कम्पनी में काम करे, चाहे न करे, परन्तु स्वयं शिक्षित है इसलिए बच्चों की पढ़ाई में भी अपना योगदान देगी।''

बुआजी ने कहा-''यदि वह किसी कम्पनी में काम करेगी तो घर का सारा काम तुम्हें ही करना होगा। वह तो ऑफिस जाने का रौब जमायेगी।''

रोहन की माँ-''जब मैं अपने दो बच्चों का काम कर सकती हूँ तो बहू का क्यों नहीं कर सकती और यदि मुश्किल हुई तो काम करने वाले आसानी से मिल जाते हैं। जीजी! मैं सम्भाल लूँगी। आप चिन्ता न करें।'' बुआजी अब पूरी तरह चुप हो गयी।

जब हम चारों तरफ नज़र घुमाकर देखते हैं तो लगता है सचमुच ज़माना कितना बदल रहा है। आजकल सास-बहू की लड़ाई टी.वी. सीरियल में ही होती है, लेकिन असलियत में तो सास अपनी बहू का खुले दिल से स्वागत करती है।

(सत्य घटना पर आधारित)

-वर्ली, मुम्बई (महाराष्ट्र)

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 24
ISSN 2249-2011

प्रवचन

सम्यक् विधि से फेरें माला

श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के सुशिष्य श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. द्वारा 6 जुलाई, 2022 को प्रतापनगर, जयपुर में फरमाये गये इस प्रवचन का आशुलेखन स्थानीय संघाध्यक्ष श्री प्रमोदजी महनोत, जयपुर के द्वारा करवाया गया। **-सम्पादक**

धर्मानुरागी बन्धुओं!

माला और माल ये दो शब्द आपके सामने हैं। आप इन दोनों में से किसका चयन करना चाहेंगे ? दोनों शब्दों की राशि एक है, पर दोनों की राह अलग-अलग है। शब्द-संसार में ऐसे कई शब्द हैं जिनकी राशि तो एक है, पर राह अलग-अलग है। जैसे-पूर्व-पश्चिम, संसार-संयम, आराधना-आशातना, आगम-अखबार, भोजन-भजन इत्यादि। संसार में व्यक्तियों के नाम की भी एक राशि होते हुए भी उनमें विभिन्नता एवं जीवन जीने की शैली में अन्तर दृष्टिगोचर होता है। जैसे- गौतम-गोशालक, कृष्ण-कंस, ओबामा-ओसामा, राम-रावण, गाँधी-गोडसे इत्यादि तो माला और माल, इन दोनों शब्दों की राशि एक होते हुए भी इनकी राह बिल्कुल भिन्न-भिन्न है।

मैं आप लोगों से जानना चाहता हूँ आप इन दोनों में से किसे पसन्द करते हैं ? यकीनन माल को, बताइये सही है या गलत? (सभा में से-हाँ।) अधिकांश लोग माल पाने के भाव से माला फेरते हैं। यह माला फेरने का दूषण है, यह माला फेरने में प्रदूषण है।

बन्धुओं! याद रखें माला फेरने से माल चाहना जीवन का मलाल है और माला फेरने से मालामाल हो जाना यह माला का कमाल है। हम चाहना बन्द करें। चाहना संसार है। जहाँ चाह है, वहाँ दु:ख है। अगर हम नि:स्वार्थ भाव से, निर्लेप और निर्मल भाव से माला फेरते हैं, प्रभु का सुमिरण करते हैं तो निश्चित रूप से फल की प्राप्ति स्वत: हो जाती है। यदि मन में कामना, चाहना, आकांक्षा रखकर माला फेरी तो उसमें सफलता मिले, यह जरूरी नहीं है। माला फेरते समय परिणामों की विशुद्धता नहीं रहती, इसलिए हम माला फेरने से पहले अपने मन की भावनाओं को पवित्र करें, हृदय में गुणानुराग जगाकर प्रभुभक्ति करने का भाव रखें।

भगवान ने जिसको छोड़ा, उसे कभी नहीं माँगना, अपितु भगवान ने जिसके लिए छोड़ा, उसको माँगना ही मालामाल होने का राजमार्ग है। माला फेरते समय जो प्रभु से माँगता है, वह हार जाता है और जो प्रभु को माँगता है, वह जीत जाता है। महाभारत का प्रसङ्ग है- श्रीकृष्ण के पास दो व्यक्ति पहुँचते हैं-(1) दुर्योधन और (2) अर्जुन।

दुर्योधन ने श्रीकृष्ण से माँगा, जिसके फलस्वरूप वह युद्ध हार गया, युद्ध में सब कुछ स्वाहा कर गया और दूसरी ओर अर्जुन ने श्रीकृष्ण से स्वयं श्रीकृष्ण को ही माँग लिया, इसका ऐसा परिणाम निकला कि महाभारत शुरू होने से पहले ही अर्जुन की युद्ध में जीत पक्की हो गई। यदि हम भी जीवन रूपी रण में कर्मरूपी संग्राम को जीतना चाहते हैं तो माला के माध्यम से प्रभु से वह सब नहीं माँगे, जिसे प्रभु ने असार, सत्त्वहीन और तुच्छ समझकर छोड़ा। जैसे-संसार, धन-वैभव, पद-प्रतिष्ठा, पुत्र-परिवार। हम माला के अवलम्बन से प्रभु स्तुति में प्रभु की धीरता, श्रेष्ठता, विराट्ता, विशालता, अजेयता, इन सात्त्विक गुणों को प्रकटाने के सामर्थ्य की प्रार्थना करें।

इसलिए कहा-माला से माल की चाहना, जीवन का मलाल है और माला से मालामाल हो जाना, यही माला का कमाल है। माला फेरने से अशुभ का परिहार,

शुभ का विचार और शुद्ध में विहार होता है। जब हम हाथ में माला लेते हैं, माला फेरते हैं, उसी समय भीतर की अशुद्धि, अशुभ विचार शुभ में बदलने प्रारम्भ हो जाते हैं और तल्लीनता, तन्मयता बढ़ जाने पर जीवात्मा शुद्धदशा में विहार-विचरण करने लगता है। इसलिए माला अशुभ का परिहार करती है, शुभ का विचार कराती है और आगे बढ़कर शुद्ध में विहार करने में सहयोगी बनती है।

प्रश्न है-माला कैसे फेरें? माला दो तरह से फेर सकते हैं-(1) माला हाथ में लेकर और (2) अपनी अंगुलियों पर गिनकर।

पहला तरीका-माला हाथ में लेकर फेरना- एक बात ध्यान में रखना कि अपनी फोटो पर माला लगे उसके पहले हाथ में माला ले लोगे तो मालामाल हो जाओगे अन्यथा फटेहाल हो जाओगे। हमें माला हाथ से फेरने पर दो बातों का खयाल रखना है। यदि आपने बताये जाने वाले निम्न दो नियमों का पालन किया तो माला फेरना सम्यक् होगा, सही होगा और फलदायी होगा।

पहला नियम है कि माला हाथ में नाक से ऊपर और नाभि से नीचे नहीं रहनी चाहिए। देखिये, नाक से ऊपर रखकर तो कोई माला फेरता नहीं है, परन्तु अक्सर माला नाभि से नीचे रख दी जाती है। यदि सुखासन में बैठे हैं और माला फेर रहे हैं, उस समय देखो तो प्राय: माला नाभि से नीचे मिलती है, यह माला फेरने की सम्यक् विधि नहीं है।

माला फेरते हुए शारीरिक स्थिति भी व्यवस्थित आसन में होनी चाहिए। माला जब भी फेरें, सबसे पहले आपका मेरूदण्ड अर्थात् आपकी रीढ़ की हड्डी सीधी होनी चाहिए, इससे सातों केन्द्र जाग्रत रहते हैं। उसके बाद माला को हृदय स्थान के पास रखते हुए माला फेरें। इस आसन से और इस पद्धति से माला फेरने पर माला नाभि से ऊपर और नाक से नीचे ही रहती है। इस प्रकार पहला नियम हुआ कि माला नाक से ऊपर भी नहीं और नाभि से नीचे भी नहीं होनी चाहिए। नाभि से नीचे माला क्यों नहीं?

नाभि ऊर्जा केन्द्र है। हमारे शरीर की समस्त ऊर्जा का अक्षय भण्डार नाभि होता है। शास्त्र में भी वर्णन आता है कि आत्मा के आठ रुचक प्रदेशों का स्थान भी नाभि के इर्द-गिर्द होता है। जीव जब गर्भ में आता है तो सर्वप्रथम माँ के साथ उसका जुड़ाव नाभि से ही होता है और वह जुड़ाव जन्म होने तक बना रहता है। ऊर्जा तो ऊर्जा है। उसे सही वेग मिले और वह ऊपर की ओर आरोहित हो तो उपासना होती है तथा ऊर्जा नीचे की ओर प्रवाहित हो तो वासना बन जाती है। इसलिए हमारी शक्ति, हमारी ऊर्जा ऊर्ध्वगामी बने, इस हेतु ही माला नाभि से नीचे नहीं रहनी चाहिये।

दूसरा नियम है कि माला कौनसी अंगुली पर रखकर फेरना चाहिए? हथेली में अंगूठे सहित अंगुलियाँ पाँच हैं और पाँचों अंगुलियों के स्वतन्त्र नाम और स्वतन्त्र कार्य हैं। (1) अंगुष्ठ, जिसे व्यवहार भाषा अर्थात् बोलचाल में अंगूठा भी बोल देते हैं। (2) तर्जनी (अंगूठे के ठीक पास वाली अंगुली)-तर्जन-ताड़न में तथा दूसरों को इंगित करने में जिसका प्रयोग होता है। (3) मध्यमा-जो पाँचों अंगुलियों में सबसे बड़ी होती है एवं मध्य में रहती है। (4) अनामिका-जिस अंगुली के नाड़ी संस्थान का सीधा सम्बन्ध हृदय से होता है। (5) कनिष्ठा-जो सभी अंगुलियों में सबसे कनिष्ठ-छोटी होती है।

माला फेरने के लिए दाहिने हाथ की अनामिका अंगुली का प्रयोग करना चाहिए। अनामिका पर माला रखें और मध्यमा एवं अंगुष्ठ से मोती को पकड़े तथा अन्दर की ओर माला फेरें। इस तरह से माला फेरना सम्यक् विधि है। माला को फेरते हुए कभी भी मोती को मध्यमा पर रखकर तर्जनी अंगुली से उसे आगे नहीं बढ़ाना चाहिए। साथ ही यह भी ध्यान रखना है कि माला पूरी होने के बाद माला के सुमेरु को अपनी आँखों और आज्ञा केन्द्र पर स्पर्शित भी नहीं करें, क्योंकि यह उचित

नहीं है।

दूसरा तरीका–माला अपनी अंगुलियों पर फेरना। कई लोग माला अपनी अंगुलियों पर फेरते हैं, यह भी एक विधि है। इस तरह से माला फेरने वालों को इतना सा विवेक ध्यान में लेना चाहिए कि अंगुलियों पर गिनती करते समय गिनती नीचे से ऊपर के पोर की ओर होनी चाहिए, ऊपर से नीचे की ओर गिनते हुए नहीं होनी चाहिए। यदि हम ऊपर से नीचे के पोर की ओर माला फेरते हैं तो, इससे हमारी ऊर्जा का क्षरण होता है। जीव का स्वभाव ऊर्ध्वमुखी है। हमें यह कार्य ऊर्ध्वशील बनकर ही करना चाहिए और ऊर्ध्वशील बनने के लिए ही करना चाहिए।

माला में मणका और मन का बड़ा ही महत्त्व है। माला फेरते समय मन को एकाग्र रखें। मन को पवित्र रखें। मन शुद्ध होता है तो मन्त्र सिद्ध होता है। माला फेरते समय मन संसार में नहीं फिरना (घूमना) चाहिए।

माला कहती है तुझको, क्या फेरत मुझको।
मन फिरा ले जग से, पार उतारूँ तुझको।।

अर्थात् माला फेरते हुए यदि मन एकाग्र नहीं है तो माला फेरने से कोई लाभ होने वाला नहीं है और मन की एकाग्रता से माला फेरी गयी है तो माला मालामाल कर देगी।

मन सध सकता है, मन माला में स्थिर हो सकता है, यदि हम सम्यक् विधि से, सम्यक् आसन से, दृष्टि और वचन पर नियन्त्रण करके माला फेरें। मन सध जाने पर मन निर्मल हो सकता है, निर्मल होने में ही अधिक समय लगता है, सिद्ध होने में नहीं। मन का स्वभाव चञ्चल है और यह चञ्चल तब तक रहेगा जब तक यह मलिन रहेगा। मन की मलिनता दूर होने पर ही मन की एकाग्रता सधती है। एकाग्रता सधने पर ही जीव सिद्ध हो सकता है। जीव को सिद्ध होने में एक समय लगता है, ठीक इसी तरह साधना सिद्ध होने में भी अधिक समय नहीं लगता, साधना को शुद्ध तरीके से करने में ही समय लगता है। इसलिए हमें साधना शुद्ध कैसे हो, माला कैसे फेरें और किन भावों के साथ फेरें, यह समझने का प्रयास करना है। अब यही कहना है–

बहुत सम्भाला माल, अब माला सम्भालो,
जो न पाया माल से, वह माला से पा लो।।
फोटो लग चुकी है, उस पर माला लगने की देर,
फोटो पर माला लगने से पहले, हाथों से माला फेर।।

आराधना पद्धतियों में जप–तप की आराधनाएँ प्रसिद्ध हैं। जप की आराधना माला फेरने से हो जाती है। जप–आराधना प्रत्येक कोटि के साधक की पसन्द होती है। माला फेरते हुए प्रभु के नाम का स्मरण अथवा उनके गुणों का स्मरण होता है, जिससे अशुभ कर्मों की निर्जरा होती है। अनादि काल से कर्मों का जाला आत्मा पर लगा हुआ है। माला फेरकर कर्मों का जाला हटाना है। आप सभी प्रतिदिन माला फेरने का श्रेष्ठ उपक्रम करके कर्मों से हल्का बनेंगे, इसी भावना के साथ।

■

हवा से लौ लगाए बैठे हैं

श्री राजेन्द्र जैन 'राजा'

बिन्दु से जीवन में,
सिन्धु–सा अहंकार पाले बैठे हैं,
खाली हाथ जाना है फिर भी,
वर्षों का सामान जुटाए बैठे हैं।

सुन्दर काया और यौवन के मद में,
देह की नश्वरता को भुलाए बैठे हैं,
धन–दौलत, पद–प्रतिष्ठा झूठा एक छलावा है,
मोह, माया और राग–द्वेषवश, भव बढ़ाये बैठे हैं।

पल भर भी नहीं भरोसा इस जीवन का,
कितने स्वप्न संजोएँ बैठे हैं,
बुझ जाए जाने कब जीवनदीप,
हवा में लौ लगाए बैठे हैं।।

-44/221, मानसरोवर, जयपुर-302020 (राजस्थान)

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 27
ISSN 2249-2011

English-section

ACHARYA SHRI HASTI ON CONTEMPORARY GLOBAL PROBLEMS AND REMEDIAL MEASURES

Prof. S. R. Bhatt

Parama Pujya Acharya Hastimalji has been a prominent saint and an erudite thinker well steeped in Jain lore and comparative literature. He has been a noble sage and profound scholar who has been academic and practical, a visionary and a spiritual activist. Apart from preaching Jain thought and practices in his speeches and writings he has analyzed some glaring global issues with a holistic vision and pragmatic solution from Jain perspective. The maxim "*Think globally and act locally*" has been the guiding principle. So, in his discourses and conversations, in his preaching and practical life there has been two-pronged strategy—theoretical exposition and collaborative practical venture. In *Ādhyāmika Āloka* and *Amṛta Vāk*, a collection of his sayings, he has provided a blue print for individual development, social transformation and cosmic well-being on the basis of fundamental tenets and practices of Jainism. He has presented an understanding of the basic premises, doctrines and tenets of Jainism as per the present day needs and aspirations in simple and concise manner for popular understanding. His lucid averments have been both informative and transformative. For this purpose he has drawn out necessary implications from the classical Jain literature. Because of his saintly life and scholarly discourses he is aptly addressed as - ***"Purisavaragandhahatthī."***

I have attempted here a synoptic exposition of his liberating philosophy dealing with analysis of contemporary global problems, taking clue from his works. He has taken cognizance of prevailing problems and offered efficacious solutions. His scholarship is not confined to Jainism alone and reveals his mastery over other systems of thought. Though he employed Hindi as medium to communicate with the masses I put the same in my own way in English for wider dissemination to Non-Hindi speaking readers. He has been an intellectual celebrity with spiritual aura and his glittering wisdom should spread all over the globe to enlighten whole humanity. Present day humanity is in serious pitiable condition for the amelioration of which the redeeming message of Ācharyashri is helpful.

It is my belief that Jainism, as expounded by him, is as relevant today as it was in the past. Its salient message and needful practices have global significance provided they are properly understood and genuinely practiced for cosmic wellness. Dissemination of awareness about them and social services are the modalities to be adopted. It is no doubt a herculean task as the arena is very vast and not easily manageable, but the task is needed and important. The aim is to motivate people and to guide them for such activities as they are conducive to universal peace and amity, global prosperity and harmony. Though this is lofty ideal it can be achieved gradually and persistently in a programmatic action. In all human enterprises there has to be a happy symbiosis of material prosperity and spiritual enhancement. Then only there can be universal peace and harmony.

There can be many alternative ways to realize this goal. All may be effective and efficacious, but the Jain approach is more suitable to the contemporary needs and aspirations. The Jain theories of *Anekāntavāda* and *syādvāda,* clear demarcation between *niścaya* (trans-empirical) and *vyavahāra (empirical)* and bifurcation between principles of *Mahāvrata* and *Aṇuvrata* need to be propagated and practiced at the global level in a systematic and methodical way. The exposal of some glaring issues outlined in his works provides the social justification and need for undertaking such mode of thinking and way of living. Acharyashri has provided guideline for that. The Jain community in particular has the required wherewithal, and therefore such an enterprise can be undertaken under its mentorship. This has been the message of Revered *Tīrthankaras* and undertaking this task is real worship and tribute to them.

The contemporary existential scenario, with all its ills and evils, demands serious attention to undertake its in-depth analysis and find remedial measures to rectify the prevailing melancholy situation. Jainism can be of help to provide a blue print for the elimination of present day ailments. Jain thought with its holistic philosophy of interdependence, reciprocity, and mutual care and share, universal love and compassion, fellowship and participation, can offer an effective and more beneficial alternative to the present day individualistic, materialistic, competitive and consumerist view of life and Reality. Acharyashri has dwelled upon this point. There are some seminal ideas, ideals and guiding principles contained here which may redeem humanity from its present plight .*Ādhyātmika Āloka, Amṛta Vāk* and other works present a quintessence of wisdom enshrined in the Ā*gamas* and humanity should be benefitted by that.

Jain philosophy being a systematic and critical reflection on our lived experiences has the avowed task of providing a way out from this labyrinth with its liberating wisdom and therefore it is the onus of responsibility on those who are exposed to Jain modes of thinking and ways of living to put forth fresh thinking and newer pathways by way of creative interpretations of Jain teachings and their faithful and sincere adherence, and come out with innovative paradigms to guide humanity. Well steeped in Jain lore Acharyashri has shown us the path. There is need to address the imminent problems facing the humankind and provide genuine, effective and efficacious solutions failing which the rich and varied Jain culture will cease to be relevant to contemporary needs and aspirations and it may just remain an article of faith and one of the modes of worship.

II

According to Jain viewpoint Reality is wide, varied and variegated. It is experienced as multi-faceted and multi-layered. Because it is manifold there can be multiple ways and approaches to comprehend Reality. The Jain seers emphasized that though Reality is self-same in its *proto-form,* in its *assumed- form* it expresses itself in multiple forms and there are multiple ways of expressing our experiences of multi-faceted Reality. Acharyashri has referred to the rich concept of *Paryaya* to explain this. In view of this rich diversity there should not be any insistence on uniformity or unanimity in thought that any one particular mode of thinking is *the only* mode or that it alone is logically tenable and sustainable and therefore universally acceptable. So there cannot be any unanimity or uniformity in our modes of thinking and ways of living. There cannot be any regimentation in this respect that there can be only one type of philosophy and religion imposed all over the world. It

would be improper and unjust to insist that there can be only one particular mode that has to be universally acceptable. Genuine thought process has to stem from concretely lived experiences that are culturally conditioned and therefore democracy in ideas and living has to be the guiding point. There should always be a scope for healthy disagreement. The thoughtful and creative minds need not always agree or think along a fixed path. There is room for debate and discussion, mutual exchanges, give and take to arrive at truth. This is enjoined in a well known saying, "*Vāde vāde jāyate tattvabodhaḥ*" (Truth can be known and realized by mutual discussion and debate.) But this enterprise has to be rational, logical and methodical. Then only it is reasonable and acceptable. In the past this viewpoint was properly appreciated and practiced but later on some sort of dogmatism vitiated the atmosphere. There is a need for revival of this mind set. Then only fresh approaches, newer intuitions, novel insights and innovative ideas can be possible. Acharyashri Hasti of course belonged to a particular Jain sect, but he could like Acharya Haribhadra transcend sectarian barriers and confinements.

Jain theory of *syādvāda* asserts that none has monopoly over knowledge and truth. It is wrongly regarded that knowledge and truth are confined to and they are exclusive possession of a particular individual or group. Anybody can acquire them. There can be various alternative approaches to Reality, alternative ways to express our experiences of Reality, as also distinct apprehensions of different aspects of the multi-faceted Reality. The point is that the only insistence should be on systematic thinking and appreciative analysis through monologue, dialogue or *polylogue*. But this is to be done in the spirit of *samvāda* (concordance of thought) and not of *vivāda (disputation)*. A philosophical position has to be logical and rational but a philosophical disagreement has to be equally logical and rational. The traditional Indian thinkers have gone into details of this modality and have provided voluminous literature as to how *samvāda* is to be conducted avoiding various types of *vivāda*.

III

Jainism is essentially a way of life, but it is a way of life based on a proper view of Reality. Unless there is a correct understanding of the nature of life and Reality through proper attitude and mental make-up (i.e., *samyak dṛṣṭi*) and proper knowledge (i.e., *samyak jñāna)*, there can be no proper mode of living, (i.e., *samyak cāritra)*. *Samyak dṛṣṭi, samyak jñāna* and *samyak cāritra* thus constitute the three jewels which a human being must adorn in one's life. They are therefore known as *triratnas* or *ratnatraya*. Such a person is known as '*Ratnatrayadhārī*'.. Right knowledge (*samyak jñāna)* and right conduct *(samyak cāritra*) are the two foundations of the ethico-spiritual philosophy of Jainism. These two are grounded in right attitude of mind (*samyak dṛṣṭi*). We can legitimately say that Acharyashri was *Ratntrayadhārī* in the real sense of the term. We have to emulate him to realize meaningfulness of human life and have self-realization.

Knowledge pertains to the Real. The Real, according to Jain view as stated earlier, is multi-faceted and multi-dimensional. It has infinite properties *(ananta dharma*) and therefore it can be approached in infinite ways. This is the *anekānta dṛṣṭi* which is the base of *samyak jñāna*. This is *perspectivalism* at the levels of Reality, thought and language. As there are many aspects of Reality there can be multiple approaches to Reality. Each one is true in itself but it is only partially true. It is true from a particular perspective. From

another perspective it may not be true. We may have a total or holistic perspective and it is known as *pramāṇa*. But if we have a partial perspective it is known as *naya*. Both *pramāṇa* and *naya* are true and valuable in their respective spheres. In a very simple and persuasive manner Acharyashri has discussed this point.

The Real has three phases of existence. In it something originates (*utpāda*), something endures *(dhrauva)*, and something passes away(*vyaya)*. So it is both permanent and changing. But we must know what is permanent and what is changing. We have to attend to both in proper proportion and in proper perspective. More often than not we do not do so under the spell of ignorance and sway of passion. The *Tīrthankaras*, who are *Jinas (Victors over passions)*, have shown the way to us which is the right path to be emulated by us. Proper knowledge, proper will and proper effort on our part alone can yield the desired result.

Anekāntavāda* and *Samatva

Acharyasri has emphasized theories of *anekanta* and *samatva*. The theory of *anekānta* is the corner stone of Jain view of Reality and life. It is described as heart of Jainism. It is a direct corollary of *samatva (vision of equality), one of the foundational concepts* of *śramaṇa tradition to which Jainism belongs*. It is rather application of *samatva.* It is a dynamics of thought which ensures conciliation, concord, harmony and synthesis**.** It stands for catholicity of outlook and accommodation of different viewpoints in the holistic understanding. It is *organismic* view of life and Reality. It takes into account both the whole (*sakala*) and the parts *(vikala*). That is why in the field of knowledge it draws a distinction between *pramāṇa* and *naya* to bring home this truth.

The view of *anekānta* is multi-faceted comprehending of all spheres of thoughts and living. In metaphysics it calls for non-absolutism and non-dogmatism, in epistemology it advocates *perspectivalism*, in logic it stands for symbiotic approach, in value theory it appreciates *situationalism*, in ethics and morality it puts forth spiritual orientation, in social, political and economic spheres it advances non-exploitative, compassionate, just and benevolent order, in the employment of science and technology it cares for sustainable development keeping in view environmental purity.

Implications of *Anekāntavāda*

Anekāntavāda as a basic plank of Jain view of Reality and life is the view of manifoldness and multitudinous experiences which provides a basis for peaceful co-existence, corporate living, cooperatives enterprises, mutual caring and sharing, judicious utilization of natural and human resources, interconnectedness of all existence and reciprocity. It advocates the sublime ideals of equality, fraternity, justice and non-violence. The Jain philosophy of inclusive pluralism, concomitance, concordance and coordination ensures adaptive flexibility and reconciliation of opposites that is very much needed these days. It is particularly helpful in intercultural dialogues, religious harmony, conflict resolution, social cohesion and peaceful living.

Anekāntavāda, with its corollary of *syādvāda*, provides for democracy in ideas and in living. It inculcates the spirit of peaceful co-existence, tolerance and mutual support. This alone can ensure universal peace, solidarity, friendship and harmony. It is a unique contribution of Jainism which is noble and sublime, deep and subtle. It is not very easy to understand it and to practice it. But if this can be achieved the world will be an ideal place to live in and to realize spiritual perfection.

Another significant implication of *anekāntavāda* is practice of health care through vegetarianism and environmental protection which are the dire needs of the day. This will be discussed later on also. Everything in the world is interrelated and interdependent (*parasparopagraha and parasparāsrita).* Everything has its unique existence and value. So nothing should be destroyed by the human being for his/her selfish ends. The Jain ethics not only regulates human conduct in relation to one's own self and in relation to other human beings but goes a step further to bring in human conduct in relation to all living beings and natural environment. Every existence has intrinsic worth and it must be given due respect. In case there happens some misconduct due to ignorance or negligence or even willfully there is a provision for forgiveness and repentance. Following the *śramaṇa* tradition Jainism advocates selfsameness (*samatva*) in all existence in spite of their inherent differences. It thus has the unique feature of synthesizing quantitative and qualitative monism and pluralism, monadic uniqueness and modal dependence. In fact *anekāntavāda* is impregnated with immense possibilities of drawing out newer and newer implications and corollaries for cosmic well-being. But this should not be mere intellectual exercise. It must involve programmatic action at the corporate level on a cosmic scale. This may not be easy but not impossible.

The view of *anekānta* is holistic and integral, comprehending local and global, individual and cosmic spheres. It is therefore necessary to know as to what are its prerequisites and presuppositions, premises and propositions, conclusions and implications. It has tremendous potentiality for a new world order, happy and harmonious, peaceful and prosperous. Delineation on its key concepts, fundamental ideas and seminal practices will help in appreciating the significance of this Jain contribution in the present age of globalization. In this respect our endeavor should be to dwell upon and highlight Jainism as "Applied/ Engaged Philosophy", a philosophy which is practice-oriented presenting a symbiosis of end-means-modality leading to authentic and purposeful living. The main focus should be on judicious and sustainable development and sustainable consumption which can ensure environmental purity and cosmic order.

Understanding of anekāntavāda leads to mutual complementarities, mutual co-operation, mutual trust, coexistence and above all to *ahimsā* which is the highest truth and highest virtue in Jainism. *Anekāntavāda* alone can lead to *ahimsā* and *ahimsā* in turn alone can guarantee peace, progress, prosperity and perfection in the world. *Ahimsā* can also be regarded as extension of *anekāntavāda.* It enjoins equal respect and mutual dependence of all existence. It is the highest virtue because it alone can lead to spiritual realization. *Anekānta* is at the level of thought and *ahimsā* is at the level of practice. The two are thus complimentary. There are two significant dimensions of *ahimsā*. One is to treat all existence, living as well as non-living as of equal worth. This gives rise to a conducive and healthy environmental consciousness. Nature is as valuable as our own existence and therefore Nature is to be respected. In Jainism we find both surface ecology of external environment and depth ecology of inner environment. It is the inner which affects the outer and must therefore first be attended to. The other dimension is treating all living beings as equal. This leads to vegetarianism.

Importance of *Ahimsā*

One of the most distinguishing features of Indian culture is advocacy of *ahimsā* (non-

violence) as supreme virtue for right mode of thinking and harmonious way of living. Among all the virtues it is regarded as the highest and most fundamental (*ahimsā paramo dharmaḥ'*). It is a dharma in all its three facets of being *dhāraka* (sustaining principle), *niyāmaka* (regulating principle) and *sādhaka* (life-enhancing principle) of all existence. The principle of *ahimsā* has been an integral part of Indian cultural ethos. Since India's remotest past it has been reiterated time and again by great seers and sages and enlightened people each one adding a specific flavor to it. In the multi-hued glittering tapestry of Indian culture the principle of *ahimsā* shines as the most dazzling studded star and all cultural traditions have accepted it as a foundational tenet. In Indian culture *ahimsā* is not a creed or dogma but an article of faith, a way of life and an item of living practice. It stands for a mental makeup of respecting all life and existence, protecting and caring for them and enhancing their nature. On the basis of the utterances of Acharyashri we can say that he has been an apostle of dharma and *ahimsā*. His exposition of these two concepts is innovative and enlightening.

Vegetarianism as diet par excellence

The contemporary life style has given rise to several such problems by which the whole humanity is under severe strain. Now it is being realized that without changing the life style it is difficult to get rid of those problems. The most important constituent of life style is food or diet. It has been commonly accepted that those who have a life style dominated by non-vegetarian food compared to them the life of vegetarians is healthier. A life style of taking beneficial and small quantity of pure food is preventive and curative means of many problems of health, and this has been proved by eminent medical scientists and nutritionists. Medical science has declared non-vegetarianism to be the greatest culprit for the rise of many dangerous physical diseases like cancer and many viral and epidemic physical ailments but this apart even in the context of emotional health it is made known in psychology that meat-eating is dominant cause in the increase of wicked emotions and infatuations. Those who know the principles of ecology and environmental science maintain that definitely non-vegetarianism is very dangerous to human. The usefulness of vegetarianism in comparison to non-vegetarianism can be proved on the basis of spirituality, religion and philosophy along with physiology, psychology, sociology, ecology and other branches of modern sciences. By echoing the voice of peaceful coexistence as **'Live and let live'** we have to plead for vegetarianism to live pure, healthy and inexpensive life and to give up non-vegetarianism and liberate the self.

Jain theory of Management

Samatva (equanimity) along with *śama* (self-control) and śrama, has led to two very important concepts of *asteya* (non-stealing) and *aparigraha (non-hoarding). Acharya Shri has discussed them in detail.. as per present day needs and requirements. Asteya* means not to deprive others from their legitimate belongings. Everyone is a part and parcel of this vast universe and everyone has to have its existence and sustenance in the world. It is the duty and obligation of each one to ensure that the existence and living of everyone is safeguarded and not endangered. We have only to satisfy our legitimate needs and should not cater to our greed. So the principle of *aparigraha* enjoins to stock only that much which we need. The principles of *asteya* and *aparigraha* guarantee intra-generational and inter-generational justice respectively. Equality and justice go hand in hand. They are the two pillars of Indian theory of management

along with two other pillars of *yoga* (supplementing and augmenting existing resources) and *kṣema (*protecting and not depleting existing resources). These four are the most desirable prerequisites of sustainable development and environment stewardship.

All social, economic and political organizations are established and aimed at this requirement. They serve human needs and requirements but are to be properly managed to serve the purposes for which they are established. For this the Jain theory of *puruṣārtha* provides broad guiding principles. There are two broad stages of human enterprises. They are production and thereafter distribution and consumption. The guiding principles of production are *kṣema* and *yoga. Kṣema* means to use the resources judiciously so that they are protected for further use and not depleted. Further, usability is natural and their depletion is unnatural. *Yoga* means augmentation of resources and generation of newer and newer resources. This is what is meant by sustainable development. Environmental stewardship and eco-friendliness is a part of this strategy. But real ecology is mental ecology as it is the mind which generates good or perverted human endeavour. A symbiosis of *śama* and *śrama* is called for here. This is professional ethics or ethics in production. It is an efficient management of end, means and modalities. After production comes distribution and use. For this the guiding principles are *asteya* and *aparigraha discussed earlier.* Fair and just distribution and legitimate use or enjoyment both are needed for intra-generational and inter-generational justice. The policy of corporate living, of caring and sharing, implies that we have to care for the present generation as well as for the future generations to come. But ultimately all human endeavours and enterprises should be a means to and directed towards the realization of cosmic well-being which is the *summum bonum* of life. It is a state of freedom in which infinitude of the self is restored.

One of the three facets of *Śramaṇa* tradition is *śama.* It means *samyama* which means limitations of wants, desires and possessions (*parigraha- parimāṇa* and *icchā-parimāṇa*), curb on unlimited cravings, unlimited accumulation and unlimited consumption. Acquisition of wealth is not bad, only attachment to it or its misuse is to be avoided. The guiding principle is, "Use that which is needful and give the surplus for charity". The doctrine of *aparigraha* advocates limited use of natural resources, non-violence and vegetarianism (*āhāraśuddheḥsattva-śuddḥi).*There has to be sustainable production and fair distribution. Everyone has equal right to share the natural resources and therefore there should be no deprivation. This implies intra-generational justice and fair play and also inter-generational justice and fair play. Acharyashri has highlighted the importance of *samyama* and denunciated *parigraha.*

Aparigraha stands for non-consumerist attitude wherein the policy is, there should be production only if needed and not first production and then arousal of needs as is the practice these days. The present day policy of advertisement and seduction should be stopped. True renunciation is a state of mind of a human being. It is not only renunciation of unnecessary material goods or consumerist mindset but also evil thoughts and feelings *(kaṣāyas*), rigid attitudes and wrong beliefs. Carelessness, selfishness, obstinacy and greed are the causes of violence. Their eradication requires cultivation of pious mind by *dhyāna* and practice of virtuous conduct by observation of vows, particularly of giving up something in the form of self-restraint.

(To be continue)

MP-23, Maurya Enclave, Pitampura, Delhi-110034

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 34
ISSN 2249-2011

शोधालेख

प्राकृत का हिन्दी को योगदान

डॉ. दिलीप धींग

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में हिन्दी का प्रमुख स्थान है। इसे लगभग डेढ़ हजार वर्ष पुरानी भाषा माना जाता है। भारत की बहुसंख्यक आबादी द्वारा हिन्दी बोली, लिखी, पढ़ी और समझी जाती है। देश के विभिन्न भागों की सम्पर्क भाषा और अन्य भारतीय भाषाओं की सखी होने के कारण हिन्दी में विभिन्न भाषाओं के शब्द भी सम्मिलित हो गये या कर लिये गये हैं। अपनी ग्रहणशीलता, उदारता, सरलता और विकासशीलता के कारण हिन्दी निरन्तर समृद्ध हुई और हो रही है।

प्राकृत का उत्तरवर्ती तथा हिन्दी का पूर्ववर्ती स्वरूप अपभ्रंश है। प्राकृत और हिन्दी का सम्बन्ध प्रत्यक्ष भी जुड़ता है और अपभ्रंश के माध्यम से भी जुड़ता है। काव्यालङ्कार के टीकाकार नमिसाधु ने प्राकृत को अपभ्रंश की संज्ञा दी है- प्राकृतमेवापभ्रंशः। हिन्दी के पूर्व रूप हमें संस्कृत, विभिन्न प्राकृत भाषाओं एवं अपभ्रंश में देखने को मिलते हैं। हिन्दी के आदिकाल के प्रथम और द्वितीय चरण को क्रमशः 'प्राकृत-युग' और 'अपभ्रंश-युग' कहा जा सकता है। वस्तुतः अपभ्रंश प्राकृत का ही एक रूप है। रामचन्द्र शुक्ल ने अपभ्रंश को पुरानी हिन्दी भी कहा है। हिन्दी में जिस प्रकार संस्कृत शब्दों की प्रचुरता है, उसी प्रकार प्राकृत के शब्दों की भी भरमार है। हिन्दी के पोषण में संस्कृत की तरह प्राकृत की भूमिका भी है। हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास को जानने के लिए संस्कृत भाषा और साहित्य की तरह प्राकृत भाषा, उसके व्याकरण, साहित्य एवं इतिहास का अध्ययन भी अवश्यक है।

जन-जन की बोली होने की वजह से प्राकृत अपना निरन्तर विकास करती रही। यह राष्ट्र के प्रत्येक भाग एवं उसके विकास से जुड़ी रही। प्राकृत के विकास के साथ-साथ प्राकृत साहित्य का विकास भी होता रहा। वर्तमान में उपलब्ध प्राकृत साहित्य अपने परिमाण, विषय और विषयवस्तु, हर दृष्टि से समृद्ध है। इसमें भारतीय वाङ्मय के सभी विषयों का साहित्य लिखा गया। धर्म, अध्यात्म, समाज एवं संस्कृति के अलावा आयुर्वेद, वास्तु, ज्योतिष, राजनीति, योगशास्त्र, व्याकरण, गणित, पुराण, चरित, कथा, काव्य आदि अनेक विषयों में लिखे ग्रन्थ प्राकृत में उपलब्ध होते हैं। इन सभी विषयों का हिन्दी साहित्य प्राकृत से गहराई तक प्रभावित रहा है।

समन्वय की प्रवृत्तियाँ

प्राकृत का आशय किसी जाति, स्थान या काल विशेष की भाषा से नहीं, अपितु विशाल भारतवर्ष के प्राणों में स्पन्दित होने वाली उन बोलियों के समूह से है, जो ईस्वी पूर्व लगभग आठवीं शताब्दी से लेकर ईसा की चौदहवीं शताब्दी तक यानी लगभग दो हजार वर्षों से भी अधिक काल तक भाषा के रूप में प्रतिष्ठित रहीं। समय और स्थान के अनुसार प्राकृत ने अपने आपको ढाल लिया, फलतः कुछ परिवर्तित विशेषताओं के साथ प्राकृत भाषाएँ अलग-अलग नामों से पहचानी जाने लगीं। जैसे- पालि, अर्द्धमागधी, मागधी, शौरसेनी, महाराष्ट्री, पैशाची आदि। कुछ भिन्नताओं के बावजूद प्राकृत की मौलिक विशेषताएँ और आन्तरिक समरूपताएँ कायम रहीं। इसलिए विभिन्न प्रकार की प्राकृत बोलियों और भाषाओं का समावेश 'प्राकृत' शब्द में कर लिया जाता है।

यह प्रवृत्ति आज हिन्दी में भी विद्यमान है। हिन्दी के लिखित रूप और मौखिक प्रयोग में क्षेत्र (प्रदेश, भूगोल), समुदाय, विषय और समय के अनुसार विभिन्नताएँ स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं। बड़े भूभाग की भाषा होने की वजह से हिन्दी में क्षेत्रीय विविधताएँ नज़र

आती हैं। हिन्दी के गठन और निर्माण में विभिन्न प्राकृतों तथा प्राकृत की प्रवृत्तियों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। यही वजह है कि वर्तमान में हिन्दी की अपनी अनेक बोलियाँ, मातृभाषाएँ, भाषिक तथा साहित्यिक रूप-स्वरूप हैं। इन सबके बावजूद हिन्दी एक है तथा हिन्दी की समरूपताएँ और विशेषताएँ पूरी तरह से कायम हैं।

प्राकृत में विभिन्न भाषाओं के साथ सन्तुलन और समन्वय की प्रवृत्तियाँ रहीं। प्राकृत ने भाषाओं को जोड़ा, लोगों को जोड़ा और देश को जोड़ा। हिन्दी सहित सभी भारतीय भाषाओं के विकास में प्राकृत का बुनियादी योगदान है। हिन्दी साहित्य की विभिन्न विधाओं को भी प्राकृत और अपभ्रंश के साहित्य ने पुष्ट और प्रभावित किया है। इससे सामाजिक समता और राष्ट्रीय एकता में प्राकृत का योगदान परिलक्षित होता है। प्राकृत की यह समन्वयप्रधान विरासत हिन्दी को भी मिली।

नवजागरण की भाषा

तीर्थंकर वर्धमान महावीर ने प्राकृत में देशनाएँ प्रदान कीं। उनका अनुकरण करते हुए महात्मा गौतम बुद्ध ने भी पालि-प्राकृत में उपदेश दिये। फलस्वरूप ढाई हजार वर्ष पूर्व प्राकृत भाषा सांस्कृतिक और आध्यात्मिक नवजागरण का सशक्त माध्यम बन गई थी। प्राकृत और संस्कृत के संस्कार लेकर निर्मित हिन्दी भाषा भी तेरहवीं सदी से लेकर आज तक सांस्कृतिक नवजागरण और राष्ट्रीय चेतना का माध्यम बनी हुई है। भक्तिकाल में पुरानी हिन्दी और नई हिन्दी ने पूरे देश को एक सूत्र में बाँधकर भारत को सांस्कृतिक और भावनात्मक रूप से सुगठित और समृद्ध किया। भक्ति साहित्य तथा सन्तों और कवियों की हिन्दी में प्रयुक्त विभिन्न प्राकृत शब्दों ने जनजीवन पर गहरा प्रभाव डाला। स्थानीय, आञ्चलिक, क्षेत्रीय, लौकिक और देशज भाषाओं तथा बोलियों में प्राकृत के प्रचुर शब्द एवं प्रवृत्तियाँ विद्यमान हैं।

शब्द विकास-यात्रा

प्राकृत-हिन्दी सम्बन्धों को जानने के लिए शब्दों के व्युत्पत्ति विज्ञान को जानना भी जरूरी है। भाषा शब्दों के द्वारा निर्मित होती है, इसलिए शब्द की विकास-यात्रा को जानना आवश्यक है। व्याकरण शब्दों का संस्कार करता है तो व्युत्पत्ति विज्ञान शब्दों के मूल स्वरूप या उद्गम के ज्ञान के लिए जरूरी है। शब्दों की व्युत्पत्ति का ज्ञान ऐतिहासिक भाषा-विज्ञान से सम्बन्धित है। किसी भी शब्द की वैज्ञानिक व्युत्पत्ति का निर्धारण उसके उद्भव काल तथा देश या क्षेत्र के साथ प्राप्त तथ्यों, पुरातन अर्थों आदि से होता है। उसके बाद शब्द की ध्वनियों में होने वाले परिवर्तनों और परिवर्तन-प्रक्रियाओं को समझना पड़ता है। व्युत्पत्ति उस मार्ग और प्रक्रिया के बारे में बताती है, जिसके माध्यम से शब्द अस्तित्व में आते हैं। देश-काल के साथ शब्द का आकार घटता और बढ़ता है एवं अर्थ परिवर्तित होता है, इसका अध्ययन व्युत्पत्ति-विज्ञान में किया जाता है।

प्राकृत भाषा के इतिहास तथा प्राकृत की प्रवृत्तियों को समझने से व्युत्पत्ति के नियमों को समझना आसान हो जाता है। मैक्समूलर ने ध्वनि-परिवर्तन के चार नियमों का निर्देश किया है-

1. एक ही शब्द उसी परिवार की भिन्न-भिन्न भाषाओं और बोलियों में नाना रूपों एवं अर्थों में दिखाई देता है।
2. एक ही शब्द एक ही और उसी भाषा में भिन्न-भिन्न रूपों और अर्थों में दिखाई देता है।
3. भिन्न-भिन्न शब्द नाना भाषाओं में एक ही रूप तथा अर्थ में दिखाई देते हैं।
4. एक और उसी भाषा के भिन्न-भिन्न शब्द एक ही रूप एवं अर्थ में प्रयुक्त होते हैं।

एक ही शब्द विविध परिवर्तनों से गुजरता हुआ तथा अनेक देशों/क्षेत्रों का परिभ्रमण करता हुआ सर्वत्र प्रसारित हो जाता है। शब्द अपने अर्थ और ध्वनि बदलते रहते हैं तथा यह परिवर्तन कभी-कभी इतना अधिक हो जाता है कि शब्द का मूल अस्तित्व भी नहीं रह पाता है। कभी-कभी उसका अर्थ तक विपरीत हो जाता है। शब्द तीन प्रकार के होते हैं-

(1) तत्सम-जिन शब्दों की ध्वनि और अर्थ

समान रहते हैं, वे तत्सम शब्द हैं। जैसे शब्द संस्कृत में हैं, वैसे ही अन्य भाषाओं में हैं अथवा उनमें मामूली परिवर्तन होता है तो वे तत्सम कहलाते हैं। हिन्दी में प्रयुक्त तत्सम शब्दावली का एक बड़ा भाग वह है जो प्राकृत से आया है।

(2) तद्भव–तद्भव शब्द वर्णलोप, वर्णागम, वर्ण-परिवर्तन तथा स्वरभक्ति से बनते हैं। जिनमें ध्वनिभेद उत्पन्न हो जाता है, लेकिन अर्थ में समानता रहती है, वे तद्भव शब्द हैं।

प्राय: संस्कृत-शब्द के समान रूप को तत्सम कहा जाता है, लेकिन प्राकृत वैयाकरणों के अनुसार प्राकृत और संस्कृत, दोनों के शब्द तत्सम माने जाने चाहिये। इसी प्रकार तद्भव का आशय संस्कृत से उत्पन्न नहीं होकर, वेदकालीन अथवा तत्कालीन प्राकृत से उत्पन्न होना चाहिये। हिन्दी के सन्दर्भ में जैसा शब्द प्राकृत में है, वैसा ही हिन्दी में प्रयुक्त करना हिन्दी के लिए तत्सम ही है। वैयाकरणों के अनुसार संस्कृत भी प्रथम स्तरीय प्राकृत से बनी है। जहाँ तक तद्भव की बात है, हिन्दी में तद्भव शब्दों का भण्डार है। यह शब्द-भण्डार प्राकृत से हिन्दी को मिला है। जैसे- संस्कृत के मौक्तिक का प्राकृत/अपभ्रंश में मोत्तिय और फिर हिन्दी में मोती। इसी प्रकार अक्षि का अक्खि और आँख, कपर्दिका का कवड्डिया और कौड़ी आदि। हिन्दी में प्रयुक्त तद्भव शब्दों के निर्माण में प्राकृत व्याकरण के नियमों और प्राकृत की प्रवृत्तियों का विशेष योगदान है।

(3) देशी (देश्य या देशज)–जो शब्द तत्सम और तद्भव की तरह संस्कृत शब्दों से नहीं बनते हैं, वे देशी शब्द कहलाते हैं। ये शब्द संस्कृत की किसी धातु या प्रत्यय से अथवा वर्णलोप, वर्णागम या वर्णपरिवर्तन से सिद्ध नहीं होते हैं। कुछ लोग देशज शब्दों को भी संस्कृत से जोड़ने का असफल प्रयास करते हैं।

देशी शब्द व्युत्पत्ति-सिद्ध नहीं होते हैं। ये शब्द क्षेत्र विशेष में प्रचलित रहते हैं। देशी भाषा नाम कभी प्राकृत को मिला तो कभी अपभ्रंश को। आञ्चलिक या स्थानीय भाषाएँ और बोलियाँ भी देशी कहलाती हैं। जैसे, अंगजनपद के भोजपुरी-भाषी इस जनपद की स्थानीय भाषा/बोली 'अंगिका' को 'देशी' कहते हैं। देशी या देशज शब्द देश-सापेक्ष के साथ-साथ काल-सापेक्ष भी होते हैं। देशी शब्दों का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण संग्रह है-आचार्य हेमचन्द्र की देशीनाममाला (रयणावलि अथवा रत्नावली)। यह संग्रह भाषाविज्ञान की दृष्टि से बेहद उपयोगी है। इसमें हेमचन्द्राचार्य ने अनादिकाल से प्रचलित प्राकृत भाषा को देशी कहा है। संस्कृत में भी ऐसे बहुत शब्द हैं, जो प्राकृत से आये और व्युत्पत्ति-सिद्ध नहीं हैं, वे सारे शब्द देशी हैं।

शब्दों की थाती

हिन्दी ने प्राकृत के अलावा अन्य अनेक भाषाओं से अपना शब्द भण्डार ग्रहण किया है। यह हिन्दी का सर्वसमावेशी चरित्र है, जो हिन्दी को प्राकृत से विरासत में मिला है। प्राकृत और हिन्दी के शब्द भण्डार में अनेक क्षेत्रों और संस्कृतियों के शब्द विद्यमान हैं। प्राकृत और हिन्दी में बुनियादी रिश्ता है। स्वभावत: यह रिश्ता बहुत गहरा, अटूट एवं अभिन्न है। प्राकृत का ज्ञान होने पर हिन्दी की विकास-यात्रा को आसानी से समझा जा सकता है। प्राकृत के हजारों शब्द ज्यों के त्यों अथवा थोड़े-बहुत परिवर्तन के साथ हिन्दी में प्रयुक्त किये जाते हैं।

उदाहरणार्थ प्राकृत के उडिदो का हिन्दी में उड़द, चाउल का चावल, अक्खाड का अखाड़ा, उक्खल का ओखली, किन्नर का किन्नर, चिडिय का चिड़िया, चरु का चरु, अजगर का अजगर, चारो का चारा, झमाल का झमेला, झंझटिया का झंझट, उल्लुट का उलटा, कक्कडी का ककड़ी, कोइला का कोयला, छल्लि का छाल, झाड का झाड़, दुआर का द्वार, रस्सी का रस्सी, पिआस का प्यास, संझा का साँझ, डाल का शाखा, उत्थल्ल-पत्थल्ल का उथल-पुथल, उव्वाओ का ऊबना, ओडड्ढण का ओढ़ना/ओढ़नी, खडक्की का खिड़की आदि।

ये तो कुछ उदाहरण मात्र हैं। मध्ययुगीन अनेक कवियों ने अपने हिन्दी काव्यों में प्राकृत के शब्दों का मुक्त रूप से प्रयोग किया है। ऐसा करके उन्होंने हिन्दी

की सम्प्रेषणीयता बढ़ाई। हिन्दी में प्राकृत के शब्द ही नहीं, अपितु बहुत सारी प्राकृत की क्रियाएँ भी ग्रहण की गई हैं। जैसे प्राकृत के उड्ड से हिन्दी में उड़ना, कुद्द से कूदना, कुट्ट से कूटना, खेल्ल से खेलना, खुद्द से खोदना, देक्ख से देखना, पिट्ट से पीटना, भिडइ से भिड़ना, बोल्ल से बोलना आदि। हिन्दी के शब्द-निर्माण में प्राकृत के प्रत्ययों का भी अद्भुत योगदान है। इसके अलावा हिन्दी में प्राकृत के नियमों से निर्मित शब्दों का अर्थात् तद्भव शब्दों का तो मानो भण्डार है। उन्हें देखकर यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि हिन्दी ने संस्कृत की बजाय प्राकृत से अधिक ग्रहण किया है।

हिन्दी की बिंदी

प्राकृत में शब्द, भाषा, संयुक्त व्यञ्जन आदि में अनेक प्रकार की सरलीकरण की प्रवृत्तियाँ पाई जाती हैं। प्राकृत की उदारता और सरलीकरण की प्रवृत्तियों को हिन्दी में व्यापक रूप से अपनाया गया है। हिन्दी की लोकप्रियता का एक मुख्य कारण हिन्दी का लिखने और बोलने में सरल होना है। यह सरलता प्राकृत से आई है। आज हिन्दी में हि पर जो बिंदी लगाई जाती है, वह प्राकृत की ही देन है। संस्कृतनिष्ठ हिन्दी के अनुसार तो 'हिन्दी' को हिन्दी लिखा जाना चाहिये। वस्तुत: प्राकृत ने हिन्दी भाषा के उच्चारण को ही सरल नहीं बनाया, अपितु भाषा के लिखित रूप को भी सरल बनाया है।

हिन्दी वर्णमाला में क से लेकर म तक के वर्ण पाँच-पाँच के समूह में होते हैं। जिन्हें क्रमश: कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग और पवर्ग कहा जाता है। इन वर्गों के आखिरी या पाँचवें वर्ण क्रमश: ङ, ञ, ण, न और म हैं। आचार्य हेमचन्द्रप्रणीत प्राकृत व्याकरण के सूत्र 1/25 (ङ-ञ-ण-नो व्यञ्जने) में प्रथम चार वर्गों के लिए बिंदी का विधान किया गया है। पवर्गीय व्यञ्जन से पूर्व हलंत 'म्' का अनुस्वार 'मोनुस्वार' (1/23) से होता है। इसमें पदांत हलंत 'म्' और अंत्य' 'म्' दोनों का अनुस्वार होता है।

जब 'हिन्दी' लिखा जाता है तो बिंदी (अनुस्वार) का प्रयोग किया जाता है। यही नियम त, थ, द और ध व्यञ्जन से पूर्व आधा (हलंत) 'न' होने की स्थिति में पूर्व व्यञ्जन या स्वर पर बिंदी लगाने के लिए लागू होता है। यही नियम अन्य वर्गों के व्यञ्जनों पर लागू होता है। जिन शब्दों में यदि ङ्, ञ्, ण् (ण), न् (न) और म् (म) के पश्चात् उसी वर्ग का व्यञ्जन हो तो पञ्चमाक्षर के स्थान पर पूर्व स्वर या व्यञ्जन पर बिंदी (अनुस्वार) की प्राप्ति हो जाती है।

संस्कृत के अनुसार बिंदी या अनुस्वार का प्रयोग केवल य, र, ल, व, श, ष, स और ह में से किसी के ठीक पहले किया जा सकता है। प्राकृत में ऐसा कठोर नियम नहीं है। कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग और पवर्ग का एक-एक शब्द क्रमश: उदाहरण के रूप लेते हैं-अंक, कंचन, घंटी, स्वतंत्र और अनुकंपा। यदि इन्हें संस्कृत के अनुसार लिखेंगे तो अङ्क, कञ्चन, घण्टी, स्वतन्त्र और अनुकम्पा लिखे जाएँगे। प्राय: हिन्दी में आधा न, आधा ण और आधा म तो प्रयुक्त किया जाता है, लेकिन आधे ङ (हलंत ङ्) और आधे ञ (हलंत ञ्) की स्थिति में पूर्व व्यञ्जन पर बिंदी (अनुस्वार) ही व्यापक रूप से प्रयुक्त होती है। संस्कृतनिष्ठ हिन्दी में भी प्राकृत का यह नियम प्रचलित है। बिंदी का प्रयोग करने के बावजूद उच्चारण वैसा ही किया जाता है, जैसा किया जाना चाहिये।

पंचमाक्षरों के अलावा, अनुनासिक यानी चंद्रबिंदु वाले शब्दों के साथ भी केवल बिंदी लगाकर हिन्दी के लिखित रूप को सरल बनाया गया है। डॉ. जगदीशचन्द्रजी जैन के अनुसार अपभ्रंश में अनुनासिक (चंद्रबिंदु) के स्थान पर भी अनुस्वार (बिंदी) की प्रवृत्ति रही है। अ, आ, उ और ऊ में तो विकल्प से चंद्रबिंदु लगाया भी जाता है लेकिन हिन्दी में इ, ई, ए, ऐ, ओ तथा औ मात्राओं के साथ अनुनासिक उच्चारण के बावजूद अनुस्वार ही लगाया जाता है। जैसे-'कहाँ' शब्द में तो चंद्रबिंदु लगा दिया जाता है, लेकिन अनुनासिक होने के बावजूद 'कहीं' में चंद्रबिंदु नहीं लगाकर केवल बिंदी का प्रयोग किया जाता है।

बिंदी वाली प्राकृत की ये प्रवृत्तियाँ अत्यन्त

सुविधाजनक और सर्वप्रचलित हैं। वर्तमान की मानक हिन्दी ने बिंदी को अपना लिया गया है। बिंदी वाली हिन्दी के प्रयोग एवं प्रचार में हिन्दी मीडिया की बड़ी भूमिका है। आज हिन्दी में मुक्त रूप से पंचम अक्षरों एवं चंद्रबिंदु के स्थान पर बिंदी का प्रयोग किया जा रहा है। लेकिन प्राकृत में यह प्रयोग हजारों वर्षों से विद्यमान है। बिंदी के प्रयोग से टंकण, मुद्रण, लेखन आदि में बड़ी सुविधा हो गई है। साथ ही बिंदी सुंदर भी लगती है।

अनेक प्रवृत्तियाँ

मानक हिन्दी और मीडिया में भले ही बिंदी (अनुस्वार) को अपनाया गया है, लेकिन पंचमाक्षरों का प्रयोग भी होता है। विशेष रूप से आधा ण, न और म का प्रयोग भी किया जाता है। यही बात चन्द्र बिंदु के बारे में भी है। 'बहुलम्' सूत्र के अनुसार प्राकृत में लचीलापन है। अनेक शब्दों के एकाधिक रूप भी मान्य हैं। किसी नियम की कहीं प्रवृत्ति होती है तो कहीं अप्रवृत्ति होती है तो कहीं वैकल्पिक प्रवृत्ति भी होती है। यह बात हिन्दी पर भी लागू होती है। हिन्दी में प्राकृत की अनेक प्रवृत्तियाँ स्वीकार की गई हैं। जैसे संस्कृत में तीन वचन होते हैं, लेकिन प्राकृत में दो वचन ही होते हैं। हिन्दी में भी दो वचन ही होते हैं। दो वचन होने से अभिव्यक्ति अपेक्षाकृत अधिक सुविधाजनक और सरलतर होती है। प्राकृत में व्यञ्जनान्त शब्द नहीं होते हैं। वर्तमान की मानक हिन्दी में भी अनेक व्यञ्जनान्त शब्दों को स्वरान्त ही लिखा और बोला जाता है। जैसे- श्रीमान, भगवान, विद्वान, धनवान आदि।

हिन्दी में अंकों और संख्याओं के उच्चारण प्राकृत के कारण से ही सरल एवं सुविधाजनक हैं। हिन्दी में तिथियों के उच्चारण भी प्राकृतमय हैं। जैसे- जमरा बीज, भाई दूज, आखा तीज, करवा चौथ, मौन ग्यारस, वच्छ बारस, धन तेरस, रूप चौदस इत्यादि। कई बार बोलचाल में प्राकृत रूप अधिक व्यवहार में आते हैं और लिखित रूप संस्कृतनिष्ठ देखे जाते हैं। प्राकृत और अपभ्रंश के अनेक उपसर्ग और प्रत्यय हिन्दी में यथावत् अथवा कुछ परिवर्तन के साथ प्रयोग किये जाते हैं। सरलीकरण की प्रवृत्तियाँ अपनाने से हिन्दी सरल, सुबोध और सुगम हो गई तथा जन-जन की भाषा बन गई। भाषा की उदारता से संस्कृति की सुरक्षा भी होती है। प्राकृत भाषा इस क्षेत्र में अग्रणी रही। उसका प्रभाव आज भी हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में देखा जाता है। भाषिक दृष्टि से हिन्दी में प्राकृत की परम्पराएँ संस्कृत की तुलना में कहीं अधिक सुरक्षित हैं।

लोकाश्रित भाषा

प्राकृत लोकजीवन की भाषा रही। प्राकृत की अनगिनत लोकोक्तियाँ और मुहावरे आज हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं। हजारों लोक प्रचलित शब्द प्राकृत से सीधे ही या अपभ्रंश में होते हुए वर्तमान रूप में आये हैं। प्राकृत ने हिन्दी के लोक-साहित्य को समृद्ध किया है। प्राकृत के फलस्वरूप हिन्दी में भी लोकभाषा, लोक-संस्कृति और ग्रामीण व्यवस्था का गहरा पुट एवं वर्चस्व है। प्राकृत के कारण हिन्दी भी सन्तों और जनसाधारण की भाषा बन सकी। लोकजीवन से जुड़ी होने के कारण प्राकृत की तरह हिन्दी के सम्बन्धपरक शब्दों में आत्मीयता एवं सम्मान का पुट है।

आदिकालीन हिन्दी काव्य को विषयवस्तु की दृष्टि से तीन वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है। ये वर्ग हैं-लोकाश्रित काव्य, धर्माश्रित काव्य और राज्याश्रित काव्य। तीनों ही वर्ग प्राकृत काव्य साहित्य से प्रेरित और प्रभावित हैं। लोकाश्रित काव्य में ढोला मारू का दूहा, खुसरों की पहेलियाँ, प्राकृत पैंगलम् आदि कृतियाँ प्रमुख हैं। प्राकृत पैंगलम् में पुरानी हिन्दी के आदिकालीन कवियों द्वारा प्रयुक्त वर्णिक तथा मात्रिक छन्दों का विवेचन किया गया है। पुरानी हिन्दी के मुक्तक पद्यों की दृष्टि से इस ग्रन्थ का अत्यधिक महत्त्व है। मध्ययुगीन हिन्दी छन्द शास्त्रियों ने इस ग्रन्थ की छन्द परम्परा का पूरा अनुकरण किया है। इस प्रकार लोकाश्रित प्राकृत कृतियों में लोक हृदय की कोमल भावनाएँ भक्ति, शृङ्गार, नीति, मनोरञ्जन, सामाजिक चेतना के महत्त्वपूर्ण वर्णन मिलते हैं।

भावानुकूल भाषा शैली, वैविध्यपूर्ण छन्द

विधान, उपमा-विधान, प्रभावशाली बिम्ब विधान, चामत्कारिक आलंकारिक प्रतीक योजना, अपूर्व कल्पना सौन्दर्य आदि अनेक दृष्टियों से हिन्दी काव्य के विकास में प्राकृत काव्य का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

काव्य की भाँति अनेक प्राकृत कथा ग्रन्थों, चरित ग्रन्थों और उपदेशपरक ग्रन्थों की साहित्यिक प्रवृत्तियों का हिन्दी में अनुकरण किया गया है। प्राकृत का प्रयोग तीर्थंकर महावीर और महात्मा बुद्ध ने उनके उपदेशों में किया, इसलिए यह भाषा श्रद्धा की भाषा बन गई। श्रद्धा की भाषा एवं सम्माननीय भाषा होने के कारण प्राकृत और पालि के ग्रन्थों का हिन्दी में विपुल अनुवाद, अनुशीलन और विवेचन हुआ और होता है। अनुवाद एवं विवेचन के साथ ही प्राकृत भाषा की प्रवृत्तियाँ भी हिन्दी में सहज रूप से आई और आ रही हैं।

विगत डेढ़ हजार वर्षों में हिन्दी साहित्य का जो सुविशाल प्रासाद निर्मित हुआ है, आदिकाल उसकी सुदृढ़ नींव है, जिसमें प्राकृत भाषा के भी अनेक तत्त्व विद्यमान हैं। उसकी विषयवस्तु, भाव-व्यञ्जना, दर्शन एवं शिल्प-संरचना प्राकृत भाषा और साहित्य से प्रेरित तथा प्रभावित है। अपनी अनेक विशेषताओं के कारण वर्तमान में हिन्दी भारत ही नहीं, दुनिया की प्रमुख लोकप्रिय भाषाओं में शुमार है।

हिन्दी की लोकप्रियता और समृद्धि में प्राकृत का बुनियादी, बहुआयामी और बहुत बड़ा योगदान होने के बावजूद जहाँ कहीं हिन्दी की चर्चा होती है तो उसे सिर्फ संस्कृत से जोड़कर ही देखा जाता है। उसे संस्कृत-सुता यानी संस्कृत की पुत्री कहा जाता है। शायद इस आग्रह के कारण तकनीकी और वैज्ञानिक शब्दावली में प्राकृत और क्षेत्रीय भाषाओं की उपेक्षा हुई। अनेक संस्कृतनिष्ठ क्लिष्ट तकनीकी/वैज्ञानिक शब्द बनाए गए, जिससे हिन्दी का विस्तार रुका। इससे विज्ञान, तकनीक और अर्थशास्त्र जैसे विषयों में हिन्दी का प्रयोग कम हो गया। हिन्दी के जरिये रोजगार के अवसरों में कमी आई। हिन्दी के पिछड़ने का एक कारण प्राकृत की उपेक्षा भी है। वास्तव में हिन्दी प्राकृत और संस्कृत दोनों की बेटी है।

प्राकृत और संस्कृत की बेटी है हिन्दी,
भाषाओं में एवरेस्ट की चोटी है हिन्दी।
आन, बान और शान भारतवर्ष की,
कहीं आस्था तो कहीं रोटी है हिन्दी।।

हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास में प्राकृत के योगदान का भी यथेष्ट मूल्यांकन किया जाना चाहिये। हिन्दी के साथ ही अन्य भारतीय भाषाओं के उद्भव और विकास में प्राकृत के योगदान की चर्चा होनी चाहिये। इस मूल्यांकन के लिए प्राकृत और हिन्दी एवं प्राकृत और विभिन्न भारतीय भाषाओं पर स्वतन्त्र तुलनात्मक अध्ययन अनुशीलन किया जाना चाहिये। इस प्रकार के तुलनात्मक और गवेषणात्मक अध्ययन से हिन्दी का अन्य भारतीय भाषाओं के बीच जो बुनियादी रिश्ता है, वह उजागर होगा। इससे भारतीय भाषाओं के बीच सौहार्द बढ़ेगा तथा हिन्दी और अधिक मजबूत एवं व्यापक बनेगी।

18 भाषाएँ बोलने वाली भारतमाता

प्राकृत देश के बड़े भूभाग की जनबोली थी, जनभाषा थी। इसलिए उसकी क्षेत्रीय विविधताएँ बहुत थीं। भगवान महावीर के युग में अनेक प्रकार की लघुभाषाएँ प्रचलित थीं। जैन आगमों में प्रदेश के आधार पर उनका प्रधान वर्गीकरण 18 भाषाओं और लिपियों में किया गया है। ज्ञाताधर्मकथांग में मगध सम्राट् श्रेणिक के पुत्र मेघकुमार को 18 प्रकार की देशी भाषाओं में प्रवीण बताया गया है। औपपातिकसूत्र, विपाकसूत्र, राजप्रश्नीयसूत्र और तिलोयपण्णत्ति में भी 18 भाषाओं के सन्दर्भ आए हैं। प्रज्ञापनासूत्र में अर्द्धमागधी के लेख विधान को 18 प्रकार का बताया गया है। जिनदासगणि महत्तर (सातवीं सदी) ने निशीथ चूर्णि में अर्द्धमागधी भाषा का 'अट्ठारसदेसीभासानिययं वा अद्धमागहं'' यह वैकल्पिक लक्षण किया है। उद्योतनसूरि (आठवीं सदी) द्वारा रचित ग्रन्थ कुवलयमालाकहा में भी 18 देशी भाषाओं का उल्लेख मिलता है। इससे यह सिद्ध होता है कि भगवान महावीर के युग में एवं उसके बाद कई सदियों तक 18 प्रकार की भाषाएँ प्रचलित रहीं।

जब भाषाएँ होती हैं तो भाषाओं को अभिव्यक्त करने के लिए लिपियों का अस्तित्व भी अनिवार्य है। चतुर्थ अंग आगम समवायाङ्गसूत्र में ब्राह्मीलिपि के लेखविधान को अठारह प्रकार का बताया गया है। जैन मतानुसार प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ भगवान ऋषभदेव ने अपनी ज्येष्ठ पुत्री ब्राह्मी को दाहिने हाथ से जो लिपि सिखाई, उसे ब्राह्मी लिपि के नाम से जाना जाता है। समय, स्थान और विषय के अनुसार उनके 18 रूप और नाम हो गये। उन्हीं लिपियों में तत्कालीन भारतवर्ष की अठारह मुख्य भाषाओं को अभिव्यक्ति मिली। प्राकृत ग्रन्थों में भाषा और लिपि की अठारह संख्या महत्त्वपूर्ण है। इसी आधार पर दक्षिण भारत के महाकवि सुब्रह्मण्य भारती ने भारतमाता को अठारह भाषाएँ बोलने वाली कहा था।

द्राविड़ भाषाएँ, प्राकृत एवं हिन्दी

उल्लेखनीय है कि इन अठारह लिपियों में तामिली या द्राविड़ी लिपि का भी उल्लेख है। यह तथ्य है कि तमिल भाषा और साहित्य के संवर्धन में जैन विद्वानों का बुनियादी, गौरवपूर्ण एवं विपुल योगदान रहा है। जिन विद्वानों का योगदान रहा, वे प्राकृत के भी जानकार रहे थे। अत: प्राकृत का तमिल भाषा पर प्रभाव स्वाभाविक है। प्राकृत का सम्बन्ध ब्राह्मी लिपि से भी है। जिस प्रकार प्राकृत भाषा के अनेक शिलालेख ब्राह्मी लिपि में मिलते हैं, उसी प्रकार तमिल भाषा के अनेक शिलालेख भी ब्राह्मी लिपि में मिलते हैं। ये सन्दर्भ प्राकृत, तमिल और द्रविड़ भाषाओं तथा ब्राह्मी लिपि के अन्त:सम्बन्धों को रेखांकित करते हैं। ये सन्दर्भ हिन्दी और द्राविड़ भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन का मार्ग प्रशस्त करते हैं। इन सन्दर्भों की एक निष्पत्ति यह भी है कि प्राकृत का ब्राह्मी लिपि के जरिये आधुनिक बहुप्रचलित देवनागरी लिपि के विकास में भी बुनियादी योगदान है। हिन्दी के अलावा भारत की अनेक भाषाएँ तथा नेपाली भाषा भी देवनागरी लिपि में लिखी जाती हैं।

जब मैंने 'तमिल-प्राकृत : सम्बन्ध और प्रभाव' विषय पर निबन्ध लिखा था। 'जिनवाणी' में उस निबन्ध को पढ़कर राष्ट्रपति सम्मान से सम्मानित वरिष्ठ प्राकृत मनीषी डॉ. कमलचन्दजी सोगानी ने बहुत प्रसन्नता व्यक्त की और कहा कि प्राकृत दक्षिणी भाषाओं से जुड़ती है तो स्वभावत: हिन्दी भी जुड़ती है। यहाँ यह स्पष्ट करना ठीक रहेगा कि द्राविड़ भाषा परिवार की चार भाषाएँ हैं- तमिल, कन्नड़, तेलुगू और मलयालम। इनमें तमिल प्रथम और प्रधान भाषा है। प्राकृत का किसी न किसी रूप में चारों भाषाओं से सम्बन्ध रहा है। प्राकृत के जरिये यही सम्बन्ध हिन्दी से भी जुड़ता है।

वस्तुत: प्राकृत के अध्ययन, अध्यापन और अनुसन्धान से हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं के बीच सौहार्द को बढ़ाया जा सकता है; चाहे वे भारतीय भाषाएँ आर्य भाषा परिवार की हों या द्राविड़ भाषा परिवार की। प्राकृत भाषा के अध्ययन-अध्यापन और अनुसन्धान के साथ हिन्दी और भारतीय भाषाओं का विकास जुड़ा हुआ है। हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं के साथ प्राकृत के सम्बन्ध पर शोधकार्यों को बढ़ावा देना समय की आवश्यकता है। इससे भारत की भाषायी समरूपता और सांस्कृतिक समरसता को तथ्यों के साथ परिपुष्ट किया जा सकता है।

सन्दर्भ पुस्तकें

1. हेमचंद्राचार्य रचित प्राकृत व्याकरण (उपाध्याय प्यारचन्दजी महाराज की व्याख्या युक्त)
2. प्राकृत साहित्य का इतिहास, डॉ. जगदीशचन्द्र जैन
3. पाइअसद्दमहण्णवो, पण्डित हरगोविन्ददास त्रिकमचन्द सेठ
4. अपभ्रंश भारती (अक्टूबर 1997-1998) में प्रकाशित डॉ. प्रतिभा राजहंस का लेख 'हिन्दी के औपम्य विधान पर प्राकृत का प्रभाव।'
5. द्रष्टव्य, जिनवाणी (अक्टूबर 2019) में प्रकाशित डॉ. दिलीप धींग का निबन्ध 'प्राकृत-तमिल : सम्बन्ध और प्रभाव।'
6. द्रष्टव्य, प्राकृतविद्या (जुलाई-सितम्बर 2018) में प्रकाशित डॉ. दिलीप धींग का निबन्ध 'प्राकृत के शिलालेख व उनके सन्देश।'
7. द्रष्टव्य, प्राकृतविद्या (जनवरी-मार्च 2022) एवं नागरी संगम (अप्रेल-जून 2022) में डॉ. दिलीप धींग का निबन्ध 'अठारह भाषाएँ बोलने वाला भारत।'

-शोधप्रमुख : जैनविद्या विभाग, शासुन जैन कॉलेज, 7, अय्या मुदली स्ट्रीट, साहुकारपेट, चेन्नई-600001

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 41
ISSN 2249-2011

शोधालेख

'तित्थयरभावणा' में तत्त्वविचार एवं नयसमीक्षा

ब्र. चन्द्रप्रभा जैन

मुनिश्री प्रणम्यसागरजी की प्राकृत भाषा में रचित एक महत्त्वपूर्ण कृति है-तित्थयरभावणा। इस ग्रन्थ में तीर्थङ्कर नामकर्म के उपार्जन की सोलह कारण भावनाओं का सुन्दर निरूपण हुआ है। इस मानव-मन के लक्ष्य को लक्षित स्थान तक ले जाने वाली उसकी सोच, उसकी भावना, उसकी मनोदशा, उसका तत्त्व-निर्णय ही महत्त्वपूर्ण होता है। भावना भववर्धिनी है तो भावना भवनाशिनी भी है, जिसमें प्रमुख कारण मानवीय सोच-चिन्तन-मनन ही है जिसको शास्त्रीय भाषा में 'भावना' कहा है। चार कषाय (क्रोध, मान, माया, लोभ) के वशीभूत होकर जीव ने पञ्च पाप की क्रियाओं को चार संज्ञाओं-इच्छाओं[1] (आहार, भय, मैथुन और परिग्रह) की पूर्ति में निरन्तर अपनी भावना करके अनादि सांसारिक परम्परा का संवर्द्धन किया है।

मुनिवर प्रणम्य सागरजी कहते हैं कि ऐसी भावना भाओ जिससे भव का अभाव हो। भावना से गुणवत्ता आती है। पाषाण को भगवान बनाने की शक्ति भावना से प्रस्फुटित होती है। आत्मविशुद्धि में सहायक तीर्थंकर प्रकृति की बन्धकारक भावनाओं को विशुद्धि के साथ भाओ। मन्त्र में शक्ति भी भावना से ही आती है। भावना से सार तत्त्व की अनुभूति होती है। यह मन को शान्त और शक्तिमान बनाती है। प्रत्येक आत्मा में बुरी आदतें स्वभावत: बनी हुई हैं, उन आदतों को बदलना इसी से सम्भव है। मनुष्य के शुभ विचारों और भावनाओं से चारित्र सम्यक् बनता है अथवा जिसका चारित्र दृढ़ और स्वच्छ है निश्चय ही उसके विचार उच्च होते हैं। किसी ने सत्य कहा-''हमारे विचार क्रिया में आते हैं, क्रियाएँ आदत बन जाती हैं और आदतें ही चारित्र बनाती हैं।''[2] अत: भावनाओं से ही सफलता एवं असफलता का सही कारण ज्ञात होता है।[3]

मुनिश्री ने जीवन में चहुँमुखी विकास के लिए कुछ आवश्यक घटक बताये हैं-परिणामों की निर्मलता, दृष्टि की समीचीनता, सटीक ज्ञान-प्राप्ति की अनवरत भावना, विनम्रता, व्रत-शील-संयम-सदाचार की शुद्धता, अपने दैनिक और आत्मिक आवश्यक कर्म की नियमितता, पवित्रता के साथ कार्य करना, पाप-भाव से भयभीत होकर संवेग अर्थात् समीचीन आवेगों की वृद्धि करना। प्रशम, संवेग, अनुकम्पा, आस्तिक्य आदि प्रशस्त गुणों की अभिवृद्धि करना, पञ्चेन्द्रिय विषयों को संकुचित करना, कषाय-भाव का अभाव करने हेतु शक्ति अनुसार त्याग करना, शक्ति को पहचानने हेतु शक्ति को नहीं छुपाते हुए यथाशक्ति तप करना, आत्मशान्ति हेतु साधु-समाधि में तत्पर रहना। सभी पूज्य पुरुषों की यथायोग्य वैयावृत्य करना। अरहंत, बहुश्रुत और प्रवचन की भक्ति में सदा तत्पर रहना। अपने आवश्यक कर्त्तव्यों में आलस्य का परिहार करना। सत्य सन्मार्ग की सदा विशेष प्रभावना करना। अभीक्ष्ण ज्ञान में उपयोग लगाकर प्रवचन के प्रति वात्सल्य रखना। इस प्रकार परिणामों की निर्मलता, पवित्रता हेतु इन सहयोगी साधनों को जीवन-उत्थान का माध्यम बनाकर प्रयोग में लेना अनिवार्य है। इसे ही पूज्यवर तित्थयर-भावणा कहते हैं।

तित्थयरभावणा में तत्त्व विचार[4]

अनादिकाल से मतिविभ्रम रोग के वशीभूत होकर यह आत्मा जीवादिक तत्त्वों के वास्तविक स्वरूप का आकलन नहीं करके विपरीत अवधारणा के साथ जीवनयापन कर रहा है। संसार-भ्रमण की प्रक्रिया का संवर्द्धन कर रहा है। किस प्रकार यह प्राणी तत्त्वों के प्रति विपरीत श्रद्धान बनाता है, इसे जानना अपेक्षित है।

मुनिप्रवर कहते हैं कि देखने-जानने का स्वभाव ही आत्मा का तत्त्व है। आत्मा ने स्वयं आत्मा को ज्ञाता-द्रष्टा नहीं माना और न ही जाना। आत्मा अत्यन्त सूक्ष्म, अदृश्य होने के कारण अपने शरीर को ही आत्मा (जीव) मानता रहा। अपने शरीरगत सुख-दुःख में हर्ष-विषाद करता रहा। राजा-रंक, गरीब-अमीर, मोटा-पतला, कुरूप-सुरूप और संयोगजन्य बाह्य परिणमन को अपना आत्मा मानना ही इस जीव तत्त्व की अनादिकालीन भूल है। आत्मा पुद्गल आदि द्रव्यों से भिन्न पदार्थ है। इस आत्मतत्त्व की सत्ता अनादिकाल से है। इस पर ज्ञानपूर्वक श्रद्धान करने से ही मतिविभ्रम रोग से छुटकारा मिल सकता है। जिसने जीवतत्त्व का यथार्थ श्रद्धान किया है वह भी जीव कथञ्चित् शरीर, पुत्र, स्त्री आदि को अपना कहता है, किन्तु उसके ज्ञान में इन शरीर आदि में एकरूपता नहीं रहती है। जो ज्ञान प्रमाण-नयों से आत्मा को जाने वह सम्यग्ज्ञान (सही ज्ञान) है। जो ज्ञान प्रमाण-नय के बिना आत्मा को जानता है, वह मिथ्याज्ञान (गलत ज्ञान) है। सम्यग्दृष्टि जीव के पास सम्यग्ज्ञान है और मिथ्यादृष्टि जीव के पास मिथ्याज्ञान है।

सम्यग्दृष्टि जीव इन शरीर आदि को जब अपना कहता है तो व्यवहार नय की अपेक्षा से कहता है। निश्चय नय से तो ज्ञान-दर्शन स्वभाव वाला आत्मा ही मैं हूँ, ऐसा श्रद्धान करता है। इस प्रकार नय ज्ञान से जीव-आत्मा को जानना चाहिए। यह माता-पिता, भाई-बहिन मेरे व्यवहार से हैं निश्चय से आत्मा का कोई माता-पिता, भाई-बहिन नहीं है। निश्चय से मेरा आत्मा इन सम्बन्धों से अलग है। यह सारे सम्बन्ध पृथक्-पृथक् आत्मा में घटित होते हैं। अतः वह भी वास्तविक रूप से (निश्चय से) जीव तत्त्व ही है। घर, परिवार, कार, व्यापार सब व्यवहार से मेरे हैं। निश्चय से तो ज्ञान-दर्शन स्वभाव वाला आत्मा ही मेरा है। इस तरह बुद्धि में निरन्तर अभ्यास करने से मोहकर्म का उपशमन होकर यथार्थ श्रद्धान उत्पन्न होगा।

तत्त्व भावना करनी चाहिए कि इस शरीर में मेरा आत्मा रह रहा है, किन्तु यह शरीर मेरा आत्मा नहीं है। शरीर मिट जाने पर भी मेरा आत्मा तो सदैव ज्ञान-दर्शन स्वभावमय रहेगा। शरीर आत्मा रूप नहीं है। इसी तरह अन्य स्त्री, पुत्र आदि के शरीर भी उनका आत्मा नहीं है। शरीर आदि पर-पदार्थ अजीव तत्त्व हैं, जड़ हैं, इनको तूने आत्मा माना है, इसलिए अपने पत्नी-पुत्र आदि आत्मीय जन के मर जाने पर स्वयं विक्षिप्त हो जाता है। पर-पदार्थों में आत्मपन होने के कारण दुकान, मकान पर आग लग जाने पर पागल-सा हो जाना अजीव तत्त्व के प्रति विपरीत श्रद्धान का ही प्रभाव है।

राग, द्वेष, क्रोध, मान, माया, लोभ, काम, मात्सर्य आदि भावों से आत्मा में संसार बढ़ाने वाले कर्म का निरन्तर आस्रव होता है। अज्ञानी जन इन्हीं को अच्छा समझकर करता रहता है। राग करने पर उसे अच्छा लगा, परन्तु वियोग होने पर उसे दुःख का वेदन हुआ। क्रोध करते समय अपने को दूसरे का सुधारक, ज्ञानी और शक्तिशाली माना तथा समझा, जिससे अहंकार आदि विकारी भावों की उत्पत्ति हुई। अतः आस्रव कर्मद्वार का आमन्त्रण केन्द्र जानकर अपनी आत्म-सुरक्षा का उपाय करते हुए आस्रव के विपरीत श्रद्धान को छोड़कर यह चिन्तन करें कि आत्मा तो शान्त, सुख, आनन्द और क्षमा स्वभाव वाला निर्विकार है। क्रोध आदि विकार हैं। यही आस्रव तत्त्व का यथार्थ श्रद्धान है।

हे निर्बन्ध आत्मन् ! तू सर्व प्रकार के बन्धन से रहित होने की शक्ति रखता है, परन्तु अज्ञानवश अनादि से घर-स्त्री-पुत्र-परिवार आदि को बन्धन नहीं माना और जो तेरी मुक्तिसुख के कारणभूत थे ऐसे शास्त्र और गुरु को तूने बन्धन माना। अशुभ-शुभ बन्ध के कारणों को न जानकर शास्त्र और गुरु से अधिक महत्त्व उपन्यास, टी .वी के नाटक, काल्पनिक कथाओं तथा क्रिकेट और सिनेमा को अच्छा माना। अतः अपनी रुचि को परिवर्तित करके बन्ध तत्त्व का यथार्थ श्रद्धान कर।

हे आत्मन! तूने अनादि से संवर के कारणभूत

व्रत, समिति, वैराग्य, परीषह सहन तथा ज्ञानभावना के अभ्यास को अहितकर माना जो तेरी विपरीत मान्यता थी। संवर संयम से होगा, कर्मों का रुकना वैराग्य-ज्ञान से ही होगा, ऐसी अवधारणा बनाने वाले के निश्चित ही संवर तत्त्व का यथार्थ श्रद्धान सिद्ध होगा।

प्रणम्यसागरजी तत्त्वदृष्टि देते हुए कहते हैं कि निर्जरा तत्त्व के प्रति विपरीत अवधारणा बैठी है, उसको भीतर से निकालना होगा और विचारना होगा कि आत्मा में बैठे कर्मों की निर्जरा सम्यग्ज्ञानपूर्वक तप से ही होती है। इन्द्रियों के विषयों से दूर होकर, अनेक प्रकार के सम्यक् तप को अपनी शक्तिप्रमाण पालन करने से ही कर्मों की निर्जरा होती है। काललब्धि आने की प्रतीक्षा नहीं करनी होती है। राजवार्तिक में भी कहा है- **कालानियमाच्च निर्जराया:।**[5] संसारी प्राणी को काल (समय) की प्रतीक्षा करते नहीं बैठना है।

इस संसार में प्रत्येक प्राणी सुख की खोज में निकला है। परन्तु उसका सुख आकुलता सहित इन्द्रियजनित विषय सुख ही है, जिसके मिलने पर आकुलता का अनुभव होता है। वह उसी को सुख मानकर जीवनयापन कर रहा है, यही उसकी अनादि की भूल है। जबकि उसका शाश्वत सुख तो निराकुलता से सहित होना चाहिए और वह निराकुल आत्मसुख की भावना मोक्ष में है। तब जाकर मोक्षतत्त्व के प्रति यथार्थ श्रद्धान बन सकेगा।[6]

संसार-भ्रमण के महाद्वार-पहला महाद्वार मिथ्यात्व है। उसके भी पाँच उपद्वार हैं-एकान्त मिथ्यात्व, अज्ञान मिथ्यात्व, वैनयिक मिथ्यात्व, संशय मिथ्यात्व और विपरीत मिथ्यात्व। दूसरा महाद्वार कषाय है। जिसके पच्चीस उपद्वार हैं-अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ। अप्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया, लोभ। प्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया, लोभ। संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ। हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पुरुषवेद, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद। तीसरा महाद्वार अविरति है। जिसके बारह उपद्वार हैं-छह प्रकार का प्राणी असंयम, छह प्रकार का इन्द्रिय असंयम। चौथा महाद्वार योग है। जिसके पन्द्रह उपद्वार हैं-चार मनोयोग, चार वचनयोग और सात काययोग हैं।

ये सभी सत्तावन आस्रव के भेद हैं। आस्रव तत्त्व के इन कारणों से ही बन्ध होता है। वह बन्ध प्रकृति, प्रदेश, स्थिति, अनुभाग के उपभेद से चार प्रकार का है। इन आस्रव और बन्ध को रोकने का कार्य संवर के द्वारा होता है। आस्रव की तरह ही संवर के भी सत्तावन भेद हैं। पाँच महाव्रत, पाँच समिति, तीन गुप्ति, बारह भावना, दस यति धर्म और बावीस परीषह से आस्रव के सभी द्वार रुक जाते हैं। संवर होने पर कर्म की निर्जरा मोक्ष मार्ग में उपयोगी होती है। इस संवरपूर्वक निर्जरा की निरन्तरता बनी रहने से मोक्ष तत्त्व उद्घाटित होता है। मोक्ष ही शुद्ध जीव तत्त्व की उपलब्धि है। इसलिए सम्पूर्ण रूप से उपादेय जीव तत्त्व ही है।[7]

तित्थयरभावणा में नय-समीक्षा[8]

मुनिवर प्रणम्यसागरजी महाराज ने एक नई दिशा प्रदान की। 'विणय-भावणा' के अन्तर्गत स्पष्ट किया कि विनयवान व्यक्ति ही नय का परिज्ञान रखता है। सच्चा विनय नय-ज्ञान से आता है। नय के सम्यक् परिज्ञान से आत्मा का व्यवहार या निश्चय नय के प्रति हठाग्रह नहीं रह जाता है। तब आत्मा मोक्षमार्ग सम्बन्धी विनय को सही ढंग से धारण करता है।' 'व्यवहार की उपयोगिता को भूमिका अनुसार स्वीकार करके जो निश्चय की भूमिका में आरोहण करता है वह निश्चय-व्यवहार नय का सही जानकार होता है।' वस्तु या पदार्थ के सही ज्ञान की ओर ले चले वह ज्ञान या अभिप्राय नय कहलाता है। नय हमें किसी अपेक्षा से वस्तु के एक पहलू (धर्म) का ज्ञान कराता है। व्यवहारनय हमें दो पदार्थों के मिले-जुले रूप का ज्ञान कराने में काम आता है। निश्चय-नय बिना मिले-जुले शुद्ध पदार्थ का ज्ञान कराने में काम आता है। जैसे-हल्दी और चूना दो पदार्थ हैं। एक का रंग पीला है और दूसरे का रंग सफेद। व्यवहार-नय कहता है कि इन दोनों का मिला-जुला लाल रंग जब हमारे सामने है तब निश्चयनय कहता है कि पीला गुण पीला ही रहेगा और सफेद सफेद ही रहेगा। व्यवहारनय

शरीर और आत्मा की संयोग दशा का ज्ञान कराता है। जो मात्र निश्चयनय से आत्मा का ज्ञान रखता है, वह कहता है आत्मा मुक्त है। व्यवहारनय को जानने वाला कहता है कि आत्मा संसारी है। परन्तु दोनों नयों का ज्ञान रखने वाला कहता है कि आत्मा व्यवहार से संसारी और निश्चय से मुक्त है। दोनों नयों की अपेक्षा भेद से कथन करने वाला वस्तु के अनेक धर्मों या गुणों को जानता है।

निश्चय एकान्तवादी कहेगा कि आत्मा खाता नहीं, आत्मा पीता नहीं, आत्मा तो त्रैकालिक शुद्ध है। जो मात्र व्यवहारनय को ही जानता है वह कहेगा कि आत्मा ही खाता है, आत्मा ही पीता है।

व्यवहारनयी निश्चयनय के ज्ञाता को तर्क देगा कि यह आत्मा खाता-पीता नहीं तो आप खाना-पीना छोड़ दें, त्याग दें। क्यों अनुकूल नहीं मिलने पर क्रोध करते हो? निश्चयनयी व्यवहारपक्ष को मानने वाले को तर्क देता है कि यदि शरीर खाता है, तो आप मरने के बाद शरीर को खिला दें तो जानें। दोनों अज्ञानता से लड़ते हैं। अनेकान्तदर्शन को जानने वाला कहता है कि आप दोनों के ही अभिमत अपनी-अपनी अपेक्षा से सत्य हैं, सर्वथा नहीं। आपस में विवाद मत करो, आत्मा निश्चय से खाता नहीं, पीता नहीं बिल्कुल सही है। इसी तरह आत्मा व्यवहारनय की अपेक्षा से खाता है, पीता है, यह भी बिल्कुल सही है। नयों के माध्यम से दोनों पहलुओं को स्वीकार करने से नय-ज्ञान विवाद को सुलझा देता है। यदि निश्चय से आत्मा खाता होता तो अभी तक बहुत मोटा बन गया होता। उसके असंख्यात प्रदेश बढ़ गये होते, किन्तु तीन लोक का अनाज खाकर भी आत्मा वैसा ही है, अत: निश्चय से यह आत्मा का ज्ञान सत्य है।

यदि व्यवहारनय से आत्मा खाता नहीं है तो फिर कौन खाता है ? कौन सन्तुष्ट होता है। शरीर तो जड़ है उसे तो कोई संवेदना होती नहीं, उसमें क्रिया है नहीं तो आखिर खाने वाला कौन है? अत: दोनों नयों की यथार्थता को स्वीकारने पर पदार्थ का सही ज्ञान होगा।

अच्छा-बुरा कहकर हर्ष-विषाद करने वाला कौन? इसी तरह आत्मा कषायी है या कषाय रहित, आत्मा बन्धनसहित है या मुक्त? कर्माधीन है या कर्म रहित? आत्मा पुरुषार्थ अधीन है या भाग्याधीन? इत्यादि अनेक प्रश्नों के समाधान अनेकान्तवाद (धर्म) के माध्यम से नय-ज्ञान का सहारा लेकर अपनी बुद्धि में स्वीकारोगे तभी मान कषाय का अभाव होगा, विनय सम्पन्नता आयेगी। सम्यग्ज्ञान की ओर आत्मा बढ़ेगा और विनय मुक्ति पथ पर ले जायेगा। तीर्थंकर जैसा महान् नेता बनाने में समर्थ होगा।

अपने अभिप्राय अथवा दृष्टिकोण को ही नय कहते हैं। व्यवहारनय हो या निश्चयनय दोनों अपनी-अपनी जगह कार्यकारी हैं। जब व्यवहार की मुख्यता हो तो निश्चय मौन हो जाता है और निश्चय की मुख्यता हो तो व्यवहार मौन हो जाता है। कोई भी नय किसी अन्य का विरोध नहीं करता है। 'अर्पितानर्पितसिद्धेः' जैनदर्शन का यह अनेकान्त-दर्शन तो विरोध विनाशक है। जैसा अमृतचन्द्राचार्य ने पुरुषार्थसिद्ध्युपाय में कहा-विरोमथनं नमाम्यनेकान्तम्।''[9]

व्यवहारनय हमारे जीवन में तब तक काम आता है जब तक हम निश्चय को प्राप्त न कर लें। निश्चय के आते ही व्यवहार स्वत: ही छूट जाता है। उस निश्चय की प्राप्ति ध्यान अवस्था में सम्भव है। ध्यान भी वीतराग अवस्था में निर्विकल्प-दशा में आत्मा का अनुभव करते हुए होता है, ऐसा आत्मानुभव शुक्लध्यान में सम्भव है और वर्तमान समय-पंचमकाल में शुक्लध्यान संहनन की कमी से सम्भव नहीं। सातवें गुणस्थान में अप्रमत्त अवस्था में किसी-किसी मुनि को अभ्यास-दशा में क्षणिक आत्मानुभूति होती है। इससे निचली अवस्था में श्रद्धानात्मक, ज्ञानात्मक और निर्णयात्मक परिणति चलती रहती है। गृहस्थ और श्रमण आत्मा का श्रद्धान करके जब भी ध्यान करने बैठता है तब वह आत्मा की रुचि बढ़ाता है, आत्मा की भावना करता है, किन्तु आत्मा का अनुभव नहीं हो पाता है। आत्मा का अनुभव

आत्मा में आत्मा के द्वारा आत्मा के लिए एकाग्र होने पर होता है। यही स्वरूप का अनुभव है।

मुनिप्रवर कहते हैं कि व्यवहारनय से आत्मा को जानो और निश्चयनय से भी आत्मा को जानो। नय जानने का एक साधन है। नय साध्य नहीं है। जब शुद्ध आत्मा को जानना होता है तब निश्चयनय को साधन बनाया जाता है और जब आत्मा को गुणस्थान, मार्गणा के द्वारा जानते हैं तब व्यवहारनय साधन बन जाता है। इस प्रकार नय के द्वारा आत्मा की शुद्ध-अशुद्ध दशा का ज्ञान हुआ। ज्ञान होने से निश्चय की प्राप्ति हो गई, ऐसा नहीं समझना। ज्ञान ही नय है। वक्ता का अभिप्राय नय है। आत्मवस्तु को दोनों नयों से जानकर जब हम शुद्ध आत्मा को प्राप्त करने का, उसका अनुभव करने का पुरुषार्थ करते हैं तो व्यवहारनय से जानने में आने वाली अनुभूति धीरे-धीरे विलीन होती जाती है। निश्चयनय के विषय की अनुभूति उत्पन्न होती जाती है और जिस समय आत्मा पूर्ण शुद्ध, सिद्ध बन जाता है, उस समय आत्मा को किसी नय का सहारा लेने की आवश्यकता नहीं है। साध्य की प्राप्ति हो जाने पर साधन स्वत: ही छूट जाता है। निश्चयनय की प्राप्ति हो जाने पर व्यवहारनय भी छूट जाता है। नय विकल्प है, साधन है। कुन्दकुन्दस्वामी ने कहा-'णयपक्खातिकंतो भणिदो जो सो समयसारो।' जब आत्मा समयसारमय होता है तब वह दोनों के विकल्पों से मुक्त हो जाता है। आत्मा का सार मात्र ज्ञायक स्वभाव की प्राप्ति होना है। निश्चयनय दो प्रकार का है। एक निश्चयनय के द्वारा वस्तु का अभेद-शुद्ध, एक स्वरूप जान लेना और दूसरा उस वस्तु का उसी रूप में अनुभव होना। निश्चय का पहला प्रकार-जिसमें मात्र जानना है, अनुभव नहीं हैं। उस ज्ञान को जब हठाग्रह से अनुभव रूप मान लेते हैं तो वह गलती है, निश्चय एकान्तमत इसी भूल का परिणाम है।[10]

व्यवहार-निश्चय का वास्तविक दिग्दर्शन

व्यवहार को झूठा कहने पर निश्चय की प्राप्ति कभी नहीं होगी। जब कारण ही असत्य होगा तो कार्य सत्य कैसे होगा? सम्पूर्ण वस्तु व्यवस्था ही बिगड़ जायेगी। अनेकान्त दर्शन की रीढ़ ही चरमरा जायेगी। अनेकान्तदर्शन की विशेषता प्रत्येक गुणधर्म का समादर करना है। यदि वस्तु के किसी एक धर्म को सच्चा कहोगे तो एकान्तवाद का प्रसङ्ग आ जायेगा। जिस कारण से कार्य पूर्ण हो उस कारण को झूठा कहना कृतघ्नता है। उमास्वामी/उमास्वाति महाराज ने तत्त्वार्थसूत्र में प्रत्येक द्रव्य के परस्पर उपकार को स्वीकारा है। काल द्रव्य, धर्म द्रव्य आदि उदासीन निमित्तों को उपकार के रूप में स्वीकारा है। उपकार व्यवहार से होता है निश्चय से नहीं। कोई द्रव्य किसी द्रव्य का कुछ नहीं करता है, यह निश्चयपरक कथन है। व्यवहारनय से एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को प्रभावित करता है। जैसे सिद्ध भगवान लोकाकाश के अग्रभाग पर अनन्तकाल तक स्थित रहते हैं। यह अधर्मद्रव्य का उपकार है। सिद्धभगवान लोकाकाश के बाहर नहीं गए, यह धर्मद्रव्य का उपकार है। इस निमित्त कारण को स्वीकार नहीं करने पर वस्तु तत्त्व की प्ररूपणा अधूरी रहेगी। अत: निश्चय से यह सत्य है कि सिद्ध भगवान अपने गुण, पर्यायों से सतत परिणमनशील हैं तथा व्यवहारनय से स्पष्ट है कि धर्मास्तिकाय के बिना सिद्ध भगवान ऊपर की ओर गमन नहीं कर सकते।

सन्दर्भ

1. तित्थयर भावणा, पृष्ठ 44
2. वही, पृष्ठ 6
3. वही, पृष्ठ 10
4. वही, पृष्ठ 16-19
5. राजवार्तिक 1/4-9
6. तित्थयर भावणा, पृष्ठ 16-19
7. वही, पृष्ठ 112
8. वही, पृष्ठ 21
9. वही, पृष्ठ 104
10. पुरुषार्थसिद्ध्युपाय

-37 एफ 1, विवेक विहार, जगतपुरा, जयपुर (राजस्थान)

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 46
ISSN 2249-2011

परिवार-स्तम्भ

बुरे व्यक्ति के जीवन में भी परिवर्तन आ सकता है

श्री मोहन कोठारी 'विनर'

फ्रेम तो वही है, पर फोटो बदल जाते हैं।
टी.वी. तो वही है, पर सीरियल बदल जाते हैं।
मोबाइल तो वही है, पर मैसेज बदल जाते हैं।
मन तो वही है, पर मन के विचार बदल जाते हैं।

दूसरे प्रकार से यूँ कह सकते हैं-

सूर्य एक है, परन्तु उसकी किरणें अनेक हैं। पुष्प एक है, परन्तु उसकी पंखुड़ियाँ अनेक हैं। मकान एक है, परन्तु उसमें खिड़कियाँ अनेक हैं। पुरुष एक है, परन्तु उसके पास मन के रूप अनेक हैं।

इस मन की दशा बड़ी विचित्र है। पल-पल में इसके भाव बदलते रहते हैं। यह मन कभी स्थिर नहीं रहता, इसीलिए इस मन को चञ्चल कहा गया है। सुबह चाय की इच्छा करने वाला यह मन दोपहर में मिठाई की इच्छा करने लगता है। आज किसी के साथ दोस्ती रखने वाला मन कल उसी के साथ दुश्मनी कर लेता है। शाम को बेचैनी महसूस करने वाला मन तपती दोपहरी में प्रसन्नता महसूस करने लगता है। इस प्रकार मन के विचार भाँति-भाँति से बदलते रहते हैं। यही कारण है कि मन हमेशा अशान्त बना रहता है। मन की भटकन के कारण मन में शान्ति-समाधि नहीं रहती।

इस अशान्त मन के फलस्वरूप विचारों में तेजी से उतार-चढ़ाव आने लगता है। इस उतार-चढ़ाव की प्रवृत्ति के कारण हम किसी विषय पर, किसी बात पर सही निर्णय नहीं ले पाते हैं।

किसी बुरे व्यक्ति के बारे में हम यह धारणा बना लेते हैं कि वह व्यक्ति बुरा है। यही धारणा मन में जम जाने के कारण उसके साथ व्यवहार में भी फर्क आ जाता है, लेकिन यह जरूरी नहीं कि बुरा व्यक्ति बुरा ही बना रहता है, वह बदल भी सकता है, अच्छा इंसान भी बन सकता है। इसलिए हमारे अन्दर विचारों को बदलने की प्रवृत्ति होनी चाहिए और पुन: हमें उसके साथ मधुर सम्बन्ध स्थापित करना चाहिए।

जितने सुन्दर रहेंगे आपके भाव,
उसका उतना ही पड़ेगा प्रभाव।

जो वस्तु अच्छी है वह कभी बुरी भी बन सकती है और जो वस्तु बुरी है, वह कभी अच्छी भी बन सकती है। अपने कषायों का उपशम कर हम अपने विवेक को सदैव जागृत रखें, जिससे हमारी मानसिकता निर्मल रह सकती है, विचारों से संशय की स्थिति दूर हो सकती है। व्यक्ति के परिवर्तन के बाद बदले हुए स्वरूप को आसानी से समझ सकते हैं। ऐसा विचार आने से किसी के प्रति दुर्भावना उत्पन्न नहीं होती।

खूनी, हत्यारे, चोर, पापी आदि बुरे व्यक्तियों के प्रति बुरी सोच नहीं रखें। यद्यपि ऐसे अपराधी व्यक्तियों के घट में दया, करुणा, सहिष्णुता आदि के भाव नहीं रहते हैं, इसलिए ही जघन्य अपराध करते हुए उनकी आत्मा नहीं काँपती। भगवान फरमाते हैं-ऐसे अधम लोगों के प्रति मन में बुरे विचार नहीं रखें। दया के पात्र ऐसे अधम व्यक्तियों के जीवन में कभी भी क्रांतिकारी परिवर्तन आ सकता है। अत: हमें पापी से घृणा नहीं करना है, वरन् पाप से घृणा करना है।

उदाहरण 1. अर्जुन माली, जिसके हाथ खून से रंगे थे, वह यक्षाविष्ट होकर प्रतिदिन 6 पुरुष और 1 स्त्री की अर्थात् सात जनों की हत्या करता था। लगभग 6 माह में उसने कुल 1141 हत्याएँ की।

लेकिन सुदर्शन श्रावक के सम्पर्क में आने से वह भगवान महावीर स्वामी के दर्शनार्थ पहुँच गया। उसे दर्शन-वन्दन और प्रवचन-श्रवण का लाभ मिला।

भगवान की वाणी श्रवण कर अपने किये हुए अपराधों के लिए उसके दिल में पश्चात्ताप की धाराएँ फूट पड़ी और वैराग्य उत्पन्न हो गया।

उन्होंने संयम ग्रहण कर लिया और अपने कर्मों को काटने के लिए कटिबद्ध हो गये। वे जब गोचरी के लिए जाते तो उन्हें लोग हत्यारा कहकर तरह-तरह से प्रताड़ित करते। कोई कहता-इसने मेरी माँ को मारा है, कोई कहता-इसने मेरे भाई को मारा है। कोई कहते-इसने मेरी पत्नी को, मेरे बच्चों को, मेरे पिता को मारा है। आक्रोशित होकर अर्जुन अणगार को कोई पत्थर फेंक कर मारते थे, कोई डण्डों से मारते थे। अर्जुन अणगार मार को, प्रताड़ना को समभाव से सहते थे और कोई प्रतिक्रिया नहीं करते थे, क्योंकि वे जानते थे कि मैंने बहुत जघन्य अपराध किये हैं। मेरे अपराधों को देखते हुए लोगों की प्रताड़ना, लोगों का विरोध, लोगों का आक्रोश तो बहुत कम है। चिन्तन करते कि मैं पापी हूँ, हत्यारा हूँ और मुझे मेरे कर्मों की सजा मिलनी ही चाहिए।

अर्जुन अणगार के उपशम भावों के कारण उन्हें लगभग 6 माह में ही मोक्ष प्राप्त हो गया।

उदाहरण 2. एक चोर, जो चोरी करने में माहिर था, बेखौफ चोरियाँ करता था। उस चोर का आतंक पूरे क्षेत्र में फैला हुआ था। अनेक स्थानों पर उसने चोरियों को अञ्जाम दिया था। जनता उस चोर के आतंक से भयभीत रहने लगी थी। लोगों के मन में दहशत बैठ गई थी कि न जाने कब वह हमारे घर को निशाना बना ले।

एक बार की घटना है। वह चोरी करने के लिए एक सेठ के घर में घुस गया। परिवार के सभी सदस्यों को डरा-धमकाकर, जान से मारने की धमकी देकर उस घर से बड़ी मात्रा में स्वर्ण-आभूषणों को लूट लिया। परिवार वाले दहशत के कारण मौन थे। जब वह सामान बटोर कर ले जाने के लिए तैयार हुआ तो घर के मुखिया सेठजी ने चोर से कहा-''भाई सुनो! मेरे हाथ में एक अंगूठी रह गई है, देना भूल गया हूँ, जबकि तुमने कहा था कि जो भी आभूषण तुम सबके शरीर पर हैं वे सभी उतार कर मुझे दे दो। इसी में तुम सबकी खैरियत है। हम सबने तुम्हें देना स्वीकार किया था। लो, यह एक अंगूठी जो भूल से मेरे हाथ में रह गई थी, इसको भी ले जाओ।''

चोर सेठजी की बात सुनकर आश्चर्यचकित रह गया। उसने सोचा कि मैंने इनका इतना जेवर लूट लिया, मुझे इन्हें लूटने में कोई दया नहीं आई और एक यह व्यक्ति है जो नीतिवान है, जिसने अपने और अपने परिवार के सदस्यों के प्राणों की रक्षा के लिए सब आभूषण मुझे दे दिए और बची हुई एक अंगूठी भी मुझे देने को तैयार है। धिक्कार है मुझको जो मैं आपराधिक प्रवृत्तियों में पड़कर मानवता को भूल गया हूँ। लोगों को लूट-लूट कर खुश होता रहा हूँ। दुनिया की नज़रों में एक बुरा इन्सान बन गया हूँ। चोर का चिन्तन आगे बढ़ते रहा। उसने सोचा मैं गलत सङ्गत में पड़कर कितना बड़ा चोर बन गया हूँ। मैंने अपनी ज़िन्दगी बर्बाद कर दी है। जान से मारने की धमकी देकर लोगों के पसीने की कमाई को लूटकर जघन्य अपराध करता रहा हूँ। सेठजी के नैतिक जीवन को देखकर उसका मन बदल गया और मन में प्रण कर लिया कि मैं आज के बाद कभी चोरी नहीं करूँगा। नेक इन्सान बनने के लिए मेहनत करूँगा।

सेठजी से लूटा हुआ धन सेठजी को वापस लौटा दिया गया। इस घटना ने चोर के जीवन को बदल दिया। शुभ-संकल्प लेकर चोर अपने घर लौट गया।

हमें सोचना है कि बुरा व्यक्ति भी कभी अच्छा इन्सान बन सकता है। बुरे व्यक्ति के जीवन में कब परिवर्तन आ जाए कुछ कहा नहीं जा सकता। अतएव हमें बुरों के प्रति मन में गलत विचार नहीं रखना है वरन् उनके प्रति दया के भाव लाकर प्रभु से यह प्रार्थना करनी चाहिए कि इनके जीवन से बुराइयाँ हटें और वे भी नेक इन्सान बनें। दया, करुणा के भाव अपने घट में रहने चाहिए, जिससे हमारी सोच निर्मल बनी रहे।

-जनता साड़ी सेण्टर, फरिश्ता कॉम्पलेक्स, स्टेशन रोड़, दुर्ग (छत्तीसगढ़)

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 48
ISSN 2249-2011

तत्त्व-चर्चा

आओ मिलकर कर्मों को समझें (25)

(अनन्तानुबन्धी कषाय)

श्री धर्मचन्द जैन

जिज्ञासा– अनन्तानुबन्धी कषाय किसे कहते हैं ?

समाधान–जिन क्रोध, मान, माया, लोभ कषाय से अनन्त संसार का अनुबन्ध हो अथवा जिनके कारण से जीव अनन्त संसारवर्धक कर्मों का बन्ध करें, उन्हें अनन्तानुबन्धी कषाय कहते हैं। प्रज्ञापना सूत्र की वृत्ति में कहा भी है कि-

अनन्तान्यनुबध्नन्ति, यतो जन्मानि भूत्रये।
तेनानन्तानुबन्धाख्या, क्रोधाद्येषु नियोजिता।।

अर्थात् अनन्त जन्मों का तीन भुवन में अनुबन्ध होने से क्रोधादि चारों कषायों का अनन्तानुबन्धी नाम दिया है।

अनन्तानुबन्धी कषाय का दूसरा नाम 'संयोजना' भी है। जिससे जीव अनन्त भवों से जुड़ जाते हैं, उन कषायों को अनन्तानुबन्धी अथवा 'संयोजना' कषाय कहते हैं।

जिज्ञासा– अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ का स्वरूप कैसे समझा जा सकता है ?

समाधान–कर्मग्रन्थकारों ने प्रथम कर्म ग्रन्थ में अनन्तानुबन्धी कषाय को इस प्रकार उपमित करके समझाया है-

अनन्तानुबन्धी क्रोध–पर्वत में आई दरार के समान। जिस प्रकार से पर्वत में यदि रेखा, दरार पड़ जाती है, तो उसे मिटाना अत्यन्त कठिन होता है, उसी प्रकार जिस क्रोध के संस्कारों को मिटाना अत्यन्त कठिन हो।

अनन्तानुबन्धी मान–पत्थर के स्तम्भ के समान। जिस प्रकार पत्थर के खम्भे को झुकाना अत्यन्त मुश्किल है, ठीक उसी प्रकार जिस अभिमान के संस्कारों को मिटाना अत्यन्त कठिन हो।

अनन्तानुबन्धी माया–बाँस के मूल (टेड़ी-मेड़ी जड़) के समान। जिस प्रकार बाँस की टेड़ी-मेड़ी जड़ों को सीधा करना अत्यन्त कठिन होता है, वैसे ही जिस माया के संस्कारों को छोड़ना अत्यन्त कठिन हो।

अनन्तानुबन्धी लोभ–किरमिची रंग के समान। जैसे किरमिची रंग, पक्का रंग जो एक बार वस्त्रादि पर लग जाता है, तो वह अत्यधिक प्रयत्न के बिना नहीं छूट पाता, वैसे ही जिस लोभ के संस्कारों को छोड़ना अत्यधिक प्रयत्न साध्य हो।

यहाँ पर जो अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ को उपमित किया है, वह उनकी उत्कृष्टता की अपेक्षा से बतलाये जाने की सम्भावना है। क्योंकि एक-एक कषाय के असंख्यात-असंख्यात भेद हो सकते हैं। मिथ्यादृष्टि जीवों के अनन्तानुबन्धी कषाय के बन्ध-उदय की अपेक्षा असंख्य-असंख्य भेद हो सकते हैं।

जिज्ञासा– अनन्तानुबन्धी क्रोधादि कषाय जब विपाकोदय में आती हैं, तब हमारे जीवन में उनका क्या प्रभाव होता है ?

समाधान–अनन्तानुबन्धी क्रोध के उदय में चित्त का कुपित होना, क्षुब्ध होना तथा अशान्त होना पाया जाता है। अपने सुख में बाधा उत्पन्न होने पर व्यक्ति का चित्त निरन्तर क्षुब्ध एवं अशान्त बना रहता है। वह अपने दुःख का कारण दूसरे को मानने लगता है। अपने सुख में दूसरे को बाधक मानकर व्यक्ति उससे निरन्तर वैर-भाव रखने लग जाता है।

अपने से भिन्न पदार्थों से तादात्म्य सम्बन्ध स्थापित कर अपने को उस रूप मानना मान कषाय है। अनन्तानुबन्धी मान के कारण व्यक्ति शरीर, धन, बल,

बुद्धि, विद्या आदि की उपलब्धि को ही अपना जीवन मानने लग जाता है। इनका अन्त नहीं हो, ऐसी अभिलाषा रखता है तथा अपने मान को बनाये रखने को प्रयत्नशील रहता है।

वस्तु, व्यक्ति, परिवार, धन-सम्पत्ति आदि को अपना मानकर ममता करना, छल-कपट आदि करके उसे टिकाये रखने का प्रयत्न करना माया है। अनन्तानुबन्धी माया के कारण व्यक्ति माया-ममता के चक्कर से बाहर नहीं निकल पाता है।

इन्द्रिय विषयों के सुख की सामग्री जुटाने तथा उसे बढ़ाने की प्रवृत्ति लोभ है। अनन्तानुबन्धी लोभ कषाय के कारण इन्द्रिय विषयों से प्राप्त सुख को ही जीवन मानकर व्यक्ति उस सामग्री आदि को एकत्रित करने तथा सदैव बनाये रखने के कार्यों में ही उलझा रहता है।

जिज्ञासा– अनन्तानुबन्धी कषाय का बन्ध कब और किन जीवों में कितनी स्थिति का होता है?

समाधान–अनन्तानुबन्धी कषाय का बन्ध पहले तथा दूसरे गुणस्थानवर्ती सभी जीवों में होता है। इनमें भी परिणामों की तीव्रता-मन्दता के कारण बन्ध में बहुत अधिक अन्तर भी हो सकता है। अनन्तानुबन्धी कषाय का बन्ध सामान्य रूप से समुच्चय जीवों की अपेक्षा से जघन्य एक सागरोपम का $^{4}/_{7}$ भाग में पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग कम होता है तथा उत्कृष्ट बन्ध 40 कोटाकोटी सागरोपम का होता है। एकेन्द्रिय जीवों में एक सागरोपम के $^{4}/_{7}$ भाग, द्वीन्द्रिय जीवों में 25 सागरोपम का $^{4}/_{7}$ भाग, त्रीन्द्रिय जीवों में 50 सागरोपम का $^{4}/_{7}$ भाग, चतुरिन्द्रिय जीवों में 100 सागरोपम का $^{4}/_{7}$ भाग तथा असन्नी पञ्चेन्द्रिय जीवों में 1000 सागरोपम का $^{4}/_{7}$ भाग का उत्कृष्ट स्थिति का बन्ध होता है। एकेन्द्रिय से असन्नी पञ्चेन्द्रिय तक के जीवों में जघन्य बन्ध अपने-अपने उत्कृष्ट बन्ध से पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग कम जानना चाहिए।

सन्नी पञ्चेन्द्रिय जीवों में जघन्य बन्ध अन्त:कोटाकोटि सागरोपम से लेकर उत्कृष्ट 40 कोटाकोटि सागरोपम तक का होता है। सन्नी पंचेन्द्रिय में जो जीव मिथ्यात्वी होने के साथ ही तीव्र संक्लेश परिणामों से युक्त हैं, तो उनके 40 कोटाकोटि सागरोपम की उत्कृष्ट स्थिति का बन्ध हो सकता है।

सन्नी पञ्चेन्द्रिय जीवों में सास्वादन सम्यग्दृष्टि गुणस्थान वालों के जघन्य-उत्कृष्ट अन्त:कोटाकोटि सागरोपम का बन्ध होता है। यद्यपि तीन विकलेन्द्रिय तथा असन्नी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय में भी अपर्याप्त अवस्था में सास्वादन सम्यग्दृष्टि गुणस्थान हो सकता है। किन्तु उन जीवों में अन्त:कोटाकोटि सागरोपम का बन्ध नहीं होकर ऊपर बताये बन्ध के अनुसार ही होता है।

जिज्ञासा– अनन्तानुबन्धी कषाय का क्षयोपशम कब होता है?

समाधान–जब किसी जीव में अनन्तानुबन्धी कषाय के संस्कार कमजोर पड़ते हैं, उनके उदय में अपेक्षाकृत मन्दता रहती है, तब जीव की विशुद्धि बढ़ने लगती है। जैसे-जैसे यह समझ विकसित होती है कि इन्द्रिय विषयों में, भौतिक पदार्थों में सुख नहीं है। भोगों का रस जब नीरस लगने लगता है, तब आत्मिक सुखों की ओर उसका ध्यान आकृष्ट होता है तथा उसे पाने के लिए संवेग भाव जागृत होता है, तब उसे समकित गुण की प्राप्ति होती है।

जब किसी सन्नी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तक को प्रथमोपशम अथवा क्षयोपशम समकित प्राप्त होती है, तब अनन्तानुबन्धी कषाय चतुष्क का विपाकोदय समाप्त हो जाता है, मात्र प्रदेशोदय रहता है, उस अवस्था को अनन्तानुबन्धी का क्षयोपशम कहा जाता है।

अनन्तानुबन्धी कषाय चतुष्क का क्षयोपशम 4 से 7 गुणस्थान तक रहता है। मिश्र गुणस्थान को प्राप्त करने पर भी अनन्तानुबन्धी का विपाकोदय नहीं होने की अपेक्षा से क्षयोपशम बना रहता है।

जिज्ञासा– क्या अनन्तानुबन्धी कषाय का उदय जीवन पर्यन्त रहता है?

समाधान–यद्यपि कर्मग्रन्थ भाग-1, प्रज्ञापना पद-23

आदि में अनन्तानुबन्धी कषाय की स्थिति जीवन पर्यन्त बतलायी है, किन्तु वह उत्कृष्टता की अपेक्षा समझना चाहिए। किसी मिथ्यादृष्टि जीव को जीवन पर्यन्त समकित प्राप्ति नहीं हो पाती है तो उसके अनन्तानुबन्धी चतुष्क का उदय भी जीवन पर्यन्त रहता है। क्योंकि मिथ्यात्व मोहनीय तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्क एक दूसरे को पुष्ट करते रहते हैं।

अनन्तानुबन्धी चतुष्क में कोई भी कषाय अन्तर्मुहूर्त्त से अधिक लगातार किसी जीव के उदय में नहीं रहते हैं, किन्तु कभी क्रोध, कभी मान, कभी माया, कभी लोभ इस प्रकार बदल-बदल कर उदय में आते रहते हैं। जब तक समकित प्राप्ति नहीं हो तब तक निरन्तर प्रवाह रूप में ये कषाय उदय में आते ही रहते हैं।

कोई जीव आत्मिक पुरुषार्थ जाग्रत कर, तत्त्वों का सम्यक् बोध एवं सम्यक् श्रद्धान कर समकित गुण को जब कभी भी प्राप्त कर लेता है, तभी उसके अनन्तानुबन्धी कषाय का उदय समाप्त हो जाता है। जीवन-पर्यन्त का तात्पर्य जब तक मिथ्यात्व का उदय है तब तक समझना चाहिए।

जिज्ञासा- क्या अनन्तानुबन्धी कषाय के उदय में मरने वाला जीव नरक गति में ही जाता है?

समाधान- कर्मप्रकृति के थोकड़े में, कर्मग्रन्थादि में कथन है कि अनन्तानुबन्धी कषाय के उदय में मरने वाला जीव नरक गति में जाता है। यह कथन सामान्य व्यवहार की अपेक्षा, तीव्र संक्लिष्ट परिणामों की अपेक्षा अथवा अनन्तानुबन्धी कषाय की उत्कृष्टता की अपेक्षा समझना चाहिए। क्योंकि प्रथम गुणस्थान में काल करने वाला जीव चारों गतियों में जा सकता है। आयु बन्ध के समय जैसे परिणामों की तीव्रता, मन्दता, संक्लेश-विशुद्धि आदि रहती है, उसी के अनुसार जीव आयु का बन्ध करता है तथा बन्धी हुई आयु के अनुसार ही उन-उन गतियों में जाकर जन्म लेता है।

जिज्ञासा- समकित प्राप्त होने पर अनन्तानुबन्धी कषाय की कौन-कौन सी अवस्थाएँ रहती हैं?

समाधान- जब जीव को समकित प्राप्त हो जाती है तब अनन्तानुबन्धी कषाय का विपाकोदय नहीं रहता है। प्रथमोपशम समकित तथा क्षयोपशम समकित प्राप्ति में अनन्तानुबन्धी चतुष्क का क्षयोपशम हो जाता है। क्षयोपशम समकित प्राप्ति के पश्चात् जब जीव की विशुद्धि बढ़ती है तब अनन्तानुबन्धी कषाय का उपशम या विसंयोजना या क्षय होने लगता है।

(अ) कोई जीव क्षयोपशम समकित से द्वितीयोपशम प्राप्ति के लिए प्रक्रिया प्रारम्भ करता है तब उसके अनन्तानुबन्धी कषाय का उपशम होता है।

(ब) कोई जीव क्षयोपशम समकित में विशुद्धि बढ़ने से अनन्तानुबन्धी कषाय चतुष्क की विसंयोजना कर देता है। विसंयोजना अर्थात् अनन्तानुबन्धी कषाय चतुष्क के कर्म दलिकों को अपनी सजातीय अप्रत्याख्यानी, प्रत्याख्यानी आदि कषाय में संक्रमित करके अनन्तानुबन्धी कषाय की सत्ता समाप्त कर लेना है। अनन्तानुबन्धी कषाय के क्षय होने पर जीव जब मिथ्यात्व मोहनीय की सत्ता समाप्त नहीं कर पाता है, तब अनन्तानुबन्धी का किया हुआ क्षय विसंयोजना कहलाता है।

(स) कोई क्षयोपशम समकिती, क्षायिक समकित प्राप्ति की प्रक्रिया में तीव्र विशुद्धि वाले परिणामों से अनन्तानुबन्धी कषाय चतुष्क का क्षय कर देता है।

जिज्ञासा- विसंयोजना और क्षय में क्या अन्तर है?

समाधान- विसंयोजना अस्थायी क्षय कहलाता है, जबकि क्षय आत्यन्तिक अर्थात् स्थायी क्षय कहलाता है। विसंयोजना मात्र अनन्तानुबन्धी चतुष्क की होती है, जबकि क्षय सभी कर्मों की प्रकृत्तियों का हो सकता है।

विसंयोजना अन्तर्मुहूर्त्त से लेकर 66 सागरोपम झाझेरी (कर्म साहित्य के अनुसार 132 सागरोपम झाझेरी) तक रह सकती है, जबकि क्षय तो सादि अनन्त होता है।

जिज्ञासा– अनन्तानुबन्धी कषाय की ही विसंयोजना क्यों होती है?

समाधान– अनन्तानुबन्धी कषाय की ही विसंयोजना होने का कारण यह है कि इसका नियन्त्रक मिथ्यात्व मोहनीय माना जाता है। जब तक मिथ्यात्व मोहनीय का क्षय नहीं हो तब तक जीव समकित से पुन: नीचे गिर जाता है। मिथ्यात्व का उदय होते ही उसके अनन्तानुबन्धी कषाय का भी बन्ध-उदय होने लग जाता है। अनन्तानुबन्धी कषाय के अलावा अन्य प्रकृत्तियाँ अपने-आपकी स्वयं नियन्त्रक होती हैं, अत: वे एक बार क्षय हो जाने पर पुन: बन्ध-उदय को प्राप्त नहीं होती हैं।

व्यवहार को प्रभावी बनाने के गुर

सम्पादित संकलन : श्री नवरतन डागा

चेहरे का रंग कुदरत से मिलता है, पर जीवन को सही ढंग देना हमारा काम है। दुनिया में कई लोगों का व्यवहार इतना शालीन और मधुर होता है कि उनके पास बैठने और उनके साथ रहने से स्वयं का भी विकास एवं निर्माण होता है। महान् लोग शत्रु के साथ भी ऐसा व्यवहार करते हैं कि वे शालीनता के पर्याय बन जाते हैं। जो व्यक्ति सम्मान पाने की कोशिश करता है, वही अपमानित होता है। हर बात सोचने की तो होती है, लेकिन कहने की नहीं होती। किसी पर गलत टिप्पणी न करें और न ही व्यंग्य में अपनी बात पेश करें।

किसी मीटिंग आदि के प्रसङ्ग पर अपनी बात जरूर रखें, पर उसे बहस तक न ले जाएँ। तकरार करना ओछापन है। अपने विचारों को खुला रखें, व्यर्थ की बहसबाजी और तकरार में न उलझें। यदि कोई व्यक्ति सुअर से कुश्ती लड़ने लगे तो चाहे वह जीते या हारे, कपड़े उसके ही खराब होंगे। सुअर का कुछ नहीं बिगड़ेगा।

जीवन में दिये गये वचन पूर्ण करने के लिए हैं। बुद्धिमत्ता इसी में है कि वचन देने से पहले बार-बार सोच लें। अपने द्वारा दिये गये वचन एवं ली गई प्रतिज्ञा हर हाल में निभानी है। जीवन में सदा विनम्र रहें।

-76, 'लक्ष्य' नेहरूपार्क, जोधपुर (राजस्थान)

जीवन सफल बनाता है-मौन

श्री देवेन्द्रनाथ मोदी

शक्ति की परिभाषा है-मौन
भक्ति की शक्ति बढ़ाने की साधना है-मौन
ऊर्जा सञ्चार है-मौन
त्याग-तपस्या-संयम का मन्त्र है-मौन

विश्वास का पथ है-मौन
ज्ञानवृद्धि हेतु आवश्यक है-मौन
तनाव-मुक्ति की औषध है-मौन
उलझन सुलझाने की कला है-मौन

स्नेह जताता है-मौन
प्रेम बरसाता है-मौन
अपनापन दर्शाता है-मौन
लड़ाई-झगड़ों से बचाता है-मौन

दर्द में भरोसा दिलाता है-मौन
वाणी को मधुर बनाने का अभ्यास है-मौन
विवाद को घटाने हेतु आवश्यक है-मौन

मौन की भाषा को जानना है तो
झाँक लें इन आँखों में
जिन्होंने हर हाल में
सच बोलने की नहीं छोड़ी है जिद
खूबियों भरा है अपनों का मौन।

-'हुकम' 5-ए/1, सुभाष नगर, पाल रोड़, जोधपुर-342008 (राज.)

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 52
ISSN 2249-2011

इतिहास

ज्ञान चौपड़ से लेकर साँप सीढ़ी के खेल की यात्रा

(Jain History : The Unknown History of Snake & Ladders Play)

श्री नमन डागा

साँप सीढ़ी के खेल का जन्म भारत में हुआ। ऐसा माना जाता है कि आज से ग्यारह सौ वर्ष पूर्व दसवीं शताब्दी में जैन सन्तों ने इस खेल का आविष्कार किया। लेकिन जैन सन्तों ने इस खेल का आविष्कार क्यों किया? इसका रहस्य जानने के लिए हमें दिल्ली चलना पड़ेगा। वहाँ राष्ट्रीय संग्रहालय में डेकोरेटिव आर्ट गैलेरी के संग्रह में यह खेल ज्ञान चौपड़ के नाम से देखने को मिलता है। इस खेल को देखने पर हमें मालूम पड़ता है कि इसके डिजाइन जैनधर्म में पाए जाने वाले जैन मण्डला से काफी मिलती-जुलती है। जहाँ पर विभिन्न वर्गों को कर्म एवं मोक्ष के द्वारा बताया जाता है। इस खेल की डिजाइन पर अगर हम नज़र करें तो हमें यह देखने को मिलता है कि इस खेल में कुल 84 वर्ग हैं। सामान्यत: खेल की डिजाइन में 9 × 9 की ग्रिड उपयोग में ली जाती है, जिससे परफेक्ट वर्ग बनके 81 वर्ग बनते हैं। इस खेल में जैन साधुओं ने तीन अतिरिक्त वर्ग डाले हैं-वर्ग पहला, वर्ग 56वाँ और वर्ग 66वाँ इससे कुल वर्ग संख्या 84 होती है।

आखिर ये 84 वर्ग बनाये क्यों गये? तो जब जैन शास्त्र पढ़ते हैं तो मालूम पड़ता है कि 84 बहुत महत्त्वपूर्ण संख्या है।

जैन शास्त्रों के अनुसार जीव की कुल 84 लाख योनियाँ हैं। आपको यह सुनकर बहुत आश्चर्य हो रहा होगा कि 84 लाख जीवित जन्तुओं की स्पीशीज हैं। आपको बता दें कि नूतन विज्ञान पहले से ही 2.3 मिलियन यानि 23 लाख स्पीशीज को डॉक्यूमेण्ट कर चुकी है। जिसे ट्री ऑफ लाइफ के चित्र से प्रदर्शित किया जाता है। इस खेल का डिजाइन देखकर हमें यह समझ में आता है कि जैन साधु इस खेल के द्वारा हमें कर्मसिद्धान्त को समझाना चाहते हैं और पूरे संसार का सत्य बता रहे हैं। यह खेल न सिर्फ इंसान के लिए अपितु हर जीव के लिए है कि कैसे हर जीव अपना परम लक्ष्य यानी मोक्ष को पा सकता है। इसके लिए उन्होंने इस खेल को डिजाइन किया।

इस खेल में जो सीढ़ियाँ हैं वे सकारात्मक ऊर्जा को बताती हैं। जैसे-(1) भक्ति, (2) विनय, (3) विवेक, जो आत्मा को ऊपर उठाती हैं और जो साँप हैं वे नकारात्मक ऊर्जा को बताते हैं। जैसे-(1) क्रोध, (2) अहंकार और (3) माया, जो आत्मा को संसार में नीचे गिराते हैं।

जो जीव सफलतापूर्वक इन कर्मों के बन्धनों से बच जाता है और कर्मों को खत्म कर देता है वह मोक्ष यानी परम सुख को प्राप्त हो जाता है। इस खेल का आविष्कार इन्ट्रोस्पेक्शन के लिए हुआ था। इस खेल का असली मकसद हार-जीत नहीं, आत्मा का निरीक्षण था।

जैसे-जैसे जैन मुनि इस खेल के साथ पूरे देश में विचरण विहार करने लगे वैसे-वैसे यह खेल अलग-अलग प्रान्तों में अलग-अलग नाम से जानने में आया। जैसे यह खेल उत्तर भारत में ज्ञान चौपड़ और ज्ञानबाज के नाम से प्रसिद्ध हुआ, यही खेल महाराष्ट्र में पहुँच कर मोक्षपथ बन गया और जब दक्षिण भारत में पहुँचा तो वहाँ इसका नाम लीला और परमपथ सोपान हो गया। बंगाल में इसे गोलक धाम के नाम से जाना गया। नेपाल में यह खेल नागा पास बन गया और तिब्बत में इस खेल का नाम लामशाह बन गया।

इसी तरह यह खेल पूरे भारत में हर जाति, हर धर्म, हर प्रान्त के लोगों में खेला जाने लगा। जिसके द्वारा

उन्हें न सिर्फ मनोरञ्जन मिला, अपितु साथ ही नैतिकता, धर्म और अपनी-अपनी फिलोसोफी के बारे में जानने एवं सीखने को मिला।

समय आगे बढ़ा और देखते ही देखते विदेशी आक्रान्ताओं ने भारत पर आक्रमण करना शुरू किया और इसी कड़ी में ब्रिटिश लोगों ने 18वीं शताब्दी में भारत का इनविजन शुरू किया और वहाँ पर उन्होंने देखा कि यहाँ ज्ञान चौपड़ जैसा खेल है और इसे ले जाते हुए पश्चिम देशों को इस खेल के बारे में बताया। आगे बढ़ते हुए 1860 में अमेरिका में मिल्टन ब्रेडली नाम के व्यक्ति ने इस खेल को 'द चेकर्ड ऑफ लाइन' का नाम दिया और वहाँ पर यह खेल बहुत प्रसिद्ध हुआ। प्रसिद्ध होने के बाद उस व्यक्ति ने करोड़ों रुपये इस खेल से कमाये। अब 1895 में यही खेल इंग्लैण्ड पहुँचा, जहाँ आज भी विक्टोरिया एण्ड एल्बर्ट म्यूजियम में 'किस्मत बोर्ड खेल' के नाम से वहाँ पर डिस्प्ले हो रखा है।

इस खेल में थोड़ा कस्टमाइजेशन हुआ, क्योंकि क्रिश्चियन वेल्यू सिस्टम वहाँ प्रमोट की जाती है, तो वहाँ पर क्रिश्चियन वेल्यूज जैसे-ईमानदारी, ग्रेस, धैर्य आदि से इस खेल में उसको थोड़ा प्रोत्साहन मिला और डिस्ऑनेस्टी, एंगर जैसी वेल्यूज़ को यहाँ दण्डित किया गया।

अब बीसवीं सदी में यह खेल थोड़ा और प्रसिद्ध हुआ और अब यह खेल जर्मनी पहुँचा। जहाँ जे.डब्ल्यू. स्पीयर्स के नाम के व्यक्ति ने इस खेल को वहाँ प्रसिद्ध किया। इस खेल का नाम वहाँ Lieter Spiel रखा गया, जिसका वास्तविक मतलब साँप-सीढ़ी होता है, लेकिन रुचिकर बात यह है कि इस खेल में साँप को बदलते हुए यहाँ पर सर्कस के जानवरों को पिक्चराइज किया गया है।

1943 में अमेरिका में Milten Bradley ने इस खेल को वापस रिब्रॉण्ड करते हुए खेल का नाम रखा Chutes And Ladders और फिर कुछ समय पश्चात् वापस उसकी ब्रॉण्डिंग की और उसका नाम रखा Snakes And Ladders जो आज पूरे विश्व में इस नाम से प्रचलित है।

इस तरीके से हमारी भारत की गौरवशाली भूमि पर जैन मुनियों द्वारा निर्मित यह अद्भुत खेल अपने देश और विदेश की विशाल यात्रा तय करके आखिर में एक साधारण सा बिना कोई नैतिक शिक्षा प्रदान करने वाला सिर्फ एक प्रतियोगिता का खेल बनकर रह गया, जिसे हम आज की तारीख में साँप-सीढ़ी के नाम से जानते हैं और खेलते हैं।

-बी 13, शिवालय मार्ग, सेठी कॉलोनी, आगरा रोड़, जयपुर-302004 (राजस्थान)

लहरों की कश्मकश

श्री निपुण डागा

मैं उस समन्दर को देख रहा था
लहरों की कश्मकश को जरा आँखों में समा रहा था
वह ठण्डी हवा दिल को लहरा रही थी,
वह नदी किनारे की शान्ति मन को गहरा ले जा रही थी।
हाथ कुछ रुक नहीं पा रहा था
पूर्णिमा के चाँद को देख जो सुकून मिल रहा था
इन हाथों को कुछ लिखने का मन कर रहा था।
हमारी ज़िन्दगी इन लहरों से कुछ कम नहीं होती है
इन लहरों को क्या पता कहाँ जाना होता है?
समन्दर किनारे आकर अन्त में रुकना ही तो होता है।
हम भी जीवन में कहाँ भागे जा रहे हैं
एक-दूसरे से लहरों के जैसे
आगे बढ़ने का सपना ही तो देख रहे हैं।
सबको पता है इस जीवन का अन्त कैसा होगा
फिर भी क्यों हम इस खारे संसार में डूबते जा रहे हैं।
बस थम जाओ! बस थम जाओ!
इस समन्दर में ही कोई बाँध बनाओ
संवर की बाँध से खारे पानी को जीवन में रोकना होगा,
इस संसार समुद्र को तैरकर भव सागर पार करना होगा।
चलो बस अब डुबकी लगानी है,
भीतर में गुरुकृपा का कवच पहनकर,
पार करना है जन्म-मरण का सागर,
खोजना है अब स्वयं में, खो जाना है अब स्वयं में।।

-बी 13, शिवालय मार्ग, सेठी कॉलोनी, जयपुर

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 54
ISSN 2249-2011

युवा-स्तम्भ

आदर्शों की खोज एवं श्रेष्ठता का आधान

श्री पदमचन्द गाँधी

लक्ष्य जीवन की दिशा और दशा को निर्धारित करता है। लक्ष्य को निर्धारित किए बगैर अपनी आन्तरिक शक्तियों के प्रयोग एवं उपयोग की सही दिशा सुनिश्चित नहीं हो सकती। व्यक्ति में अपार एवं अपरिमित सम्भावनाएँ व्याप्त होती हैं। आवश्यकता है उसे उजागर करने की, प्रगट करने की। युवा शक्ति का पुञ्ज है, उसमें अपार क्षमता है लोकमान्य तिलक अथवा सुभाषचन्द्रबोस जैसा बनने की। उसमें योग्यता है किसी बड़े व्यवसाय को प्रतिष्ठित करने की। वह भी बन सकता है-जे. के. बिडला, टाटा या फिर धीरूभाई अम्बानी जैसा। उसमें भी शौर्य है, चुनौतियों का सामना करने का। साहस है, परिस्थितियों को पराजित करने का। सम्भावना है, किसी के दर्द को महसूस करने की। क्षमता है, पीड़ा, पराभव एवं पतन को पराजित करने की। लेकिन आज के प्ररिप्रेक्ष्य में उसका लक्ष्य एक ही रह गया है। बहु आयामी कार्यकर्त्ता होने की जगह उसका एकसूत्री कार्यक्रम है अर्थोपार्जन। येन-केन-प्रकारेण धन या मुद्रा प्राप्त होनी चाहिए।

आधुनिक युग के इस विकास के दौर में केवल तकनीकी, प्रौद्योगिकी या बौद्धिक विकास के बल पर हम अपने जीवन का परिपूर्ण विकास नहीं कर सकते। आज के भौतिक वातावरण एवं भूमण्डलीकरण की नीति से ओत-प्रोत युवाओं ने केवल आर्थिक समृद्धि एवं भौतिक विकास को ही अपना लक्ष्य बना लिया है। जीवन के परिपूर्ण विकास के लिए इन सबके साथ नैतिक, चारित्रिक और भावनात्मक विकास भी आवश्यक है। जिस व्यक्ति का नैतिक, चारित्रिक और भावनात्मक पक्ष अधूरा है उनका जीवन भी अधूरा है। आज हम संसाधनों को प्राप्त कर सभ्य तो बन रहे हैं, जीवन-स्तर भी ऊँचा कर रहे हैं, लेकिन संस्कृति को भूलते जा रहे हैं। जिससे संवेदनाएँ गौण हो रही हैं। विकास के युग में हम चाहे कितने भी आगे बढ़ जाएँ, जब तक हमारा आध्यात्मिक क्षेत्र पिछड़ा हुआ है तब तक हमारे जीवन का कल्याण नहीं हो सकता। अत: लक्ष्य वह होना चाहिए कि जिसे पाकर व्यक्ति को पूर्ण सन्तुष्टि प्राप्त हो। जो कुण्ठा के स्थान पर जीवन के उच्च मूल्यों एवं शान्ति को प्रदान कर सके। लक्ष्य वही हो जो जीवन का अर्थ बन जाये। देखने में आता है आज बौद्धिक पक्ष तो दिनों दिन प्रबल हो रहा है, लेकिन भावनात्मक पक्ष कमजोर होता जा रहा है। परिणाम यह आता है कि आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न होते हुए भी युवा मानसिक रूप से टूटा हुआ अपने तक सीमित एवं क्षीण नज़र आता है।

ऐसी द्वन्द्वात्मक एवं असन्तुलन की स्थिति में श्रेष्ठ लक्ष्य को पाने के लिए उच्च आदर्श की आवश्यकता होती है। क्योंकि 'उच्च आदर्श' ही चिन्तनशील और क्षमता युक्त युवाओं के लिए राह प्रस्तुत कर सकते हैं। एकांगी विकास के स्थान पर चहुँमुखी विकास की प्रेरणा दे सकते हैं। प्रभु महावीर ने कहा-'पुरिसा परक्कमेज्जा' अर्थात् हे मनुष्य तू पराक्रम कर। मानव को अपने भीतर की शक्ति के स्रोतों को पहचान करके और उनका उद्घाटन करने का प्रयास करना चाहिए। अत: श्रेष्ठ लक्ष्य को पाने के लिए हमें अपने आदर्शों को देखना होगा, जिससे मानवीय गुणों में अभिवृद्धि हो सके।

भारत की पावन धरा पर भगवान महावीर, बुद्ध, राम, कृष्ण, स्वामी विवेकानन्द, सन्त ज्ञानदेव, महाराणा प्रताप, पद्मिनी, महात्मा गाँधी आदि अनेक महापुरुषों ने अपने जीवन मूल्यों की अनुभूति करके जनहित में आदर्श प्रस्तुत किया। इन्होंने जीवन मूल्यों को

समझा तथा हमारे लिए आदर्श उपस्थित करके उदाहरण बने। इसलिए राम को मर्यादा पुरुषोत्तम, कृष्ण को निष्काम कर्म, महावीर को वीतरागता, बुद्ध को करुणा, विवेकानन्द को ब्रह्मचर्य आदि प्रमुख गुणों के कारण जाना जाता है।

आज युवाओं के आदर्श बदल रहे हैं। देखने में आता है कि बॉलीवुड के स्टार आमिरखान, शाहरूख खान आदि और कतिपय प्रसिद्ध खिलाड़ी युवाओं के रोल मॉडल बन रहे हैं। इनसे प्रेरणा प्राप्त करके युवा अपना जो भी लक्ष्य प्राप्त करेंगे वह पूर्णता का प्रतीक नहीं होगा।

युवाओं के आदर्श कौन एवं कैसे हों?

आज बड़ी समस्या है कि युवाओं का आदर्श कौन बने? क्या माता पिता? क्या शिक्षक? क्या धर्माचार्य? युवा प्रमाण चाहता है, तर्क से बात करता है और सिद्ध करना और परिणाम पाना उसकी पहली पसन्द है। वह प्रेरणा किससे प्राप्त करे? आज युवाओं को आवश्यकता है ऐसे शिल्पकारों की जो उनके विचारों, कल्पनाओं, इच्छाओं, भावनाओं, संवेदनाओं को नि:स्वार्थ भाव से तराशें, निखारें, सजाएँ एवं सँवारें। विचारों को सुन्दर भाव मिलें, मन को संवेदनाओं की शीतल छाँव मिले, ऐसे मार्गदर्शन की आवश्यकता है। उन्हें ऐसे गुरु चाहिए जो व्यावहारिक जगत की शालीनता, विनम्रता और शिष्टाचार के साथ आन्तरिक जगत में आध्यात्मिक भावनाओं को गति देना सिखाएँ। युवाओं का आदर्श वही हो सकता है जो स्वयं साहस और संवेदनाओं से युवा हो। जिसमें जमाने की हवा को बदलने का दमखम हो। जिसमें कुछ कर गुज़रने का भाव हो। क्योंकि आदर्श पुरुष तो वह साँचा है जिसके बारे में सोचकर हम स्वयं को ढालते हैं, गढ़ते हैं और सँवारते हैं। इसलिये इसकी पहचान सही हो। एकलव्य को भील जाति का होने के कारण द्रोणाचार्य ने धनुर्विद्या सिखाने के लिए मना कर दिया, परन्तु एकलव्य ने उन्हें अपना आदर्श माना और धनुर्विद्या में पारंगत हो गया।

घटना यू.एस.ए. की है-पयुर्षण पर्व चल रहे थे। यू.एस.ए. में अनेक जैन परिवार मिलकर किसी एक घर पर धर्म-ध्यान कर रहे थे। उस घर के मुखिया ने बच्चों से कहा-''यह पर्युषण हमारा महापर्व है। तुम भी कुछ धर्म-ध्यान, त्याग, प्रत्याख्यान कर लो। प्रभु महावीर की वाणी को समझो।'' बच्चों ने कहा-''हमारे भगवान महावीर भगवान नहीं हैं, हमारे तो गोडफादर हैं।'' वे प्रति रविवार चर्च में जाते थे, इसलिये उन पर उन्हीं का प्रभाव था। इसलिये उन बच्चों ने पर्युषण पर्व नहीं मनाया। नियमों के अनुसार यू.एस.ए. में बच्चों को कुछ अधिक नहीं कह सकते। पिता ने चिन्तन किया कि मैं यहाँ किसलिए आया? क्या धन अर्जित करना ही मेरा लक्ष्य है? उसे तीव्र आघात पहुँचा। आने वाली पीढ़ी कहाँ जा रही है? विचार करके एक विचित्र निर्णय किया और अच्छी-भली नौकरी छोड़कर पूरे परिवार को छह माह के लिए भारत भ्रमण पर लेकर आ गया। भारत में प्रमुख जैन तीर्थों की यात्रा करवायी, प्रभु महावीर के बारे में जानकारी करवायी, गुरु भगवन्तों के पास जिनवाणी का रसास्वादन कराया। जिससे बच्चों की मानसिकता बदली तथा धर्म के प्रति रुचि बढ़ी। उन्हें आनन्द आने लगा, भगवान महावीर को समझा और उनकी लड़की ने प्रभु महावीर के जीवन-दर्शन पर पी-एच.डी. भी कर ली। प्रभु महावीर जिनको वे नहीं मानते थे, वे प्रभु महावीर ही उनके आदर्श बन गये। उनका जीवन बदल गया। धन्य हैं ऐसे पिता जिन्होंने अपने बच्चों को श्रेष्ठ लक्ष्य और जीवन मूल्य का पाठ पढ़ाया। उन्होंने अर्थ को नहीं, अध्यात्म एवं जीवन मूल्य को महत्त्व दिया।

अल्फ्रेड नोबल बहुत बड़ा वैज्ञानिक था, जिसने डायनामाइट का आविष्कार किया और उनके नाम पर ही नोबल पुरस्कार शुरू किया गया। एक विचित्र घटना उनके जीवन में घटी। एक दिन नोबल ने अखबार में पढ़ा कि नोबल मर गया। उसे बड़ा झटका लगा। मेरे जीते-जी यह मरने का समाचार कैसे छप रहा है? लेकिन तभी उसके मन में एक नया विचार आया कि मैं पता करता हूँ कि लोग मेरे बारे में क्या सोचते हैं? कुछ ही दिनों में उसने देखा कि समाचार पत्रों में अनेक तरह के समाचार

छपे, जिनमें लिखा था कि मौत का सौदागर इस संसार से चला गया। नोबल ने सोचा कि मेरे मरने के बाद लोग मुझे मौत का सौदागर के नाम से जानेंगे। यह तो मेरे लिए एक अभिशाप हो जायेगा। इस चिन्तन से उसके जीवन में एक नया मोड़ आया और उसने संकल्प किया कि अब मैं मौत का सौदागर नहीं, शान्ति का सन्देशवाहक बनूँगा। उसने अपनी कार्यप्रणाली बदली और सारी सम्पत्ति सरकार को सौंप दी। उसी सम्पत्ति से उसके नाम से नोबल पुरस्कार की शुरुआत हुई, जो शान्ति के लिए प्रदान किया जाता है।

घटना कलकत्ता की है, अंग्रेजों के शासन में कलकत्ता विश्वविद्यालय के वाइस चांसलर आशुतोष मुखर्जी थे। वे अपनी माँ को आदर्श मानते थे और उनका सम्मान करते थे। उस समय गवर्नर लार्ड कर्जन ने उनकी योग्यता के आधार पर उन्हें विदेश जाने का आदेश दिया। उस समय विदेश जाना बहुत बड़ी बात थी। उन्होंने माँ की राय इस विषय में लेना जरूरी समझा। माँ से पूछा-''मुझे विदेश जाने का आदेश मिला है। क्या मैं चला जाऊँ?'' माँ धार्मिक विचारों की थी, उसने सोचा कि मेरा बेटा विदेश जाकर भ्रष्ट न हो जाये इसलिये मना कर दिया। मुखर्जी ने भी तर्क नहीं किया और उन्होंने विदेश जाने का विचार त्याग दिया। गवर्नर जनरल कर्जन को पता चला तो उसने कहा-''अपनी माँ से कहिए कि भारत का गवर्नर जनरल का आदेश है कि आपको विदेश जाना होगा।'' आशुतोष मुखर्जी मातृभक्ति और मातृगौरव से गौरवान्वित थे, उन्होंने दृढ़ता और विनम्रता के साथ कहा-''सर! मैं अपनी माता की इच्छा के विरुद्ध स्वर्ग भी जाना पसन्द नहीं करूँगा। मैं अपनी माता की आज्ञा के सामने किसी की भी आज्ञा स्वीकार नहीं कर सकता, चाहे वे भारत के गवर्नर जनरल भी क्यों न हों।'' यह था उनका साहस एवं आदर्श मातृभक्ति का उदाहरण।

महात्मा गाँधी जब विदेश गये तो माता ने जैन गुरु स्वामी बेचरदासजी से मांस, मदिरा और परस्त्रीगमन का नियम दिलाया। उनके आदर्श श्रीमद् रायचन्द्रजी बने। गाँधीजी अहिंसा एवं सत्य के प्रबल पक्षधर थे। उन्होंने अहिंसा के बल पर अंग्रेजों को भारत छोड़ने के लिए विवश कर दिया।

ऐसी ही एक सत्य घटना है। इन्दौर का एक जैन युवा जो लन्दन के हिथ्रो एयरपोर्ट विभाग में आकर्षक पैकेज, गाड़ी, बंगला एवं आम सुविधा के साथ नौकरी कर रहा था। एक दिन इन्दौर से माँ का फोन आता है और वह कहती है कि बेटा! मन नहीं लगता तेरे बिना एवं यह घर सूना-सूना लगता है। कहते-कहते वह रो पड़ी और आँसुओं के कारण बोल नहीं पायी। बेटे ने विचार किया कि मेरी माँ की आँखों में आँसू मेरे कारण हैं। बिना विचार किए करोड़ों के पैकेज को छोड़कर नौकरी से त्यागपत्र देकर माँ के पास पहुँच गया। उसने अर्थ को नहीं, माँ के सुकून को महत्त्व दिया। यह था आदर्श और संस्कार का उदाहरण।

अतः स्पष्ट होता है कि यदि हमारे आदर्श अच्छे हैं तो परिणाम भी अच्छे होंगे। जहाँ त्याग, समर्पण, श्रद्धा एवं अध्यात्म की प्रेरणा देने वाले अच्छे क्रियाधारी आगमवेत्ता, सदाचारी, पंचमहाव्रतधारी, साधु-साध्वियाँ हों वे युवाओं में गुणात्मक परिवर्तन ला सकते हैं, जीवन को चरम गुणवत्ता के शिखर तक पहुँचा सकते हैं। बाहरी झलक दिखलाने वाले बहुत हैं, लेकिन ध्यान रखना चाहिए कि कागज की नाव से समुद्र पार नहीं होता। अतः जीवन की नाव को जीवन मूल्यों में अभिवृद्धि करके ही पार लगाया जा सकता है। उच्च आदर्श से ही श्रेष्ठ लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।

-25, बैंक कॉलोनी, महेश नगर विस्तार-बी,
गोपालपुरा बाईपास, जयपुर (राज.)

हमारा लक्ष्य है कषाय मुक्ति, हमारा व्यवहार है पापनिवृत्ति। निश्चय और व्यवहार लक्ष्य, इन दोनों पर ध्यान देकर चलना ही प्रगति का सार्थक क़दम है।

-आचार्यश्री हीरा

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 57
ISSN 2249-2011

जीवन-व्यवहार

दर्द देते समय ही हो जाए अहसास तो....

श्री गौतम पारख

रूठे हुये को मनाना, जिद में आये हुए को सन्तुष्ट करना, नाराज हुए को शान्त करना, बिगड़ते वातावरण को सामान्य बनाना, बिखरे-बिछड़े हुए लोगों को जोड़ना, किसी दु:ख या पीड़ा से भीगी हुई उदास आँखों में मुस्कान बिखेरना ही तो हमारी परिपक्वता, दूरदर्शिता और गम्भीरता का पैमाना है। हमारे व्यक्तित्व, सोच और समझ की ऊँचाइयों का प्रतीक है।

रूठना, जिद में आना, उखड़ना, उत्तेजित होना, वातावरण को असहज बनाना, बिखरे हुए लोगों के बीच और दूरी बढ़ाना, नम आँखों को और रूलाना, व्यक्ति की वैचारिक कृपणता की निशानी है। प्राय: व्यक्ति उतावलेपन और नासमझी के कारण क्रोध, अहंकार, माया, लोभवश ऐसी हरकतें कर बैठता है। दर्द देते समय उसे दूसरों के दर्द का अहसास ही नहीं होता। झगड़ा करते समय, झगड़े की आग से स्वयं ही नहीं बल्कि उसके परिचित भी झुलसेंगे, ऐसा अहसास होते हुए भी उसे दर-किनार करके विवादों में उलझ जाता है। क्रोध, अंहकार, जिद, लोभ, माया के कारण अन्धी आँखें मानो उसे भविष्य को देखने से ही रोक देती हैं। आने वाले कल का अन्धियारा आज दिखता नहीं, लेकिन वही बीता कल रुलाने लगता है।

मेरे स्मृतिपटल पर स्वाध्याय के क्षणों में एक अनूठा प्रसङ्ग उभर कर आ गया। लक्ष्मीनारायणजी मुरोदिया व्यापार व्यवसाय की दृष्टि से कोलकाता में आकर निवास करने लगे। कोलकाता में उन्होंने प्रतिष्ठित एवं ईमानदार व्यापारी के रूप में अपनी पहचान बना ली। नेक, दरियादिल, धैर्यवान सलाहकार व्यक्ति के रूप में उनकी ख्याति बढ़ने लगी। एक बार समाज में दो सगे भाइयों के बीच बँटवारे को लेकर झगड़ा हो गया। बँटवारा तो हो गया, लेकिन एक हीरे की अंगूठी को लेकर दोनों भाइयों में तनातनी हो गई। अंगूठी एक थी, परन्तु दोनों भाई उसे रखना चाहते थे। दोनों में आपसी लड़ाई बढ़ती गई। गाली-गलोच, मारपीट तक की नौबत आने लगी। समाज के प्रतिष्ठित एवं सामान्य जनों पर प्रभाव होने के नाते झगड़ा लक्ष्मीनारायणजी मुरोदिया के पास पहुँचा। लक्ष्मीनारायणजी ने अनेक विकल्पों के साथ दोनों भाइयों को समझाने की कोशिश की। दोनों भाई अंगूठी रखने के लिए अड़ गये थे। अंगूठी तो एक थी, दोनों भाइयों को कैसे दी जा सकती थी। अन्त में लक्ष्मीनारायणजी ने दोनों भाइयों को कहा कि आप लोग अपने घर जाओ। कल आपके मुनीमजी के साथ अंगूठी भिजवा देना। दूसरे दिन मुनीमजी अंगूठी लेकर लक्ष्मीनाराणजी की दुकान पहुँचे। लक्ष्मीनारायण जी ने मुनीमजी का योग्य सत्कार, सम्मान किया। उनसे अंगूठी लेकर उन्होने स्वयं उसे देखा। जवाहरात बनाने वाले कारीगर को बुलाकर उनके हाथ में अंगूठी सौंपी। मुनीमजी से उन्होंने कहा कि कल इस झगड़े का हल निकल जायेगा। उन्होंने जवाहरात कारीगर से वैसी ही एक और अंगूठी गुप्त रूप से बनवा ली।

दूसरे दिन वे स्वयं छोटे भाई के घर पहुँचे और कहने लगे कि तुम्हारे भाई को मैं समझा दूँगा। वे तुमसे बड़े हैं। मैं उन्हें मना लूँगा। यह अंगूठी तुम तिजोरी में रख दो। फिलहाल कुछ माह तक इसे सम्भालकर तिजोरी में ही रहने देना। अभी मामला गरम है, अन्यथा अनावश्यक ही सुलझाया हुआ मामला उलझ जायेगा। लक्ष्मीनारायणजी इसके बादे बड़े भाई के घर पहुँचे। बड़े भाई से कहने लगे कि बड़ी मुश्किल से मैंने छोटे भाई को समझाया है। वे समझ गये हैं और अंगूठी आपको देने के लिए अपनी सहमति दे दी है। अंगूठी आप अपने पास तिजोरी में रख लीजिए। अभी कुछ महीने अंगूठी को

तिजोरी में ही रहने देना। बड़ी मुश्किल से मामला शान्त हुआ। लक्ष्मीनारायणजी ने दोनों भाइयों को वचनबद्ध करवा दिया था कि अब आपस में प्रेम से दोनों भाई रहना। दोनों भाई और उनका परिवार मिलजुलकर बड़े प्रेम से रहने लगे। दीपावली का पावन त्यौहार आ गया। दोनों भाइयों ने सोचा कि अंगूठी को तिजोरी में रखे महीनों हो गये। हम भाइयों का प्रेम भी बढ़ गया है। दोनों ने लक्ष्मीनारायणजी द्वारा दी गई अंगूठी अपनी-अपनी अंगुलियों में उत्साह से पहन ली। दोनों भाई आपस में मिले और देखा कि दोनों की अंगुलियों में समान हीरे की अंगूठी है। अंगूठी तो एक ही थी। दोनों को समझने में देर नहीं लगी कि हमारे प्रेम को बनाये रखने एवं झगड़े को सुलझाने के लिए, लक्ष्मीनारायणजी ने स्वयं अपनी ओर से एक और अंगूठी बनवाकर चुपचाप हम दोनों को दे दी और किसी को भनक भी नहीं होने दी। वे दोनों भाई लक्ष्मीनारायणजी के पास गये। दोनों उनके चरणों में झुक गये। दोनों भाइयों की आँखों से अश्रुधारा बहने लगी। वातावरण प्रेम, स्नेह एवं वात्सल्य से भीग गया।

दोनों भाई साहस कर लक्ष्मीनारायणजी को अंगूठी वापस देने लगे। लक्ष्मीनारायणजी ने कहा कि क्या तुम दोनों मुझे पितातुल्य नहीं मानते। तुम दोनों का प्रेम ही तुम्हारी पूँजी है। प्रेम की कीमत तुम दोनों अंगूठी से कर रहे थे? दोनों भाई निरुतर हो गये। दोनों भाइयों ने मिलकर निर्णय किया कि दोनों हीरे की अंगूठी के मूल्य के बराबर की राशि परमार्थ और परोपकार (चिकित्सा, शिक्षा, मानव सेवा व्यसनमुक्ति, वृद्धों-विकलांगों की सेवा और संस्कारों के उन्नयन) के क्षेत्र में समर्पित भावों से कार्य करने वाली संस्थाओं को स्थायी निधि के रूप में दान स्वरूप भेंट करेंगे।

मैं चिन्तन की गहराइयों में खो गया। सोचने लगा कि क्या ऐसा भी हो सकता है कि एक अंगूठी के लिए लड़ाई, गाली-गलोज, मारपीट करने वाले सगे भाइयो का प्रेम राम-लक्ष्मणजी के प्रेम की तरह खुशबू फैलाने लगेगा?

मैंने अनुभव भी किया है कि आज भी इस मानव समाज में ऐसे व्यक्तित्व हैं जो शान्त, गम्भीर, उदार, निष्काम भाव से सामाजिक, पारिवारिक प्रेम को बढ़ाने हेतु सदा कार्य करते हैं।

हम प्रार्थना करें कि-हे प्रभो! हमें भी जोड़ने की कला सिखाते रहना। परहित, परमार्थ, परोपकार, आचरण विशुद्धि कठिन साधना के पथ में भी हमारे क़दम बढ़ते रहें, ऐसी शक्ति, सामर्थ्य एवं समझ प्रदान करते रहना।

-राजनान्दगाँव (छत्तीसगढ़)

❖

जिसके दिल में है दया की धारा

श्री सुशील चाणोदिया

(तर्ज :: ओह रे ताल मिले...)

जिसके दिल में है दया की धारा, आँखों में लज्जा है।
मुख पे प्रभु नाम तुम्हारा, वही जैन है।।

नव तत्त्वों का ज्ञाता है, क्रिया का भान है,
जिसकी हर श्वास-श्वास पर, व्रत और पच्चक्खाण है।
नियम है प्राण से प्यारा, वही जैन है।।1।।

दृढ़धर्मी प्रियधर्मी की, अद्भुत आराधना,
पापों को त्याग कर करते, सामायिक साधना।
समता का ऊँचा तारा, वही जैन है।।2।।

मुक्ति का है अभिलाषी, मन में निर्वेद है,
धन में आसक्त नहीं है, अन्तर निर्लेप है।
जिसने है मन को मारा, वही जैन है।।3।।

निर्ग्रन्थों की वाणी पर, पूरी है आस्था,
धाय माता है उनको, जग से क्या वास्ता।
जग लगता खारा-खारा, वही जैन है।।4।।

पक्खी की रातें बीते, पौषध उपवास में,
जिनवाणी श्रवण करें जो, श्रमणों के पास में।
पावन है जीवन सारा, वही जैन है।।5।।

-हैदराबाद (आन्ध्रप्रदेश)

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 59
ISSN 2249-2011

जीवन-शैली

शाकाहार ही सुखी एवं नीरोगी जीवन का आधार है

श्री शान्तिलाल कुचेरिया

कुदरत के द्वारा प्रदत्त स्वादिष्ट खाद्य वस्तुएँ जैसे कि आम, केला, चीकू, सेव, अमरूद, काजू, बादाम, दाख, मूँगफली, हरी-भरी ताजा सब्जियाँ, दालें, अनाज आदि अनगिनत नाम हमारी स्वाद लोलुपता को तृप्त करने के लिए पर्याप्त हैं, लेकिन न जाने क्यों मनुष्य अपने स्वभाव को भूल बैठा है और सम्पूर्ण विश्व के पर्यावरण को असन्तुलित कर मांस, मछली, अण्डा आदि चीजों को अपना आहार मान बैठा है।

मांस खाने वाले लोगों को शायद इस बात का एहसास नहीं होता है कि जिस जीव का कत्ल किया जाता है वह कितनी भयंकर पीड़ा से गुज़रता है। उसकी आत्मा चीत्कार करती है, रुदन एवं करुण क्रंदन करती है और उसी जीव की बोटी-बोटी काटकर तल-भुनकर लोग स्वाद और क्षुधा-तृप्ति के द्वारा आनन्दित होते हैं। यह कैसी इंसानियत है? यह कौनसी मानवता है? जब आप एक सुई की चुभन को बरदाश्त नहीं कर सकते हैं तो किस अधिकार से इन बेचारे मूक प्राणियों को काट रहे हैं और तल-भुन रहे हैं? जो स्वयं ऐसा नहीं करते, किन्तु मांस का सेवन करते हैं वे मांस-मछली बेचने वाले से इन बेबस, अबोध जानवरों की हत्या करवा रहे हैं।

मैं तो अपने हृदय से यही प्रार्थना करता हूँ कि हम शाकाहारी हैं तो अधिक से अधिक लोगों को प्रेरित करें कि मांस, अण्डा, मछली आदि भक्षण नहीं करें। इस नेक कार्य को करके हम लाखों मासूम प्राणियों को जीवन-दान दे सकते हैं।

आप धार्मिक या सामाजिक दृष्टि से विचार करें कि किसी भी धर्म अथवा समाज की नींव हिंसा पर टिकी हुई हो ही नहीं सकती। सभी धर्मों का सार है-''संसार के प्रत्येक प्राणी पर रहम, दया और करुणा करो। किसी भी जीव को मत सताओ, मत मारो।'' धर्म का अर्थ है-अहिंसा, दया, करुणा और प्रेम। सब धर्मों का सार भी यही है कि प्राणिमात्र के प्रति दया और करुणा करना।

कोई भी जानवर बिना भूख लगे किसी अन्य जानवर का शिकार नहीं करता है। केवल मनुष्य ही एक मात्र ऐसा प्राणी है जो केवल शोक के लिए निरीह प्राणियों का शिकार करता है और स्वाद के लिए मांसाहार करता है। पशु तो सदियों से अपना निर्धारित आहार लेते रहे हैं, लेकिन मनुष्य ने खाने के लिए भोले-भाले प्राणियों को भी नहीं छोड़ा। आज का विज्ञान भी शाकाहार को सर्वश्रेष्ठ आहार मानता है। खून से सने वस्त्र पहनकर मन्दिर, मस्जिद या गुरुद्वारे में प्रवेश भी नहीं किया जा सकता।

''हे मानव! तू पशु-पक्षियों की कब्र अपने पेट में मत बनाना अर्थात् पशु-पक्षियों को अपना भोजन मत बनाना।''

''मुझको मारने वाला यदि मुझे बुरा लगता है तो जिन्हें मैंने मारा या मेरी वजह से मारा गया है, उन्हें मैं कैसे अच्छा लग सकता हूँ।''

जीवों की है करुण पुकार,
स्वाद के लिए मानव हमें न मार।

मेरे भाई-बहिनों! वैज्ञानिक परीक्षणों और निष्कर्षों से यह सिद्ध हो चुका है कि मांसाहार की अपेक्षा शाकाहार अधिक उत्तम, पौष्टिक, सुपाच्य और स्वास्थ्यप्रद होता है। शाकाहार न केवल शरीर को नीरोग रखता है, बल्कि जीवन को भी श्रेष्ठ बनाता है। शाकाहारी प्राणी का मन और बुद्धि निर्मल एवं पवित्र बनते हैं। कहावत में ठीक ही कहा है-'जैसा खावे अन्न

वैसा होवे मन' अर्थात् आहार का मन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। शुद्ध एवं सात्त्विक आहार, विचार एवं व्यवहार को भी शुद्ध रखते हैं। शाकाहार शील, सदाचार और सहृदयता का जनक होता है। जबकि मांसाहार मनुष्य को हिंसक बनाता है। ख्याति प्राप्त चिकित्सकों का यह मानना है कि कैंसर, ब्लड प्रेशर, मधुमेह, हार्ट-अटैक आदि घातक बीमारियाँ मांसाहारी प्राणी को ही अधिक होती हैं। मांसाहारी प्राणी में पाश्विक प्रवृत्तियाँ बढ़ती हैं। काम-वासना उत्तेजित होती है।

मांसाहारी व्यक्ति व्यभिचार एवं शराब पीने में भी शीघ्र प्रवृत्त हो जाता है। वास्तव में आज यदि दुनिया में युद्धों को मिटाना है तो सबसे पहले मांसाहार को मिटाना होगा। शाकाहार नीति का अनुसरण करने से पृथ्वी पर शान्ति, प्रेम, आनन्द चिरकाल तक बने रहेंगे।

यदि पृथ्वी पर स्वर्ग स्थापित करना है तो पहले मांसाहारी भोजन सर्वथा वर्जित करना होगा। आज मांसाहार के भयानक बुरे परिणामों के कारण ही पश्चिमी देशों में भी हजारों शाकाहार-सोसायटियों की स्थापना की गई हैं और वहाँ के निवासी करोड़ों की संख्या में शाकाहार को अपनाते जा रहे हैं।

''शाकाहार ही एक निर्दोष, पौष्टिक, नीरोगी और सम्पूर्ण आहार है।''

-2/471, सरस्वती स्कूल के पास, जवाहर नगर, जयपुर-302004 (राजस्थान)

बढ़ा ले एक क़दम!

श्री तरुण बोहरा 'तीर्थ'

(तर्ज :: संसार है ये परदेश...)

संसार में कितना शोर ...
अब आ जा धर्म की ओर ...

बढ़ा ले एक क़दम! बढ़ा ले एक क़दम!
छोटी-सी जीवन डोर ...
अब आ जा धर्म की ओर ...

बढ़ा ले एक क़दम! बढ़ा ले एक क़दम!
ये वे फूल हैं जो ...मुश्किल से खिलते हैं
ये वे पल हैं जो ...महापुण्य से मिलते हैं
इस पल ही सम्भल करके ... बढ़ा ले एक क़दम ..
.....संसार में कितना शोर...

ये जो भी मिला अच्छा ...खो-खो के मिला तुझको
ये वो भव है जो ...रो-रो के मिला तुझको
इस भव को सफल करने ....बढ़ा ले एक क़दम...
.....संसार में कितना शोर...

ये जिनवाणी ऐसी ...दृष्टि को बदलती है
दृष्टि जब बदले तो ...सृष्टि भी सँवरती है
सृष्टि के छोर की ओर ... बढ़ा ले एक क़दम...
.....संसार में कितना शोर...

गुरुवर के चरण में ही ...ये मार्ग मिला अच्छा
प्रभुवर की शरण में ही ...ये धर्म मिला सच्चा
ये धर्म का पथ अनमोल ... बढ़ा ले एक क़दम...
.....संसार में कितना शोर...

संकल्प है ये मन का ...मेरी भी दीक्षा हो
संयम तो लेंगे ही ...कैसी भी परीक्षा हो
संयम के स्वागत में ... बढ़ा ले एक क़दम...
.....संसार में कितना शोर...

महावीर के शासन में ...सौभाग्य मिला ऐसा
प्रमुदित 'तीरथ' का ...अब भाग्य खिला ऐसा
अब वीर के घर की ओर ...बढ़ा ले एक क़दम...
...संसार में कितना शोर...

-'जिनशासन', 14, अग्रहारम स्ट्रीट, चिन्तादरीपेट, चेन्नई-600002 (तमिलनाडु)

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 61
ISSN 2249-2011

कविता

जिज्ञासा

डॉ. रमेश 'मयंक'

जीवन में उन्नति के लिए चाहिए-जिज्ञासा
आध्यात्मिक चेतना के लिए
पूँजी-कुँजी है जिज्ञासा।
जिज्ञासा, मरण के बीच में
वेदना से गुज़रने वालों के लिए
संजीवनी का काम करती है,
जेठ मास की कड़कड़ाती धूप में
पैदल चलने वालों को
वृक्ष की शीतल छाया सी
राहत प्रदान करती है।
हिमालय की ठण्डक में
अग्नि का इंतज़ाम हो जाए
तब जिज्ञासा का अर्थ समझ में आए।
समुद्र में डूबता प्राणी
मानो द्वीप को देख पाए,
अन्धकार में भटकते को
कहीं से दीपक की रोशनी
मिल जाए,

अथवा प्यासे को पानी
मिलकर तृप्ति का अहसास भाए।
जिज्ञासा-एक भाव है
स्वभाव में आने का,
ज्ञान-दर्शन का प्रकाश पाने का,
स्थिर व्यक्ति के लिए गतिशील होकर
प्रगति पथ पर क़दम बढ़ाने का।

महावीर स्वामी ने संयम पथ अपनाया
बुद्ध ने जंगल में जाकर मुक्ति के लिए
समाधान पाया
तभी जीवन की गुत्थियों को हल करने
कौन-कहाँ से-क्यों का उत्तर मिल पाया
जिज्ञासा के कारण ही
गुरुत्वाकर्षण समझ में आता है,
बिना जिज्ञासा के व्यक्ति
कब साधना के मार्ग पर चल पाता है?

आध्यात्मिक जिज्ञासा
आत्मा-परमात्मा को मिलाती
मन में चेतना जगाती
जिज्ञासा-मृण्मय नहीं,
चिन्मय के लिए अनूठा प्रयोग है,
यह बला नहीं जीवन-निर्माण की कला
समस्या को जानने, परखने, समझने
हल करने की प्रक्रिया का योग है

आगमों में जिज्ञासा को भार नहीं
भोर की किरण माना जाता,
सर्वोच्च शिखरों का स्पर्श
सुगम कैसे बन जाना जाता,
हम जिज्ञासा को जीवन्तता का प्रतीक,
पुरुषार्थ की निशानी मानें,
सफलता के शिखर पर पहुँचने का
संकल्प जानें
तो इस कुंजी से खुलेगा
ज्ञान का दरवाजा
मंगल मनीषा जिज्ञासु का
जय-जयकार करेगी
प्रत्येक दोष-अवरोध का प्रतिकार करेगी।

-बी 8, मीरा नगर, चित्तौड़गढ़ (राजस्थान)

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 62
ISSN 2249-2011

प्रेरणा

अभिनव पहल

श्री ओमप्रकाश गुप्ता

काश! शराब की जगह दूध पीने लगे इंसान...। महामारी कोरोना की दो वर्ष की त्रासदी के उपरान्त नव वर्ष-2023 के आगमन और 2022 की विदाई के मौके पर राजस्थान में इस वर्ष भी जगह-जगह विभिन्न धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाओं, प्रबुद्ध नागरिकों, दुकानदारों ने शराब से दूर रहने के लिए हजारों-लाखों लोगों को मीठा एवं मेवा युक्त दूध पिलाने की शुरुआत की। वह बहुत ही श्रेष्ठ, अच्छी और लोक कल्याणकारी भावना की दिशा में सराहनीय पहल है। नये साल के जश्न के नाम पर क्या-क्या हो रहा है और शराब की खपत जिस तेज रफ़्तार से बढ़ रही है, वे तमाम बुरी स्थितियाँ किसी से भी छिपी हुई नहीं हैं। सबसे अधिक चिन्ता की बात यह है कि युवा पीढ़ी में चाहे शराब हो या अन्य नशीले पदार्थों का उपयोग हो, वे जिस तेजी से उनकी गिरफ़्त में आ रहे हैं, उससे देश की भावी पीढ़ी का भविष्य गर्त में जा रहा है। जीवन अन्धकारमय हो रहा है। चौंकाने वाली बात यह है कि इस वर्ष भी नये साल की खुशियाँ मनाने के नाम पर अकेले राजस्थान में ही महज एक दिन में युवा एवं अन्य लोग अरबों रुपए की शराब गटक गए। होटल-रेस्त्राओं, क्लब, फार्म हाउसों, रिसोर्ट और अन्य स्थानों पर पूरी रात भर पियक्कड़ों का धमाल-हुड़दंग मचता रहा। दु:खद यह भी है कि अब पाश्चात्य रंग में रंगी एवं आधुनिकता में डूबी महिलाएँ और युवतियाँ भी शराब के जाम छलकाने लगी हैं। उन्हें शर्म-लज्जा-मर्यादाओं का कोई भय नहीं रहा, तभी तो हर साल शराबियों की संख्या, शराब का उत्पादन और उसकी बिक्री में तेजी से वृद्धि हो रही है। शराब की पनपती बुराई राष्ट्र-समाज-परिवार में कैसी-कैसी विकृतियाँ एवं बर्बादी के हालात पैदा कर रही हैं, उनके रोजाना वीभत्स उदाहरण हम सब के सामने आ रहे हैं। अब तक न जाने कितने हजारों-लाखों परिवारों के लिए शराब तबाही का कारण बन चुकी है। लाखों लोगों को विभिन्न बीमारियों से ग्रसित करके शराब लील गई है। हजारों-हजारों बच्चे अपने शराबी परिवारजनों के नहीं रहने से अनाथ हो गए। लाखों महिलाओं का समय से पूर्व सुहाग उजड़ गया। बहनें अपने भाइयों से जुदा हो गईं। माँ-बाप अपने शराबी बेटों के कारण फटेहाल एवं नारकीय जिन्दगी भोगने को विवश हैं। शराब के कारण एक तरफ प्रतिदिन सड़क हादसों में अकाल मौत बढ. रही है और दूसरी तरफ आपराधिक मानसिकता में वृद्धि होने से छोटी-छोटी मासूम बच्चियों तक के साथ दुष्कर्म एवं बच्चों से कुकर्म हो रहे हैं। बूढी-अधेड़-विकलांग-नेत्रहीन महिलाओं तक के साथ नशेबाज बलात्कार करने से नहीं चूक रहे। कई ऐसी भी अत्यन्त शर्मनाक घटनाएँ प्रकाश में आ चुकी हैं, जिनमें दारूबाज नशेड़ियों ने मूक पशुओं के साथ भी दुष्कर्म कर डाला। शराब सर्वत्र विनाश का कारण बन रही है। ऐसे में नये साल की शुरुआत में लोगों को शराब से बचाने के लिए दूध पिलाने की मुहिम नि:सन्देह एक अच्छा कार्य है। जिन लोगों ने भी उस दिन शराब की जगह दूध पीया और पिलाया, उनका यह नेक कार्य भविष्य में एक दिन उनके जीवन के लिए अच्छा चरितार्थ हो सकता है।

अब चाहे गरीब हो या अमीर, शराब की बुराई ने किसी को नहीं छोड़ा। नववर्ष के जश्न पर तो शराब बहुत अधिक बिकने लगी है। कच्ची-पक्की, देशी-विदेशी सब तरह की शराब कहर ढहा रही है। खबर है कि नये साल पर राजस्थान में दारू पीकर वाहन चलाते करीब 600 एक्सीडेण्ट के मामले घटित हुए, जिनमें 4 दर्जन से भी अधिक लोगों की मौत हो गई। 50-60 स्थानों पर

शराबियों के बीच हुए झगड़ों एवं मारपीट में 200 से भी अधिक लोग घायल हुए। पुलिस ने दारू पीकर उत्पात मचाते एवं अशान्ति पैदा करते कई हजार लोगों को मौके से पकड़ा। रेप और ज्यादती की भी अनेक शर्मनाक घटनाएँ घटित हो गईं। इन सभी तरह के हालातों के बीच अब हमको शराब से बचाने के लिए दूध पिलाने की शुरुआत, किसी अन्धेरे में रोशनी से कम नहीं है। काश! शराबी एवं नशेबाज दारू एवं सभी प्रकार के नशे छोड़कर दूध पीना एवं पिलाना शुरू कर दें, तब देश-प्रदेश में राम राज्य का सपना भी साकार होने में देर नहीं लगेगी। उन तमाम लोगों को साधुवाद जिन्होंने नये साल पर लोगों की भलाई और उन्हें बुराई से बचाने की पुनीत भावना के साथ जगह-जगह मीठा एवं ताजा दूध पिलाया। ऐसी नेक मुहिम आगे भी विशेष पर्व एवं उत्सवों पर जारी रहनी चाहिए ताकि एक न एक दिन शराबियों और नशेड़ियों को सद्बुद्धि आ सके। वे भी दारू से तौबा कर पाएँ और राष्ट्र, समाज, परिवार के अच्छे नागरिक बन सकें। यूँ भी तमाम धर्म, मज़हब के महापुरुषों ने शराब को जीवन की घोर बर्बादी और महाविनाश का कारण बताते हुए इससे दूर रहने को मानवीय श्रेष्ठ कर्म बताया है। इसलिए वक्त की ज़रूरत है कि हम नशे से दूर और मुक्त हों।

-तिलक मार्केट के पास, अलवर (राज.)

धन की गति

श्री अजीत भण्डारी

ग्रन्थों में उल्लेख है तथा व्यवहार जगत में भी यह सत्य दृष्टिगोचर होता है कि धन की तीन गतियाँ होती हैं-दान, भोग और नाश।

इसमें कोई संशय नहीं है कि धन की श्रेष्ठ गति दान ही है और इसे सभी स्वीकार भी करते हैं। अब प्रश्न यह है कि समझने और स्वीकार करने के बाद भी अंगीकार कितने और कैसे करते हैं?

आज के जमाने में असमानता बढ़ी है। पहले समय में लोग धन का सञ्चय करना जरूरी समझते थे। ठीक भी है, विपत्ति, तकलीफ के समय तो सञ्चित धन ही काम आता है। लेकिन कुछ लोग स्वयं की तकलीफ में भी कृपण रहकर आदतन अपने शरीर और जरूरत के लिए भी खर्च नहीं करते हैं। वे वर्तमान खराब करके भविष्य के लिए आशा संजोते हैं।

हालाँकि कोरोना काल के बाद लोगों की सोच, समझ और चिन्तन में काफी फर्क आया है। कोरोना की प्राकृतिक आपदा ने लोगों को झकझोर दिया है, कुछ अलग सोचने को मजबूर किया है। कोरोना काल में 75% लोगों की परिस्थिति बदल गई, कामकाज कमजोर हो गए, वहीं 10-12% लोगों की चाँदी हो गई, कमाई बढ़ गई। ऐसी दु:खद परिस्थिति में हमने देखा कि किस प्रकार सैंकड़ों/हजारों लोगों ने वक्त की नज़ाकत देखकर अपने धन का कोरोना पीड़ितों एवं गरीबों के लिए सदुपयोग किया। इस तरह अपने धन का जरूरतमन्दों में सहयोगार्थ समर्पित करना सेवा और मानवता है।

दान में जो श्रेष्ठ दान बताया गया है, वह है अभयदान। किसी भी मरते हुए जीव को जीवन देना, उसे बचाना अभयदान है। सुपात्रदान भी उत्कृष्ट श्रेणी में आता है। सुयोग्य व्यक्तियों, महापुरुषों, साधु-सन्तों को आहार, पानी, वस्त्र, औषध, स्थान आदि देना सभी सुपात्रदान में आते हैं।

हर किसी के हाथ से पैसा निकलता नहीं है, दान होता नहीं है, हाथ खींचकर (Tight) रखते हैं। अपनी क्षमता और श्रद्धा के अनुसार दान जरूर दीजिए, यह पुण्यवानी का बन्ध करता है तथा दिया हुआ दान कभी निष्फल नहीं जाता है। अपनी जरूरत के लिए गृहस्थी-घर-परिवार की आवश्यकतानुसार उपयोग/उपभोग भी कीजिए, लेकिन मेहनत से सञ्चित धन की तीसरी गति नाश मत होने दीजिए।

-बी-1, दास्या हाऊस, लोको रोड़, रातानाड़ा, जोधपुर-342011

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 64
ISSN 2249-2011

जीवन-व्यवहार

यह जीवन काँच का बाजा

साध्वीयुगल निधि-कृपा

इस दुनिया में ऐसा कोई नहीं जो सुप्रीम कोर्ट से आने वाली मौत का स्टे-ऑर्डर ला सके। हर आती हुई श्वास जाती हुई श्वास से जुड़ी है, तभी कहा जाता है- ''जन्म लेते ही समय की कुदाली कब्र खोदना प्रारम्भ कर देती है। जब ज़िन्दगी का ट्रान्सफर होगा तब शरीर, स्थान, परिवार, रुचि और वातावरण सब कुछ बदलेगा।''

दुनिया के काम कभी, किसी से पूरे न होंगे।
अफसोस यही रहेगा, एक दिन हम न होंगे।।

आँखे मूँदते ही सब पराये हो जायेंगे। जब मेरे साथ कुछ भी नहीं जायेगा तो क्यों न मेरे-तेरे का क्लेश समाप्त करके संसार के समस्त जीवों से मैत्री स्थापित कर लूँ। मानव जीवन का मंगल राग में नहीं त्याग में है। जलते दीपक को लेकर हवा के सामने चलने जैसी ज़िन्दगी है। मृत्युरूपी तेज हवा का एक झोंका जीवन दीप को बुझा देता है। मृत्यु अत्यन्त गुप्त रूप से जीवन के साथ समानान्तर चल रही है। चाहे हम उसे देखें या न देखें। हम जानें या न जानें किन्तु वह हर पल हमारे संग में है। यह सुन्दर और सुखी जीवन हवा में उड़ते बुलबुले जैसा चञ्चल है। समाज में होने वाली हर मौत पैगाम लेकर आती है। मैं जा रहा हूँ अब तुम्हारी भी बारी आने वाली है। मृत्यु भी जीवन के कार्यों की जाँच करने वाली सुन्दर सलोनी सन्ध्या है। अशुभ आज नहीं तो शुभ कल नहीं। मौत चाहे एक पल की घटना है, परन्तु उसे सुधारने के लिए ज़िन्दगी भर सावधानी रखनी पड़ती है। यहाँ आपका कुछ नहीं है, क्योंकि न कुछ लेकर आये थे और न कुछ लेकर जायेंगे। जीने की इच्छा ही सब दु:खों की जननी है।

जिस रावण के एक लाख पुत्र, सवा लाख नाती।
उसके घर में आज, न दिया न बाती।।

मृत्यु का दर्शन ज़िन्दगी का असली दर्शन है और मृत्यु का स्वाध्याय सच्चा स्वाध्याय है। मृत्यु वह सोने की चाबी है जो अमरत्व के भवन को खोल देती है। यहाँ सभी चीजों पर नश्वरता का कलंक लगा हुआ है। जीवन रहते हुए जिसे मरण का बोध हो जाय वह धार्मिक है। आदमी का असली जन्म उस दिन होता है जिस दिन मृत्यु याद आती है।

यह जीवन काँच का बाजा, अचानक टूट जायेगा।
समय की एक ठोकर से, ये गिरकर चूर हो जायेगा।।

जन्म लेने में सिर्फ नौ माह का समय लगता है, परन्तु प्राप्त जन्म को सार्थक बनाने में सारा जीवन भी छोटा पड़ जाता है। शरीर रोग ग्रस्त है, जीवन मृत्यु ग्रस्त है, आत्मा कर्म ग्रस्त है अत: अमरत्व के पुरुषार्थ में संकल्पबद्ध होना। चिन्तन करना-यहाँ आज नहीं तो कल सभी उजड़ेंगे। वह बस्ती ही मरघट है, ऐसी बस्ती में हर घर प्रतीक्षालय है। जहाँ से जाना है वहाँ की बातों में उलझकर क्या मिलेगा? जो आत्मा को जान ले वह कभी मौत से नहीं डरता। वियोग-विदाई-विसर्जन-विनाश इन चार 'वि' की सच्चाई को जान लेने के बाद धन की अन्धी दौड़ मन्दी हो जायेगी।

प्रतिपल खयाल बना रहे, आप यहाँ के प्रवासी हो, रहवासी नहीं, नित्यवासी नहीं। जीने की कला का सर्वोत्तम सूत्र है बाहर में सब के बन कर जीओ, किन्तु भीतर में सजग रहो, सचेत रहो, अकेले रहो। आज और कल के फासले में दुर्घटना, आत्महत्या, बीमारी एवं मृत्यु होने की भी सम्भावना है। मौत एक पल में वह सब कुछ छीन लेगी, जिसको जुटाने में तुमने जीवन का हर पल लगाया है। मृत्यु जीवन का अन्तिम सत्य है। इस परिवर्तनशील जीवन में धर्म शाश्वत है। स्वयं मृत्यु भी उसके आगे घुटने टेक देती है।

ज़िन्दगी कहती है दुनिया से तू अपना दिल लगा और मौत कहती है ऐसी दिल्लगी अच्छी नहीं। एक्सपायर होने से पहले रिटायर होने में पूर्ण आनन्द है। हर तरकीब खोटी पड़ गई, आखिर ज़िन्दगी छोटी पड़ गई। श्मशान मृत्यु का प्रतीक है।

जीवन एक वृक्ष है फानी, बचपन पत्ते शाख जवानी।
फिर है पतझड़ शुष्क बुढ़ापा, इसके बाद खत्म कहानी।।

दूसरे मर रहे हैं, हम नहीं मरेंगे, इस भ्रम को मिटाना ही साधना का सार है। आश्चर्य इस बात का है कि जब आग का लगना निश्चित है फिर भी लोग अपने घर में घी के घड़े क्यों इकट्ठे करते हैं। जब आग लगेगी तब बुझाना कितना कठिन होगा। जब सब कुछ यहीं रह जाना है तो उसे मेरा क्यों कहना?

-संकलनकर्त्ता, श्री कस्तूरचन्द बाफना, जलगाँव-425001 (महाराष्ट्र)

सुख की छाँव में रहते हैं

श्रीमती भारती जैन

(तर्ज : नज़र में रहते हो, मगर तुम नज़र नहीं आते)

सुख की छाँव में रहते हैं, मगर सुख नज़र नहीं आते,
दस्तक देता सुख बार-बार, हम सुन नहीं पाते।
विपदा दुःखियों की हर लें तो सुख है,
होठों पर मुस्कान जो भर दें तो सुख है।
देने का भाव जो मन को भा जाए,
सुख की तलाश ना मन को भटकाए।
समझ नहीं पाते सुख है क्या, समझ नहीं पाते,
दस्तक देता सुख बार-बार, हम सुन नहीं पाते।।
कोई प्रलोभन डिगा न पाए तो सुख है,
दिल में समता भाव जगाएँ तो सुख है।
संयम के साथ जो जीना आ जाए,
सुख-दुःख का भँवर ना उलझा पाए।
देख नहीं पाते सुख है कहाँ, देख नहीं पाते,
दस्तक देता सुख बार-बार, हम सुन नहीं पाते।।
झरने-सा निर्मल बन जाए तो सुख है,
राग-द्वेष दिल में न समाये तो सुख है।
बीता भूलें और आगे बढ़ जाएँ,
दरिया सुख का ना कभी सुखा पाएँ।
सोच नहीं पाते सुख किधर, सोच नहीं पाते,
दस्तक देता सुख बार-बार, हम सुन नहीं पाते।।
सुख की छाँव में रहते हैं मगर सुख नज़र नहीं आते।।

-महारानी फार्म, जयपुर (राजस्थान)

कोई साथ नहीं जायेगा

श्री विजेन्द्र जैन

(तर्ज :: फूल तुम्हें भेजा है खत में)

मिली हैं हमको जितनी साँसें,
कोई ना कम कर पाएगा।
घुट-घुट कर तू जीता क्यूँ है,
उम्र पूरी कर जायेगा।।

हँस-हँस कर तू जी ले भैया, कल की चिन्ता क्यूँ करनी।
अपना तन भी अपना नहीं है, बेटा, बेटी, क्या पत्नी।।

चिन्ता में क्यों जी रहा तू, जी ले आज खुशी से।
जाना सबको ही एक दिन है, अपनी अपनी बारी से।।

क्यों इतना मोह, कर रहा तू,
कोई साथ नहीं जायेगा।
धर्म-कर्म तू कर ले अच्छे,
साथ वह ही तेरे जाएगा।।

व्याधि पीड़ा, हारी बीमारी, सह ले तू समभाव से।
हाय तौबा तू करता क्यूँ है, यह तो है कर्मों के प्रभाव से।।

अन्त समय जब आएगा तेरा, कुछ भी नहीं कर पायेगा।
याद आयेगी गुरुवर की बातें, जब फिर तू पछताएगा।।

अभी से कर ले करणी अच्छी, सच्चा सुख तू पायेगा।
अरिहंतों का कर ले सुमिरन, जीवन सफल हो जाएगा।।

-77/235, अग्रवाल फार्म मानसरोवर, जयपुर (राज.)

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 66
ISSN 2249-2011

स्वास्थ्य-विज्ञान

शारीरिक स्वास्थ्य पर पंचकारण समवाय का प्रभाव

डॉ. चंचलमल चोरड़िया

चेतनाशील प्राणी में किसी भी कार्य अथवा प्रवृत्ति की क्रियान्विति मुख्य रूप से पाँच बातों की समन्वित उपलब्धता पर निर्भर करती है, जैसे-1. वस्तु का स्वभाव, 2. काल का प्रभाव, 3. नियति, 4. कर्म विपाक और 5. पुरुषार्थ।

1. वस्तु का स्वभाव-रोग जीवित प्राणी की जीवन प्रक्रिया का एक हिस्सा है। शरीर का स्वभाव सड़ना, गलना, बनना अथवा नष्ट होना है अर्थात् रोग शरीर का स्वभाव है। जब आत्मा अपने शुद्ध स्वरूप में आ जाती है तो उसे किसी भी प्रकार के रोग की अनुभूति नहीं होती। आम के बीज से ही आम पैदा होगा, बबूल का बीज बोकर आम प्राप्त नहीं किया जा सकता। आँख का स्वभाव देखना है। अत: आँख न तो सुन सकती है और न बोल सकती है। आँख की खराबी से आँख का ही रोग होगा, कान का नहीं। बच्चे का जन्म महिलाओं के गर्भ से ही सम्भव है, पुरुष से नहीं। क्योंकि पुरुषों में प्रजनन के लिए आवश्यक अंग नहीं होते। इसी कारण जिन जीवों (एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय) के आँख, कान आदि इन्द्रियाँ नहीं होती, उन जीवों के उनसे सम्बन्धित रोग भी नहीं हो सकते। जिसके जो अंग, उपांग, इन्द्रियाँ और अवयव होते हैं, उनसे सम्बन्धित ही रोग हो सकते हैं। इसी प्रकार निर्जीव पदार्थों में रोगों की अनुभूति नहीं हो सकती, क्योंकि रोग, पीड़ा, दर्द उनका स्वभाव नहीं होता है।

2. काल का प्रभाव-जिस प्रकार एक समान धरती, पानी और परिश्रम के बावजूद गर्मी की फसल सर्दी में और सर्दी की फसल गर्मी में नहीं उग सकती, उसी प्रकार रोग भी काल से प्रभावित होते हैं। सर्दी में लू (गर्मी) और गर्मी में सर्दी सम्बन्धी रोग प्राय: नहीं होते। बाल्यकाल में शरीर का विकास जितनी तीव्रता से होता है उतना युवा एवं वृद्धावस्था में नहीं होता। बचपन में चञ्चलता, अस्थिरता होती है, युवावस्था में जोश होता है, लेकिन वृद्धावस्था में ये नहीं होते हैं। वृद्धावस्था में ही प्राय: बालों का सफेद होना, दाँतों के गिरने के बाद पुन: न आना, झुर्रियाँ आदि पड़ना होता है। शरीर में हम तीनों अवस्थाओं का परिवर्तन स्पष्ट देखते हैं। इसी कारण अलग-अलग अवस्थाओं में शरीर की शक्ति तुलनात्मक दृष्टि से अलग-अलग होती है। प्राय: गहरी निद्रा रात में ही क्यों आती है? जनसाधारण की प्रात:काल ही मल त्यागने की प्रवृत्ति क्यों होती है? इसका कारण यही है कि काल जीवनशैली को प्रभावित करता है तथा सभी चिकित्सक भी मौसम, समय एवं अवस्था के अनुरूप भोजन, श्रम और आराम करने हेतु परामर्श देते हैं।

3. नियति का महत्त्व-बहुत से व्यक्ति स्वास्थ्य के प्रति पूर्ण सजग, सतर्क एवं प्राकृतिक सिद्धान्तों के अनुरूप नियमों का पालन करने के बावजूद रोगग्रस्त हो जाते हैं, जबकि कुछ व्यक्तियों को स्वास्थ्य के नियमों का उल्लंघन करने के बावजूद तुरन्त रोग नहीं होते, ऐसा क्यों? कोई भयंकर दुर्घटना से ग्रसित होने के पश्चात् भी उससे प्रभावित नहीं होता। जबकि कुछ अकारण मौत के मुँह में चले जाते हैं। कभी-कभी तड़पता व्यक्ति भी नहीं मरता है और दूसरी तरफ बाह्य रूप से पूर्ण स्वस्थ दिखने वाला संसार से तुरन्त विदा हो जाता है। वंशानुगत अथवा छुआछूत के रोग सभी को समान रूप से परेशान क्यों नहीं करते? सभी व्यक्तियों को अलग-अलग वातावरण, परिस्थितियाँ, संयोग-वियोग, अनुकूलताएँ-प्रतिकूलताएँ क्यों मिलती हैं? इन सारी

बातों में नियति अथवा होनहार की ही मुख्य भूमिका होती है। खेत में डाले गए सभी बीज फल नहीं देते। हमें घर, परिवार, समाज और राष्ट्र का जो वातावरण मिलता है, उसमें नियति प्रमुख होती है। सभी रोगी एक जैसे नहीं होते हैं। रोग एवं मृत्यु की सभी के अलग-अलग प्रक्रिया होती है। एक-सी परिस्थिति, वातावरण, खान-पान, रहन-सहन के बावजूद सभी को एक जैसे रोग नहीं होते। सभी के उपचार का सही निदान नहीं होता। सही चिकित्सक अथवा दवा समय पर उपलब्ध नहीं होती अथवा उपचार की व्यवस्था नहीं होती। कहने का तात्पर्य यही है कि जैसा नियति को मञ्जूर है, वैसी ही परिस्थिति का निर्माण स्वत: हो जाता है।

4. कर्म विपाक (कर्मों का उदय में आकर फल देना)-जब तक शुभ-अशुभ कर्म उदय में नहीं आते, तब तक उनका प्रभाव नहीं होता। जैसे कोई फसलें कुछ दिनों में, तो कुछ फसलें कुछ महीनों में मिल जाती हैं, जबकि बहुत से फल वर्षों बाद प्राप्त होते हैं। इसी कारण कभी-कभी बुरे कार्यों का फल तुरन्त नहीं मिलता तथा पूर्वार्जित कर्मों के विपाक के कारण अच्छा आचरण करते हुए भी प्रतिकूलताएँ मिलती हैं।

5. पुरुषार्थ का महत्त्व-स्वभाव, काल, नियति एवं कर्म विपाक का नियन्त्रण हमारे हाथ में नहीं है। हमारे नियन्त्रण में है, हमारा सम्यक् पुरुषार्थ। स्वभाव, काल, नियति और कर्म का प्रभाव अवश्य होता है, परन्तु सम्यक् पुरुषार्थ द्वारा उनके प्रभाव को कुछ अंशों में घटाया अथवा बढ़ाया जा सकता है। सारे भौतिक वैज्ञानिक विकास का कारण मानव द्वारा उस सम्बन्ध में किया गया पुरुषार्थ ही है। अत: पुरुषार्थ मुख्य है। स्वास्थ्य के नियमों का सम्यक् आचरण और प्रकृति से सहयोग करना, अपनी शक्ति का दुरुपयोग या अपव्यय नहीं करना और क्षमता के अनुरूप जीवन का विकास करना, यही अपेक्षित है। सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन एवं सम्यक् पुरुषार्थ द्वारा ही हम शान्त, सुखी, स्वस्थ एवं दीर्घ जीवन जीते हुए अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं। अत: स्वास्थ्य की सम्पूर्ण चर्चा हमारे सम्यक् पुरुषार्थ पर ही आधारित होती है। उसी के आधार पर हम रोग की स्थिति में निदान, उपचार और उसकी रोकथाम कर सकते हैं।

-फ्लेट नं. 301, रिद्धि टॉवर, रतन नगर, एम्स रोड़, जोधपुर-342008 (राज.)

मुस्कराना सीख ले

संकलन : श्री महेश नाहटा

ऊपर जिसका अन्त नहीं, उसे आसमाँ कहते हैं।
जहाँ में जिसका अन्त नहीं, उसे माँ कहते हैं।।

सत्य अहिंसा के बिना कोई धर्म नहीं है।
'जीओ और जीनो दो' से बड़ा कोई सिद्धान्त नहीं है।।

जग में उसने बड़ी बात कर ली।
जिसने अपने आपसे मुलाकात कर ली।।

जिनवाणी पर विश्वास, साधु-सन्तों के रहना पास।
मत करना किसी से आस, जीवन को बनाना खास।।

कोई दगा देता है, कोई सजा देता है।
एक माँ का दिल है, जो सदा दुआ देता है।।

अपने दु:खों से रोने वाले, मुस्कुराना सीख ले।
दूसरों के दर्द में आँसू बहाना सीख ले।।

रात्रिभोजन-त्याग से, कटे कर्म जञ्जीर।
हिंसा भी लगती नहीं, स्वस्थ रहे शरीर।।

गम की अन्धेरी रात में, दिल को यों बेकरार न कर।
सुबह जरूर आएगी, सुबह का इन्तज़ार कर।।

दे गया सो ले गया, खा गया सो खो गया।
जोड़ गया सिर फोड़ गया, दबा गया झक मार गया।।

गुरु गगन से ऊँचा, समुद्र से भी गहरा है।
धर्म का महल बस, उनके ही दम पे ठहरा है।।

-नगरी, धमतरी (छत्तीसगढ़)

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 68
ISSN 2249-2011

जीवन-मूल्य

समय के हर क्षण का सम्मान करें

श्री दिलीप गाँधी

समय एक अमूल्य धन है। समय की अहमियत हमें जिन्दगी में सफलता की ओर ले जाती है। समय एक बार बीत जाए तो वह लौटता नहीं है। इस दुनिया में समय से अधिक मूल्यवान न पैसा है और न ही ताकत, क्योंकि जब समय आपका साथ नहीं देता तो बाकी चीजें भी किसी काम नहीं आतीं। जीवन जीने के लिए दुनिया में सभी को बराबर समय दिया गया है, लेकिन हर व्यक्ति इसका उचित प्रयोग नहीं कर पाता। अगर समय रुक जाएगा तो यह सम्पूर्ण प्रकृति चक्र ही रुक जाएगा। समय जीवन का आधार है, तो उन्नति तथा अवनति का परिणाम भी है। इसलिए जीवन का मूलमन्त्र है। समय के साथ चलना और समय के महत्त्व को समझना चाहिए। सफल लोग दुनिया में अलग काम नहीं करते, वे उस काम को अलग तरीके से करते हैं। वे लोग अपने समय के प्रत्येक हिस्से को ज़रूरी कामों में इस्तेमाल करते हैं। दुनिया में असफलता का कारण है- समय पर सही कार्य न करना। अगर आप भी अपने जीवन में कुछ बनना चाहते हैं, तो सबसे पहले अपना लक्ष्य निर्धारित करें और समय का सदुपयोग करते हुए उसी के अनुरूप कार्य करें। यह बात तो हम सभी लोग जानते हैं कि समय सफलता की कुञ्जी है, लेकिन हमारे जीवन की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि हम अपने समय का उपयोग किस प्रकार कर रहे हैं। समय तो बिना किसी की प्रतीक्षा किए लगातार अपनी रफ़्तार से चल रहा है। कोई राजा हो या फ़कीर, समय ने कभी किसी का इंतज़ार नहीं किया। हम सभी को हमेशा समय का सदुपयोग करना चाहिए और अपने हर काम को समय के अनुसार करना चाहिए। समय को बर्बाद करना जीवन को बर्बाद करने जैसा है। कबीरदासजी ने कहा है-

काल करे सो आज कर, आज करे सो अब।
पल में परलै होएगी, बहुरि करेगो कब।।

अर्थात् हमें अपने किसी भी काम को कल पर नहीं टालना चाहिए। बल्कि उसे आज ही पूरा करने की कोशिश करनी चाहिए।

अगर हम किसी भी काम को टालते रहते हैं कि आज नहीं कल कर लेंगे, तो ऐसा करने से वह थोड़ा सा काम भी बहुत बढ़ जाएगा और एक समय ऐसा आएगा कि वह काम फिर कभी पूरा नहीं हो पाएगा। एक बहुत पुरानी कहावत है कि-'समय कभी किसी का इंतज़ार नहीं करता।' जिसका सीधा-सा अर्थ है कि हमारी हर सफलता, आशा और इच्छा समय पर ही निर्भर है। इसीलिए समय का सदुपयोग करना हम सभी के लिए बहुत ज़रूरी है। समय बहुत ही शक्तिशाली होता है, जो व्यक्ति समय को बर्बाद करता है, समय उसको बर्बाद कर देता है। इसलिए, अगर आप अपनी ज़िन्दगी में सफल होना चाहते हैं तो आपको अपने समय की क़दर करनी होगी। समय सभी के लिए एक मूल्यवान सम्पदा है, इसलिए समय के महत्त्व को सभी व्यक्तियों को समझना चाहिए और समय के साथ कार्य करना चाहिए। क्योंकि जब प्रकृति के हर एक घटक समय के साथ कार्य कर रहे हैं तो मनुष्य उससे अछूता कैसे रह सकता है?

यदि कोई व्यक्ति एक सफल जीवन बिताना चाहता है, तो उसे सही समय पर सही फैसले लेने होंगे और सही दिशा में परिश्रम करना होगा। जिन व्यक्तियों ने समय का सदुपयोग किया है, वे आज सफलता की ऊँचाइयों को छू रहे हैं, इसलिए समय का महत्त्व समझ कर सभी लोगों को समय का सदुपयोग करना चाहिए।

-117, कैलाशपुरी, निम्बाहेड़ा रोड़,
चित्तौड़गढ़-312001 (राजस्थान)

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 69
ISSN 2249-2011

प्रेरक-प्रसङ्ग

कैंसर तुम्हारा स्वागत है

श्री वीरेन्द्र कांकरिया

जिनवाणी के अवलम्बन से ही अन्य आत्माएँ संसार-सागर से तिरी हैं, तिर रही हैं और भविष्य में भी तिरेंगी। जीव से शिव बनाने की कला जिनवाणी सिखाती है। देव-गुरु-धर्म की अनन्त कृपा से ऐसा एक पावन प्रसङ्ग प्रत्यक्ष आँखों के सामने घटित हुआ, जिसे शब्दों में पिरोना अत्यन्त कठिन है। फिर भी गुरु कृपा से प्रयास कर रहा हूँ।

प्रसङ्ग है सुश्राविका श्रीमती प्रियंकाजी नाहटा (धर्मसहायिका श्री पंकजजी, पुत्रवधू स्वाध्यायी श्री विमलचन्दजी नाहटा-नागौर वाले, सुपुत्री श्री नरपतचन्दजी बैद-नागौर वाले) का। आपकी आठ वर्ष और पाँच वर्ष की दो सुपुत्रियाँ हैं। प्रियंकाजी को जून 2022 में आहार करने में कठिनाई होने लगी, नागौर में इलाज नहीं बैठा, वहाँ से जोधपुर लेकर गये, वहाँ के चिकित्सकों को कुछ आशंका हुई और आगे की जाँच के लिए अहमदाबाद जाने की सलाह दी गई। पंकजजी और प्रियंकाजी अहमदाबाद गये, जाँच हुई और जिसकी आशंका थी वह ही हुआ, उनके शरीर के खाने की नली में कैंसर की गाँठ निकली। 29 वर्ष की अल्पायु में ही गम्भीर बीमारी के होने से प्रियंकाजी और उनके परिवार की मानसिक स्थिति क्या हुई होगी, विचार योग्य है। परिवार के सभी सदस्य काफी टूट से गये। तब पंकजजी ने हिम्मत बँधाते हुए कहा-''तुम्हें कैंसर से नहीं लड़ना है, कैंसर को तुमने से लड़ना है, ऐसा आत्मविश्वास रखो।'' उनके भाई श्री विपिनजी बैद का निवास स्थान चेन्नई में मेरे घर के सामने एक माले में है। आगे का इलाज कराने वे अपने भाई के यहाँ 5 जुलाई को चेन्नई आ गये।

चेन्नई के अपोलो हास्पिटल के चिकित्सकों से सलाह ली गयी। 5 कीमो, सर्जरी और 3 कीमो थैरेपी से ही रोग मुक्ति सम्भव होना बताया गया और अन्य कोई विकल्प नहीं है। 7 जुलाई को पहली कीमो थैरेपी के लिए भर्ती किया गया। दो दिन तक प्रियंकाजी को असहनीय पीड़ा हुई, छटपटाने लगे। रोते-रोते बार-बार बोलने लगे कि मुझे यहाँ से ले चलो, मुझसे सहा नहीं जाता। 9 जुलाई की सन्ध्या को घर आये। तब पहली बार जिनवाणी का स्वाध्याय कराने सामने उनके घर गया, स्वाध्याय सुनकर उन्हें कुछ शान्ति की अनुभूति हुई।

10 जुलाई से प्रतिदिन प्रात:काल की सामायिक साथ में करने लगे। नित्य शाम को घण्टा-डेढ़ घण्टा उनके साथ स्वाध्याय करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। आगमों के अर्थ का स्वाध्याय, गुरु भगवन्तों के प्रवचनों का चिन्तन एवं भजनों के गाने से उन्हें आत्म-समाधि मिलती। तीन चिन्तन उन्हें प्रतिदिन करने को कहा-1. मेरे जीवन में जो भी प्रतिकूलता आयी है, वह मेरे अशुभ कर्मों के उदय से आयी है। 2. इसमें किसी भी निमित्त का कोई दोष नहीं है, निमित्त सदा निर्दोष होता है। 3. अब मुझे आर्त्तध्यान करके नये कर्मों का बन्धन नहीं करना है। ये तीनों सूत्र उनके रोम-रोम में बस गये। ये वेदना मेरे ही पूर्व के अशुभ कर्मों का परिणाम है, अब मुझे किञ्चित्मात्र भी आर्त्तध्यान नहीं करना है। नागौर में थे तब तक उन्हें धर्म की विशेष समझ नहीं थी। लेकिन अब इस भयंकर असाता वेदनीय कर्म के उदय में मोहनीय कर्म का क्षयोपशम हुआ। अब घर में भी अकेले बैठकर घण्टों स्वाध्याय करते रहते, सामायिक नहीं कर पाते तो भी मुँहपत्ति लगाकर ही स्वाध्याय-जाप आदि करते थे।

कुछ दिनों के पश्चात् दूसरी कीमो के लिए भर्ती किया गया। वे हास्पिटल में भी मुँहपत्ति लगाकर ही स्वाध्याय करते। डॉक्टर ने पूछा-'यह सब क्या है?'

उत्तर दिया गया–'यह जैन के लिए जरूरी है।' 'जेलर' और 'समकित का संग–मुक्ति का रंग' आदि पुस्तकों को हॉस्पिटल ले जाते। इनके स्वाध्याय से उनकी सहनशीलता में वृद्धि होने लगी। प्रतिदिन सामायिक में उत्तराध्ययनसूत्र, दशवैकालिकसूत्र के चार अध्ययन और ज्ञाताधर्मकथासूत्र के कुछ अध्ययन के अर्थों का स्वाध्याय साथ में किया। लवलीन होकर जिन भावों से वे श्रवण करते थे, वह अद्भुत था। उत्तराध्ययनसूत्र में वर्णित अनाथीमुनि के अध्ययन के श्रवण का विशेष प्रभाव पड़ा और उनकी अनुभूति में आने लगा–मेरे श्रावकजी, पीहर पक्ष, ननिहाल पक्ष सभी दिन–रात मेरी सेवा में खड़े हैं। डॉक्टर, औषधि आदि सब उत्तम हैं, पर कोई भी मेरी वेदना को दूर करने में समर्थ नहीं है। अब स्वास्थ्य लाभ होने पर अधिकांश समय देव–गुरु–धर्म की शरण में ही लगाना है।

जैसे–जैसे स्वाध्याय का रस बढ़ता गया, उनका संसार का रस घटता गया। जब चेन्नई आये, तब एक ही चिन्ता थी कि मुझे कुछ हो गया तो परिवार वाले बच्चों को कैसे सम्भालेंगे? आज यह स्थिति है कि वे अपनी बच्चियों से भी 10–12 दिन में एक बार बात करते हैं। अब धर्म के अलावा अन्य किसी भी विषय में बात करना उन्हें नहीं सुहाता है। कुछ आध्यात्मिक ग्रुप के अलावा सभी व्हाट्सएप्प ग्रुप से वे हट गये। वेदना को समता से सहते और असहनीय पीड़ा होने पर हस्ती चालीसा, भजन और स्वाध्याय करने से कुछ ही देर में समाधि प्राप्त करते। हॉस्पिटल में कई बार जब कीमो की वेदना असहनीय हो जाती तो फोन कर देते कि आप मुझे मांगलिक सुना दो, कुछ स्वाध्याय करा दो, इसी से मुझे शान्ति मिलती है।

डॉक्टर शरीर का इलाज करते रहे और जिनवाणी आत्मा को सम्भालती रही। 27 सितम्बर को सर्जरी कराने के लिए घर से रवाना होते समय उनके चेहरे पर ऐसी चमक थी कि मानो कहीं विश्वभ्रमण करने जा रही हैं। पूरे परिवार की आँखें भीगी हुई थी, पर वे आनन्द में थी। वे कहती कि जब शरीर ही मेरा नहीं, तो मैं किस बात की चिन्ता करूँ? सर्जरी से पूर्व आचार्यश्री नित्यानन्दजी म.सा. के दर्शनार्थ ले गये तब उन्होंने आचार्यश्री से कहा–''मुझे ऐसी मांगलिक दीजिये कि मैं शीघ्र संयम ले सकूँ।'' ऐसी स्थिति में भी संयम की भावना, धन्य जिनवाणी माता। नमस्कार जपते–जपते और 'जिह्वा पर हो नाम तुम्हारा' भजन का सुमिरण करते–करते ऑपरेशन कक्ष में गये। लगभग 8 घण्टे तक सर्जरी चली।

सर्जरी के बाद संक्रमण न हो, इसके लिए एक अलग कमरा चाहिए था। नागौर से भी परिवार वालों का आना–जाना रहेगा, तब घर छोटा पड़ेगा। इसलिये उनके परिवार वाले एक बड़ा घर देखने लगे। लेकिन जब प्रियंकाजी को पता लगा तो वे रोने लगी और बोली–''मुझे कहीं नहीं जाना है। मुझे इसी घर में रहना है। मुझे कमरे की जरूरत नहीं है, मैं घर के किसी भी कोने में रह लूँगी। यहाँ मेरा नित्य सामायिक–स्वाध्याय और जिनवाणी का श्रवण होता है। जो किसी अन्य घर में मिलना सम्भव नहीं है।'' जिनवाणी–श्रवण करने की इतनी तड़प थी कि उनकी भावना देखकर उसी बिल्डिंग के ऊपर वाले माले में एक कमरा खाली करा दिया गया, जिसमें वे सर्जरी के बाद वहीं रुक गईं।

सर्जरी के कुछ दिनों के बाद मेरा गुरु दर्शनार्थ राजस्थान जाना हुआ। तब मैंने स्वाध्यायी बन्धु श्री तरुणजी बोहरा 'तीर्थ' से निवेदन किया कि आप अपना अमूल्य समय निकालकर उन्हें सम्भालने पधारें। श्री तरुणजी कई बार पधारे, हर बार जिनवाणी का बूस्टर डोज देकर, उन्हें मोटिवेट करके गये, उनका अनन्त आभार। सर्जरी के बाद वेदना भयंकर बढ़ती गयी, दिन भर में केवल एक रोटी की खुराक रह गयी। राजस्थान से आते ही उनके घर गया, तब वे पलंग पर लेटी हुई थी। मैंने कहा–''आप लेटे रहिये, हम स्वाध्याय करेंगे।'' जवाब मिला कि मुझे लेटे–लेटे जिनवाणी–श्रवण नहीं करनी है और सहारा लेकर बैठ गयी। लगभग डेढ़ घण्टे का स्वाध्याय करके जब मैं बाहर आया तो उनके परिवार वाले आश्चर्यचकित थे कि कुछ देर पूर्व तक वे

प्रियंकाजी को बैठने के लिए कह रहे थे और वे पाँच मिनिट भी नहीं बैठ पा रही थी। यह है श्रद्धा का चमत्कार कि जीव जब जिनवाणी में एकमेक हो जाता है, तब सारी वेदना भूल जाता है।

1 दिसम्बर को उनकी अन्तिम कीमो पूर्ण हो गयी और इलाज पूर्ण हो गया, लेकिन आज भी शरीर में बहुत कमजोरी है। कमजोरी के कारण तीन बार हॉस्पिटल में भर्ती भी करना पड़ा। थोड़ा चलने में भी वेदना होती है, पर आपका गज़ब का आत्मबल है। इन दिनों उन्होंने जो संकल्प किये, नियम लिये, इसकी एक झाँकी रख रहा हूँ।

1. जीवन भर अपनी खुशी से कोई फिल्म नहीं देखना।
2. जीवन भर किसी भी प्रकार का कोई मेकअप नहीं करना। उनसे जब कहा गया कि आपके परिवार में ही कई विवाह आदि के प्रसङ्ग बन सकते हैं तब उत्तर मिला–'अब मुझे आत्मा का शृङ्गार करना है।' आज फैशन की चकाचौन्ध में एक ही विवाह के हर प्रसङ्गों पर ब्यूटी पॉर्लर वाले को बुलाया जाता है, वहाँ जिनशासन की 29 वर्षीय वीरांगना शरीर के शृङ्गार को हेय समझती है। यही है सच्चा संवेग, यही है सच्चा निर्वेद।
3. आपने जमीकन्द का पूर्ण रूप से त्याग कर दिया। माता को देखकर उनकी दोनों नन्हीं बच्चियों ने भी जमीकन्द का त्याग कर दिया और कहा कि जब मम्मी नहीं खाती, तो हमें भी जमीकन्द नहीं खाना।
4. मुझे अपने लिये किसी भी तरह का आभूषण नहीं खरीदना। मैंने कहा कि आपकी भावना उत्तम है, पर कोई भेंट दे तो उसका आगार रखें। उत्तर मिला– ''जब सबको पता लगेगा कि मेरे खरीदने के नियम हैं, तब परिवार वाले सब भेंट करेंगे, मुझे तो आप भेंट लेने का भी त्याग करा दीजिये।'' आज जब पर्याप्त मात्रा में गहने होने पर भी गृहिणी की इच्छा होती है कि हर वर्ष कुछ नया गहना खरीदा जाये, वहाँ जिनशासन की सच्ची श्राविका ही कह सकती है कि मुझे अब संसार की कोई ऋद्धि नहीं चाहिये।
5. आँखे खुलते ही सर्वप्रथम तीन मनोरथ का भाव पूर्ण चिन्तन करना।
6. गाँव में रहते हुए सन्त–सन्तियों के दर्शन–प्रवचन श्रवण करने जाये, तो नंगे पैर ही जाना।

उनकी भावना तो पूर्ण त्याग की ही थी, कुछ आगार रखकर नियम कराये गये। एक दिन भावना भाने लगे कि मुझे पातरा लाकर दीजिये, मुझे पातरे में ही आहार करना है, इससे संयम के संस्कार बनते हैं। उनकी इच्छा है कि अपनी पुत्रियों को संयम के राजमार्ग में बढ़ाना है। मैं संसार में उलझ गयी हूँ उन्हें नहीं उलझाना। पैरों में आज भी असहनीय वेदना है, फिर भी सुविधा होते हुए भी यथासम्भव पैदल चलती हैं। कमरे में एयरकण्डिशन है पर ए.सी. तो छोड़िये यथासम्भव पंखा भी चालू नहीं करती हैं। जब एकेन्द्रिय में आत्मा दिखने लग जाती है तब उन जीवों की वेदना–विराधना भी दिखने लग जाती हैं, तभी ऐसा सम्भव हो पाता है।

उनकी माता पूछती है–''तेरी क्या खाने की इच्छा है।'' जवाब दिया–''मुझे कुछ भी खाने की इच्छा नहीं है, घर में जो भी आहार बचा है, मुझे वह दे दीजिये।'' प्राय: नारी को अपने केशों पर अधिक मोह रहता है। कीमो में उनका केश मुण्डन कराना पड़ा, परिवार वालों की आँखें भर आई, वे आनन्द में रहीं। उन्हें किञ्चित् भी केशों का मोह नहीं रहा। उनकी दादीजी का 26 दिसम्बर को देहान्त हो गया था, परिवार वाले सभी आर्त्तध्यान कर रहे थे, वह पूरे परिवार को सम्भाल रही थी, किञ्चित् भी आर्त्तध्यान नहीं किया।

पराकाष्ठा तो तब हो गयी जब वे कहने लगी कि अच्छा हुआ मुझे कैंसर हो गया। अगर कैन्सर नहीं होता तो न जिनवाणी का स्वाध्याय होता और न ही उस पर श्रद्धा होती। यह वेदना तो मेरे लिये वरदान बनकर आयी है। इसमें थोड़ा खोया और अधिक पाया है। साता छूटी पर साधना पायी है। आज जहाँ हम छोटी बीमारी की आशंका से भी घबरा जाते हैं, वहाँ जिनशासन की साधिका कैन्सर का स्वागत करती है। उनको शत–शत नमन, शत–शत अभिनन्दन।

–चेन्नई (तमिलनाडु)

जीवन-बोध क्षणिकाएँ

श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.

भेद-विज्ञानी

वही है सच्चा ज्ञानी
जो है भेद विज्ञानी।।

लेन-देन

वही स्वभाव में रह सकता,
जिसने समझ लिया,
कोई मुझे कुछ दे नहीं सकता,
ले नहीं सकता।।

आना-जाना

सब आते हैं, चले जाते हैं,
वही कुछ पाते हैं, जिन्हें जिनेन्द्र सुहाते हैं।।

कहना मान

बन्द कर दुनिया को देखकर चलना,
मान ज्ञानियों का कहना।।

मेरा स्वरूप

सिद्ध सम, स्वरूप मम।।

ऊपर उठना

चाहते हो ऊपर उठना,
किसी को अपने ऊपर जरूर रखना।।

अहं विसर्जन

अरे भाई! रो 'ना',
चाहता है कुछ होना,
तो चालू कर दे अहं को खोना।।

शोभा

वृक्ष की शोभा है
उसके फल, पुष्प और पत्र,
उसी भाँति जीवन की
शोभा है ज्ञान-दर्शन और चारित्र।।

जिनवाणी

'गगन' में चमकते सितारे,
'चमन' में महकती बहारें,
वैसे ही शोभती है उसकी ज़िन्दगी,
जो जीवन में जिनवाणी को उतारें।।

चारित्र का चाहक

सुहाती है चिड़िया की चहक,
मोगरे की महक, पर
अब तो बन गुणों का ग्राहक,
चारित्र का चाहक।।

समुद्र

मत समझ स्वयं को क्षुद्र
तू है अनन्त शान्ति का समुद्र।।

हस्ती के जैसा गुरुवर पाया

श्री गोरांश जैन

(तर्ज :: जिनवर जय तीर्थंकर.....)

हस्ती के जैसा गुरुवर पाया
उनका शरणा महान्
ये हैं रत्नसंघ की शान।।1।।
आते हैं ये तीजे पद पे
आचार्य पद है महान्
ये हैं रत्नसंघ की शान।।2।।
पैरों में थी पद्म रेखा
छुए सब नर-नार
ये हैं रत्नसंघ की शान।।3।।
चेहरे पर थी ऐसी चमक
आकर्षित सब नर-नार
ये हैं रत्नसंघ की शान।।4।।
इनके चरणों में गोरांश
शीश नमाकर करे प्रणाम
ये हैं रत्नसंघ की शान।।5।।

-आचार्य हस्ती आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान,
जयपुर (राजस्थान)

कृति की 2 प्रतियाँ अपेक्षित हैं

नूतन साहित्य

श्री गौत्तमचन्द जैन

न्याय : अहिंसक समाज का आधार-लेखक श्री प्रकाश मिश्र। **प्रकाशक**-प्राकृत भारती अकादमी, 13 ए, गुरुनानक पथ, मालवीय नगर, जयपुर-302017 (राज.) दूरभाष-0141-2520230, Email: prabharati@gmail.com, ISBN No. 978-93-92317-28-6, **मूल्य**-470/- रुपये। **प्रथम संस्करण**-2022, **पृष्ठ**-176

प्रस्तुत पुस्तक में न्याय को अहिंसक समाज का आधार निरूपित किया गया है। न्याय को विभिन्न कालों में परिभाषित करते हुए इसका विस्तृत विवेचन किया गया है। न्याय का स्वरूप देश, काल और परिस्थिति के अनुसार बदलता रहा है। लेखक ने पुस्तक के प्रारम्भ में न्याय, नैतिकता, मूल्य और कानून आदि की चर्चा की है और तत्पश्चात् लुप्त होते हुए धर्मों में न्याय की अवधारणा का विवेचन किया है। लेखक ने हिन्दू, चीनी, मसीही, यूनानी और रोमन धर्मों का वर्णन करते हुए न्याय का विस्तार से वर्णन किया है। आधुनिक काल में न्याय की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए शुद्ध कानून और शुद्ध न्याय को प्रस्तुत किया है। न्याय का इतिहास बतलाते हुए इसके आर्थिक एवं सामाजिक आधार का निरूपण किया गया है। रॉल्स, नॉजिक और अमर्त्यसेन जैसे विचारकों के विचार एवं सिद्धान्तों का भी इसमें उल्लेख है।

न्यायिक यथार्थवाद का महत्त्व बतलाते हुए न्याय और अन्तरराष्ट्रीय विधि का वर्णन किया गया है। परिशिष्ट में पर्यावरणीय और सामाजिक न्याय की भी प्रस्तुति है।

यह पुस्तक विधि के विद्यार्थियों के साथ-साथ सामान्यजन के लिए भी ज्ञानवर्धक एवं उपयोगी है।

अस्मिता-विमर्श अहिंसात्मक परिप्रेक्ष्य-लेखक श्री मिथिलेश। **प्रकाशक**-प्राकृत भारती अकादमी, 13 ए, गुरुनानक पथ, मालवीय नगर, जयपुर-302017 (राज.) दूरभाष-0141-2520230, Email: prabharati@gmail.com, ISBN No. 978-93-92317-10-1, **मूल्य**-400/- रुपये। **प्रथम संस्करण**-2022, **पृष्ठ**-191

प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने अस्मिता का अर्थ स्पष्ट करते हुए हमारे जीवन में अस्मिता के व्यापक प्रभाव को निरूपित किया है। यह भी बताया है कि किस तरह से अस्मिता-बोध का अहिंसा से सीधा सम्बन्ध है। लेखक ने बताया है कि अस्मिता शब्द Identity का हिन्दी अनुवाद है, जिसका प्रयोग समानता और निरन्तरता के अर्थ में किया जाता है। हिन्दी शब्दकोष के अनुसार अस्मिता शब्द का अर्थ है-1. अपने होने का भाव, अहंभाव, 2. हस्ती, हैसियत, अपनी सत्ता की पहचान, 3. अहंता, अहंकार, अस्तित्व, विद्यमानता, मौजूदगी।

लेखक ने अस्मिता को पहचान के रूप में परिभाषित किया है। व्यक्ति की पहचान में आयु, लिङ्ग, योग्यता, जाति, नस्ल आदि कई गुणों का समावेश होता है। लेखक ने पहचान के कई कारकों का विस्तृत विवेचन करते हुए द्वितीय अध्याय में समाज-विज्ञान में अस्मिता के सिद्धान्तों की विस्तार से चर्चा की है। तृतीय अध्याय में अस्मिता के विमर्श का वर्णन है जिसके अन्तर्गत स्त्री पहचान का विमर्श, अश्वेत नारीवाद, दलित नारीवाद, राष्ट्र की पहचान का प्रश्न, भाषा की पहचान का विमर्श, जाति आधारित पहचान और नस्लीय पहचान का विमर्श विस्तार से प्रस्तुत किया है। चतुर्थ अध्याय में अस्मिता का राजनीति के सन्दर्भ में विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया गया है। पंचम अध्याय में 'अस्मिता का भविष्य : समावेशी दुनिया का स्वप्न' में अहिंसा, नैतिकता, बहुसंस्कृतिवाद, मानवीय गरिमा का आदर, सह-अस्तित्व के सूत्र तथा विश्व-समाज और विश्व-नागरिकता के विषयों पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। पुस्तक के अन्त में सन्दर्भ-सूची भी दी गई है।

प्रस्तुत पुस्तक सभी बुद्धिजीवी पाठकों के लिए पठनीय एवं ज्ञानवर्धक है।

गीतार्थ गुंजन-जयघोष काव्यकोष-सम्पादक- प.पू. आचार्य विजय जयसुन्दरसूरि और प.पू. आचार्य विजय मुक्तिवल्लभसूरि। **प्रकाशक**-दिव्यदर्शन ट्रस्ट, 39 कलिकुंड सोसायटी, मु. धोलका-382225, जिला-अहमदाबाद (गुजरात) 9898326244, **अन्य प्राप्ति स्थल**-(2) कल्पेशभाई वी. शाह, अहमदाबाद 9769795999, (3) डॉ. संजयभाई बी. शाह, सूरत 9825121455 **प्रकाशन**-2022, **पृष्ठ** - 132

प्रस्तुत पुस्तक में पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय जयघोष सूरीश्वरजी महाराज के गुणों की प्रशंसा में अनेक साधु-साध्वियों के द्वारा गुजराती भाषा में कविताएँ, स्तवन, भजन, गीतिकाएँ आदि रचनाएँ प्रस्तुत की गई हैं। हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी भाषा में भी कतिपय रचनाएँ समाविष्ट हैं। रचनाएँ विभिन्न रागों में गेय एवं स्मरणीय हैं। रचनाओं के अवलोकन से पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय जयघोष सूरीश्वरजी महाराज के विराट् व्यक्तित्व एवं कृतित्व का बोध होता है और उनकी लोकप्रियता सिद्ध होती है।

पुस्तक में यथास्थान चित्र भी प्रस्तुत किये गये हैं। कागज एवं छपाई भी आकर्षक हैं। पुस्तक सभी गुजराती भाषाविदों के लिए पठनीय एवं उपयोगी है।

जयघोष स्मृतिकोष : गीतार्थतानुं गिरिशिखर (भाग 1-2)-शुभाशीष- प्रशान्तमूर्ति सुविशालगच्छाधिपति पू. आचार्यदेव श्री विजय राजेन्द्रसूरीश्वरजी महाराज। सम्पादक-आचार्य विजय जयसुन्दरसूरि और आचार्य विजय मुक्तिवल्लभसूरि। **प्रकाशक एवं अन्य प्राप्ति स्थल**-उपर्युक्त पुस्तकानुसार, **प्रकाशन**-2022, **पृष्ठ**-210 + 20 = 230

प्रस्तुत ग्रन्थ 'जयघोष स्मृति कोष : गीतार्थतानुं गिरिशिखर' जिनवचन मर्मज्ञ, सिद्धान्तदिवाकर, पूज्य आचार्य श्री विजय जयघोषसूरीश्वरजी महाराज की स्मृति में लिखा गया है। इसके दो भाग हैं और कुल 14 विभाग हैं। प्रत्येक भाग में 7-7 विभाग हैं। उनमें लेखों, संस्मरणों और प्रसङ्ग/घटनाओं का समावेश किया गया है। प्रत्येक विभाग में आचार्य भगवन्त, अन्य मुनिराज, साध्वियों एवं श्रावक-श्राविकाओं के आलेखों का समावेश किया गया है। तेरहवें विभाग में प्राकृत और संस्कृत भाषा के भी लेखों का समावेश किया गया है और चौदहवें विभाग में हिन्दी और अंग्रेजी भाषा के लेखों को भी सम्मिलित किया गया है। शेष प्रथम से बारहवें तक सभी विभागों में गुजराती भाषा में लेख संकलित किये गये हैं। प्रत्येक विभाग के प्रारम्भ में विभाग की लेख-क्रमांकदर्शिका भी दी गई है।

ग्रन्थ के प्रथम भाग के प्रारम्भ में पूज्य आचार्यश्री जयघोषसूरीश्वरजी महाराज चरितनायक का जीवन-उद्यान शीर्षक से जीवन-परिचय दिया गया है। जीवन-परिचय में स्वयं के परिचय के साथ-साथ उनके द्वारा दीक्षित शिष्यों और शिष्याओं की तथा उनके द्वारा रचित ग्रन्थों एवं कण्ठस्थ किये गये ग्रन्थों/आगमों की भी जानकारी प्राप्त होती है। साथ ही महत्त्वपूर्ण प्रसङ्गों के बारे में भी इससे जानकारी प्राप्त हो जाती है। आलेखों और संस्मरणों से पूज्य गुरुदेव आचार्यश्री विजय जयघोषसूरीश्वरजी महाराज के जीवन की अनेक विशेषताओं एवं गुणों का ज्ञान प्राप्त होता है। उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व की विशेष जानकारी प्राप्त होती है। चरितनायक श्री जयघोषसूरीश्वरजी महाराज के व्यक्तित्व, चरित्र तथा विद्वत्ता से जैन ही नहीं, अपितु अजैन भी प्रभावित एवं लाभान्वित हुए हैं। लेखकों ने अपनी-अपनी दृष्टि से उनके गुणों का वर्णन किया है।

ग्रन्थ के द्वितीय भाग के प्रारम्भ में 'सिद्धान्त दिवाकरनी उदयथी अस्त सुधीनी जीवनयात्रा' शीर्षक से वर्ष एवं चातुर्मास के क्रमानुसार सम्पूर्ण जीवन काल का वर्णन किया गया है, जिसमें विशेष प्रसङ्गों का भी उल्लेख किया गया है।

ग्रन्थ के दोनों भागों का मुद्रण भी रंगीन, सुन्दर और चित्रमय आकर्षक पृष्ठों में उच्चकोटि के कागज पर किया गया है। पुस्तक की जिल्द भी मजबूत एवं स्थायी है। ग्रन्थ के दोनों ही भाग पठनीय एवं प्रेरणादायी हैं।

-पूर्व संयुक्त आयुक्त, 70, 'जयणा', विश्वकर्मा नगर-द्वितीय, महारानी फॉर्म, जयपुर (राजस्थान)

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 75
ISSN 2249-2011

समाचार विविधा

जोधपुर में पूज्य आचार्य भगवन्त, भावी आचार्यप्रवर तथा सन्त-सतियों के विराजने से धर्मसाधना में उल्लास का वातावरण

रत्नसंघ के अष्टम पट्टधर, प्रवचन प्रभाकर, आगमज्ञ, जिनशासन गौरव, **आचार्य भगवन्त श्री 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा., महान् अध्यवसायी, भावी आचार्य श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.** आदि ठाणा-8 सामायिक-स्वाध्याय भवन पावटा जोधपुर में सुखे-समाधौ विराजित हैं। जोधपुर संघ के प्रत्येक श्रावक-श्राविका एवं युवासाथी गुरुकृपा से निरन्तर लाभान्वित हो रहे हैं।

उपाध्यायश्री का तृतीय स्मृतिदिवस-उपाध्यायप्रवर श्रद्धेय श्री मानचन्द्रजी म.सा. का तृतीय स्मृति-दिवस 29 दिसम्बर, 2022 को आचार्य भगवन्त, भावी आचार्यप्रवर एवं सन्त मुनिराजों के सान्निध्य में तप-त्याग एवं धर्मध्यानपूर्वक मनाया गया। प्रवचन में सन्त-मुनिराजों ने उपाध्यायप्रवर के संयम-जीवन, उनकी साधना-आराधना एवं शान्त-दान्त-गम्भीर व्यक्तित्व का दिग्दर्शन कराया। उनके जीवन की स्मृतियों, प्रेरक आचार एवं संस्मरणों का स्मरण करते हुए श्रद्धापूर्वक गुणानुवाद करके अपनी भावाभिव्यक्ति की। प्रवचन सभा में आबाल-वृद्ध, श्रावक-श्राविकाओं ने भावाभिभूत होकर प्रवचन श्रवण किया। उपस्थिति से प्रवचन हॉल खचाखच भर गया।

नववर्ष के प्रथम दिवस पर साधना-नववर्ष की वेला में युवक परिषद्, जोधपुर के आह्वान पर जोधपुर के सभी उपनगरों से युवकों ने पूज्य आचार्य भगवन्त सहित सभी चारित्रात्माओं के दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण एवं सामायिक-साधना का कार्यक्रम बनाया, जिसमें युवकों की भरपूर उपस्थिति से नववर्ष का प्रथम दिवस संवत्सरी पर्व जैसा लगने लगा। नववर्ष के प्रथम दिवस पर ओसवाल, पल्लीवाल, पोरवाल आदि सभी क्षेत्रों से श्रावक-श्राविकाएँ ससंघ, सपरिवार मांगलिक श्रवण एवं दर्शन-वन्दन हेतु उपस्थित हुए। शीतकालीन अवकाश होने से सम्पूर्ण भारत से श्रद्धालुओं का आवागमन रहा।

पूज्य गुरुदेव आचार्यश्री हस्ती का 113वाँ जन्मदिवस-पौष शुक्ला चतुर्दशी तदनुसार 5 जनवरी, 2023 को प्रतिपल स्मरणीय आचार्य भगवन्त पूज्य श्री हस्तीमलजी म.सा. का 113वाँ जन्मदिवस सामूहिक एकाशन एवं 5-5 सामायिक का लक्ष्य रखकर मनाया गया। गुरु हस्ती के प्रेरक जीवन प्रसङ्ग प्रत्येक साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविकाओं के हृदयस्थ हैं। आचार्य भगवन्त का व्यक्तित्व एवं कृतित्व भावी युवापीढ़ी के लिए प्रेरक उदाहरण है। गुरु हस्ती के सामायिक-स्वाध्याय सन्देश की उपादेयता, उपयोगिता एवं जीवन के स्मरणीय पहलुओं पर अपने-अपने हृदयोद्गार सभी सन्त-मुनिराजों ने फरमाए। प्रवचन के पश्चात् स्वाध्याय संघ द्वारा गुरु हस्ती के जीवन पर आधारित प्रश्नोत्तरी का कार्यक्रम रखा गया तथा भावी आचार्यप्रवर के द्वारा किये गये रात्रिकालीन संवर के आह्वान से प्रेरित होकर कई श्रावक-श्राविका एवं युवाओं ने रात्रिकालीन संवर का लाभ लिया। श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा. आदि ठाणा के पावन सान्निध्य में प्रतापनगर में भी पूज्य आचार्य भगवन्त के जन्मदिवस को तप-त्याग एवं धर्म आराधना के साथ मनाया गया।

पूज्य गुरुदेव आचार्यश्री हस्ती के जन्मदिवस 5 जनवरी तक ठाणा-14 से विराजमान सन्त-मुनिराजों में से सायंकाल तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. आदि ठाणा-5 विहार करके घोड़ों का चौक स्थानक पधारे। 6 जनवरी को श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री अशोकमुनिजी म.सा. का आचार्य भगवन्त की सेवा में पावटा पधारना हुआ। 9 जनवरी को मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. आदि ठाणा-3 विहार करके

घोड़ों का चौक पधार गये तथा इसके पश्चात् श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा. आदि ठाणा-5 पावटा से विहार कर नेहरु पार्क पधार गये। अब आचार्य भगवन्त, भावी आचार्यश्री सहित ठाणा-8 पावटा विराजमान हैं। 14 जनवरी को महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा. आदि ठाणा एवं व्याख्यात्री महासती श्री चन्द्रकलाजी म.सा. आदि ठाणा गुरु चरणों में पावटा पधारे।

महापुरुषों के पावन दिवसों पर साधना-आराधना-11 जनवरी, 2023 को माघ कृष्णा चतुर्थी के दिन **श्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्रजी म.सा. का 89वाँ जन्मदिवस** पूज्य आचार्य भगवन्त के पावन सान्निध्य में पावटा स्थानक में तथा मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. आदि ठाणा के पावन सान्निध्य में सामायिक-स्वाध्याय भवन, चौपासनी हाउसिंग बोर्ड में तप-त्याग, धर्म-आराधना एवं सामूहिक एकाशन के रूप में मनाया गया। प्रवचन के पश्चात् श्राविका मण्डल द्वारा उपाध्याय भगवन्त के जीवन पर आधारित प्रश्नोत्तरी का आयोजन हाउसिंग बोर्ड स्थानक में रखा गया। **माघ शुक्ला द्वितीया, 23 जनवरी को आचार्य भगवन्त श्रद्धेय श्री हस्तीमलजी म.सा. का 103वाँ दीक्षा-दिवस तथा साध्वीप्रमुखा विदुषी महासती श्री तेजकँवरजी म.सा. का 60वाँ दीक्षा-दिवस** अखिल भारतीय स्तर पर सामूहिक एकाशन, सामायिक-स्वाध्याय एवं यथाशक्ति विविध प्रकार के तप-त्याग, साधना-आराधना से मनाया गया। अखिल भारतीय स्तर पर किये गये आह्वान की क्रियान्विति में पावटा स्थानक जोधपुर में भरपूर उपस्थिति रही।

आचार्य भगवन्त की आज्ञा से तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. के सान्निध्य में व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा. आदि ठाणा, व्याख्यात्री महासती श्री विनीतप्रभाजी म.सा. आदि ठाणा सूत्रकृताङ्गसूत्र के स्वाध्याय का नेहरू पार्क स्थानक में निरन्तर लाभ ले रहे हैं। श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. आगम के गूढ़ रहस्यों को बतलाकर आगम के हार्द की वाचनी प्रदान कर रहे हैं।

आचार्य भगवन्त, भावी आचार्यश्री एवं विराजित सन्त-सतीवृन्द के दर्शन-वन्दन एवं चातुर्मासिक विनतियों हेतु पूरे भारतवर्ष से श्रीसंघों का आवागमन बना हुआ है। तपाराधना के क्षेत्र में चातुर्मास काल से ही चली आ रही प्रतिदिन दस आयम्बिल की शृङ्खला सभी उपनगरों में निरन्तर चली रही है। एकाशन, उपवास, दया, संवर, पौषध आदि की साधना-आराधना प्रवाहमान है।

शासनसेवा समिति सदस्य, राष्ट्रीय पदाधिकारी, स्थानीय एवं विभिन्न शाखाओं एवं श्रीसंघ के पदाधिकारियों का गुरु दर्शन, मांगलिक श्रवण एवं चातुर्मासिक विनति हेतु नियमित आना-जाना लगा हुआ है।

सन्त-सतीवृन्दों का उपनगरों में विचरण-मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. आदि ठाणा-3 सूर्यनगरी-जोधपुर शहर के विभिन्न उपनगरों को फरसते हुए अपनी मधुरवाणी से लाभान्वित कर रहे हैं। श्रावक-श्राविका एवं युवासाथी प्रवचन में श्रद्धाभक्ति एवं उत्साहपूर्वक अच्छी संख्या में लाभ ले रहे हैं। तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. आदि ठाणा-5 भी जोधपुर के उपनगरों को फरसते हुए सभी को धर्मध्यान, साधना-आराधना से लाभान्वित कर रहे हैं। श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा. आदि ठाणा-5 भी जोधपुर के उपनगरों को फरस कर लाभान्वित कर रहे हैं। व्याख्यात्री महासती श्री सौभाग्यवतीजी म.सा. आदि ठाणा जोधपुर के विभिन्न उपनगरों को फरसते हुए धर्म प्रभावना कर रहे हैं। व्याख्यात्री महासती श्री चन्द्रकलाजी म.सा. आदि ठाणा सुख-सातापूर्वक सामायिक-स्वाध्याय भवन, शक्तिनगर में विराजमान हैं।

सूर्यनगरी जोधपुर में धर्मध्यान का ठाट लगा हुआ है और साथ ही श्रद्धेय आचार्य भगवन्त, भावी आचार्य भगवन्त एवं श्रद्धेय सन्त-सतीवृन्द के विराजने तथा विभिन्न उपनगरों को फरसने से अत्यन्त प्रभावशाली धर्ममय वातावरण बना हुआ है। जिन-जिन क्षेत्रों में सन्त-सतीवृन्द पधार रहे हैं, उन क्षेत्रों के क्षेत्रीय संयोजकों द्वारा भी उत्साहपूर्वक सेवाएँ प्रदान की जा रही हैं।

25 जनवरी को श्राविका मण्डल के तत्त्वावधान में लघुदण्डक की परीक्षा का आयोजन किया गया, जिसमें लगभग 100 श्राविकाओं ने परीक्षा दी एवं गुरु हीरा चालीसा को भी कण्ठस्थ किया।

जोधपुर संघ की सेवा भावना–गुरु, दर्शन एवं जिनवाणी–श्रवण हेतु दर्शनार्थियों का आवागमन निरन्तर बना हुआ है। जोधपुर श्रावक संघ के अध्यक्ष श्री सुभाषजी गुंदेचा, संघमंत्री श्री नवरतनजी गिड़िया, श्राविका मण्डल अध्यक्ष श्रीमती सुमनजी सिंघवी एवं युवा अध्यक्ष श्री गजेन्द्रजी चौपड़ा संघसेवा एवं गुरुभक्ति में सदैव तत्पर रहते हुए अपने सभी पदाधिकारियों एवं कार्यकर्ताओं के साथ उत्साहपूर्वक चतुर्विध संघसेवा का लाभ ले रहे हैं। अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के स्वास्थ्य एवं चिकित्सा समिति उपाध्यक्ष श्री मनमोहनजी कर्णावट भी श्रमणोचित औषधोपचार में निरन्तर अपनी सेवाएँ दे रहे हैं। जोधपुर संघ आतिथ्य सत्कार के लिए हर पल तत्पर है।

–नवरतन गिड़िया, मन्त्री एवं गिर्राज जैन

पूज्य आचार्य भगवन्त श्री हस्तीमलजी म.सा. के 113वें जन्मदिवस पर गुणानुवाद, साधना-आराधना

जयपुर–आचार्यप्रवर 1008 श्री हस्तीमलजी म.सा. का 113वाँ जन्म–दिवस 5 जनवरी, 2023 को, महारानी फार्म स्थित सीडलिंग स्कूल, जयपुर में सेवाभावी श्रद्धेय श्री नन्दीषेणमुनिजी म.सा. आदि ठाणा 3 के सान्निध्य में एकाशन दिवस के रूप में मनाया गया। श्रद्धेय श्री नन्दीषेणमुनिजी म.सा. ने गुरुदेव के विभिन्न अज्ञात संस्मरणों को प्रस्तुत किया। श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. ने आचार्य भगवन्त के कृतित्व के विषय में बताते हुए उनके द्वारा रचित साहित्यिक कृतियों को 5 भागों में विभक्त करके उन पर प्रभावी प्रकाश डाला। श्रद्धेय श्री आशीषमुनिजी म.सा. ने कहा कि आचार्यश्री हस्ती में बाल्यकाल से ही समझ रही जो गुरुचरणों में निरन्तर आगमों के अध्ययन से बढ़ती रही। सभा का सञ्चालन करते हुए जिनवाणी के सम्पादक प्रो. धर्मचन्दजी जैन ने कहा कि पूज्य गुरुदेव सत्यनिष्ठ, आचारनिष्ठ, शास्त्रज्ञ, संस्कृत–प्राकृतविद् होने के साथ अन्य परम्पराओं से भी मधुर सम्बन्ध रखने वाले महान् सन्त थे। प्रवचन सभा में साध्वीप्रमुखा महासती श्री तेजकँवरजी म.सा. की निश्रा से महासती श्री स्नेहलताजी म.सा. आदि 3 महासतियों के पधारने से चतुर्विध संघ की उपस्थिति हो गई। इस अवसर पर श्रावक–श्राविकाओं की उपस्थिति सराहनीय थी। सभी ने प्रवचन श्रवण तथा सामायिक–साधना का लाभ लिया। इस दिन लगभग 500 से अधिक लोगों ने एकाशन किये एवं दो विगय के त्याग का नियम लिया।

23 जनवरी, 2023 को आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. का 103वाँ दीक्षा–दिवस एवं साध्वीप्रमुखा विदुषी महासती श्री तेजकँवरजी म.सा. का 60वाँ दीक्षा–दिवस सेवाभावी श्रद्धेय श्री नन्दीषेणमुनिजी म.सा. आदि ठाणा–3 के सान्निध्य में उत्तम स्वाध्याय–भवन, मालवीयनगर में तथा साध्वीप्रमुखा श्री तेजकँवरजी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में पोरवाल भवन, गौरी विहार–न्यू सांगानेर रोड़ में तप–त्याग, साधना–आराधना के साथ मनाया गया। मालवीय नगर में सन्तों के सान्निध्य में पूज्य गुरुदेव आचार्यश्री हस्ती के जीवन की विशेषताओं को रेखांकित किया गया। व्याख्यात्री महासती श्री सुमनलताजी म.सा., महासती श्री मंजूलताजी म.सा., महासती श्री निरञ्जनाजी म.सा., महासती श्री चैतन्यप्रभाजी म.सा., महासती श्री दक्षिताजी म.सा. ने अपनी गुरुणी साध्वीप्रमुखाजी के गुणों का दिग्दर्शन कराया। दोनों ही स्थानों पर श्रावक–श्राविकाओं से 163 एकाशन के साथ–साथ तीन–तीन सामायिक का आह्वान किया गया, जिसमें श्रावक–श्राविकाओं ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। *–संजीव कोठारी, मन्त्री*

मदनगंज किशनगढ़–आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. की 113वीं जन्म जयन्ती तप–त्याग के साथ पूरे

किशनगढ़ उपखण्ड में एक साथ मदनगंज स्थानक में व्याख्यात्री महासती पदमप्रभाजी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में मनाई गई। महासती जी ने तीन सामायिक एवं एकाशन की प्रेरणा की। प्रवचन में लगभग 400 जनों की उपस्थिति थी और लगभग 250 एकाशन सामूहिक रूप से श्रीसंघ द्वारा महावीर भवन में करवाए गए। प्रवचन 11.30 बजे तक चला। चातुर्मास जैसा माहौल रहा, जो अत्यन्त अनुमोदनीय है। श्रावक-श्राविकाओं द्वारा खूब तप-त्याग किया गया। दिन में भी श्राविका वर्ग की उपस्थिति लगातार उत्साहवर्धक बनी रही। संघ के विशेष आग्रह पर 5 दिन प्रवचन कर 8 जनवरी को म.सा. ने अजमेर की ओर विहार किया। *-प्रमोद मोदी*

जोधपुर-श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर द्वारा सामायिक-स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक आचार्य भगवन्त 1008 श्री हस्तीमलजी म.सा. के 113वें जन्मदिवस के पावन प्रसङ्ग पर गुरुदेव के जीवन-परिचय पर आधारित प्रश्न प्रतियोगिता दिनांक 5 जनवरी, 2023 गुरुवार को परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा., परम श्रद्धेय भावी आचार्यप्रवर श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. आदि ठाणा एवं महासतीमण्डल के पावन सान्निध्य में पावटा स्थानक में एवं श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा. एवं महासतीमण्डल के पावन सान्निध्य में प्रतापनगर स्थानक में आयोजित की गई। इस प्रतियोगिता में सभी आयुवर्ग के लगभग 97 श्रावक-श्राविकाओं ने भाग लिया, इनमें से प्रथम, द्वितीय और तृतीय आने वाले प्रतियोगियों को स्वाध्याय-संघ द्वारा पुरस्कार प्रदान किए गए।

-सुभाष हुण्डीवाल, संयोजक

मैसूर-श्री स्थानकवासी जैन संघ मैसूर के तत्त्वावधान में श्रमणसंघीय उपप्रवर्तक श्री श्रुतमुनिजी म.सा. आदि ठाणा 4 और महासती श्री सुशीलाकँवरजी म.सा. आदि ठाणा 10 के सान्निध्य में 5 जनवरी, 2023 को सामयिक-स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक आचार्यप्रवर 1008 पूज्य श्री हस्तीमलजी म.सा. का 113वाँ जन्मदिवस और मरुधरकेसरी पूज्य श्री मिश्रीमलजी म.सा. की 39वीं पुण्यतिथि दो-दो सामायिक और एकाशन के साथ मनाई गई। लगभग 70-75 एकाशन हुए और लगभग 350 श्रावक-श्राविकाएँ उपस्थित हुए। श्री श्रुतमुनिजी म.सा., महासतीजी श्री सुशीलाकँवरजी म.सा. और महासती श्री चैतन्यश्री जी म.सा. ने महापुरुषों के जीवन की गौरवगाथा पर प्रकाश डाला। संघ अध्यक्ष श्री सुभाषचन्दजी धोका, सचिव श्री बुधमलजी बागमार, श्री सम्पतजी बागमार, श्री सोहनलालजी बागमार और श्री बुधमलजी मुथा ने महापुरुषों के प्रति अपने श्रद्धा-भाव व्यक्त किए। सामूहिक एकाशन की व्यवस्था श्रीसंघ द्वारा की गई।

चेन्नई-श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, तमिलनाडु के तत्त्वावधान में 5 जनवरी, 2023 को साहूकारपेट स्थित स्वाध्याय भवन में आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. की 113वीं जन्मजयन्ती और मरुधरकेसरी श्री मिश्रीमलजी म.सा. की 39वीं पुण्यतिथि तीन सामायिक, गुणगान और व्याख्यान के साथ मनाई गई। इस अवसर पर डॉ. दिलीपजी धींग ने कहा कि दोनों ही महापुरुष गुणग्राही, एकता के पक्षधर, मैत्री के सन्देशवाहक तथा मानवसेवा और जीवदया के प्रवक्ता थे। जैन इतिहास में तीन प्रकार के आचार्य बताए गये हैं-गणाचार्य, वाचनाचार्य और युगप्रधानाचार्य। आचार्य हस्ती में तीनों ही प्रकार के आचार्यों की अर्हताएँ थीं। उन्होंने मुनि, उपाध्याय और आचार्य तीनों पदों का गौरव बढ़ाया। कार्याध्यक्ष आर. नरेन्द्र कांकरिया ने आचार्य हस्ती द्वारा उपदिष्ट आचार, समाजसेवा, श्रावकाचार आदि दस जीवन-सूत्र प्रस्तुत किये। पूर्व मन्त्री श्री एम. अनोपचन्द बाघमार ने सञ्चालन किया।

-प्रेमकुमार कवाड़, अध्यक्ष

आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा. का 103वाँ दीक्षा-दिवस 23 जनवरी, 2023 को सामायिक-स्वाध्याय दिवस के रूप में मनाया गया। उपस्थित श्रद्धालुओं ने आचार्य हस्ती चालीसा की गान रूप में स्तुति की। आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर के संयोजक श्री अशोकजी बाफना, श्रावक संघ के कोषाध्यक्ष श्री गौतमचन्दजी

मुणोत, स्वाध्यायी श्रीमती पुष्पलताजी गादिया, वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री चम्पालालजी बोथरा, धार्मिक अध्यापक विनोदजी जैन ने आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा. के जीवन काल की अनेक घटनाओं का उल्लेख करते हुए गद्य-पद्य के माध्यम से गुणगाण किए। उपाध्यायश्री मानचन्द्रजी म.सा. के सांसारिक भ्राता श्री महेन्द्रजी सेठिया, जोधपुर ने रत्नसंघ की दिव्य विभूतियों के अनेक संस्मरणों के माध्यम से गुणगाण किये । श्रावक संघ तमिलनाडु के कार्याध्यक्ष श्री आर. नरेन्द्रजी कांकरिया ने इस सुप्रसङ्ग पर विभिन्न तीर्थंकरों के कल्याणक का उल्लेख करते हुए आचार्य भगवन्त पूज्यश्री हस्तीमलजी म.सा. के बाल्यकाल में पीपाड़ पौषधशाला में शिक्षा, हृदय की करुणाशीलता, सन्त-सती मण्डल के सुयोग, संस्कृत एवं हिन्दी के शिक्षा गुरु द्वारा अध्यापन तथा दृढ़ वैराग्य के विभिन्न संस्मरणों से लेकर अजमेर में आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म.सा. के मुखारविन्द से अपनी माता रूपादेवी सहित चार मुमुक्षुओं की दीक्षा का चित्रण गुणगाण सभा में रखते हुए प्रश्नोत्तरी का कार्यक्रम रखा। उन्होंने कहा कि आज की शुभ तिथि माघ कृष्ण द्वितीया के दिन ही साठ वर्षों पूर्व जयपुर में साध्वीप्रमुखा श्री तेजकँवरजी म.सा. की दीक्षा हुई एवं उनके चरित्रमय जीवन का भी परिचय दिया। उपस्थित श्रद्धालुओं ने जैन संकल्प, व्रत-नियम, प्रत्याख्यान किये।

-आर. नरेन्द्र कांकरिया, कार्याध्यक्ष

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा आयोजित कार्यक्रम

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा सभी शाखाओं में जिनशासन गौरव, परम श्रद्धेय आचार्य भगवन्त पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. का 60वाँ दीक्षा-दिवस 'तप साधना दिवस' के रूप में तीन-तीन सामायिक, एकाशन, उपवास, बेला, तेला की आराधना के साथ मनाया गया। जहाँ सन्त-सतीवृन्द विराजमान नहीं थे, वहाँ नजदीकी स्थानक में जाकर साधना-आराधना का लक्ष्य रखा गया।

आचार्य भगवन्त के दीक्षा दिवस पर अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा अखिल भारतीय स्तर पर प्रतियोगिता रखी गई। इस प्रतियोगिता में 'आचार्य भगवन्त श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के जीवन के प्रेरक-प्रसङ्ग' विषय पर पूज्य गुरुदेव की प्रेरणा से आपके जीवन में कोई भी अद्भुत घटना घटित हुई हो अथवा आपके जीवन में विशेष परिवर्तन आया हो या उनके अतिशय से प्रभावित हुए हों, ऐसी घटनाओं और प्रसङ्गों का विवरण मँगवाया गया। इस प्रतियोगिता में प्रतिभागियों को अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा पुरस्कृत किया जायेगा। सभी प्रतिभागियों से निवेदन है कि जिन प्रतिभागियों ने अपना बैंक विवरण अभी तक नहीं भेजा है, वे शीघ्र व्हाट्स एप्प नं. 9413132362 पर शीघ्र भिजवाएँ, जिससे उनका पारितोषिक भिजवाया जा सके। कृपया सभी शाखाध्यक्ष/शाखा सचिव से निवेदन है कि वे अपनी शाखा रिपोर्ट श्राविका मण्डल के कार्यालय में अवश्य प्रेषित करें।

प्रतिपल स्मरणीय, सामायिक-स्वाध्याय के प्रबल-प्रेरक, इतिहास मार्त्तण्ड, अध्यात्म-योगी, युगद्रष्टा-युगमनीषी, जैनाचार्य पूज्य श्री हस्तीमलजी म.सा. का 103वाँ दीक्षा-दिवस तथा साध्वीप्रमुखा, विदुषी महासती श्री तेजकँवरजी म.सा. का 60वाँ दीक्षा-दिवस 23 जनवरी, 2023 को 'सामायिक-स्वाध्याय दिवस' के रूप में मनाया गया। इस अवसर पर तीन-तीन सामायिक की साधना एवं सामूहिक एकाशन तप के साथ अखिल भारतीय स्तर पर 6,000 एकाशन का लक्ष्य रखा गया।

-श्वेता कर्नावट -महासचिव

जलगाँव में चार दिवसीय स्वाध्यायी प्रशिक्षण शिविर सम्पन्न

श्री महाराष्ट्र जैन स्वाध्याय संघ द्वारा 23 दिसम्बर से 1 जनवरी 2023 तक चार दिवसीय स्वाध्यायी प्रशिक्षण शिविर का आयोजन नवजीवन मंगल कार्यालय, जलगाँव में किया गया। जिसमें नाशिक, शिरपुर, धूलिया, शिरूड़, सिल्लोड़, सेलु, कारंजा, वाशिम, लोणार, जामनेर, चालीसगाँव, जलगाँव आदि स्थानों से लगभग 128 शिविरार्थियों ने भाग लिया। श्री प्रकाशचन्दजी जैन-जयपुर, श्री धर्मेन्द्रजी जैन-जयपुर, सौ. मंगलाजी चोरड़िया, श्रीमती लीलाजी सालेचा, सौ. किरणजी बोरा, सौ. छायाजी भण्डारी, सौ. अनीताजी लूंकड़, श्री मनोजजी संचेती,

श्री शुभमजी बोहरा-जलगाँव की सेवाएँ अध्यापक के रूप में प्राप्त हुईं। शिविर में सामायिक-सूत्र अर्थ-प्रश्नोत्तर सहित, प्रतिक्रमणसूत्र, 25 बोल, 67 बोल, समिति-गुप्ति, कर्मप्रकृति, गुणस्थान द्वार, कायस्थिति, उत्तराध्ययन सूत्र का 5 वाँ अध्ययन, 5 समवाय, अनेकान्तवाद आदि विषयों का ज्ञानार्जन 6 कक्षाओं के माध्यम से करवाया गया। सुश्री नेहाजी द्वारा प्रातः 6.30 से 7.30 तक ध्यान कक्षा एवं रात्रि में एक्यूप्रेशर थैरेपी ली गई। शिविर के प्रथम दिवस रात्रि में जिज्ञासा-समाधान, द्वितीय दिवस श्री कँवरलालजी सिंघवी द्वारा मार्गदर्शन एवं तृतीय दिवस रात्रि में प्ले स्टोर गेम का आयोजन रखा गया। वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री रितेश रमेशचन्दजी सुराणा को 15 वर्ष तक स्वाध्यायी-सेवा एवं संघ की गतिविधियों में उत्कृष्ट कार्य को देखते हुए स्व. श्री रतनलालजी बाफ़ना की स्मृति में श्री सुशीलजी बाफ़ना द्वारा स्वाध्यायी-सम्मान-2023 से सम्मानित किया गया। शिविर में 7 नए स्वाध्यायी तैयार हुए एवं आगामी जुलाई, 2023 में होने वाली आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की परीक्षा हेतु 25 फॉर्म भरे गए। शिविर का सौजन्य रतनलालजी बाफना परिवार द्वारा किया गया। *-मनोज संचेती, जलगाँव*

भगवान महावीर फाउण्डेशन, चेन्नई के 26वें महावीर पुरस्कार के 4 विजेताओं की घोषणा

भगवान महावीर फाउण्डेशन, चेन्नई के 26वें महावीर पुरस्कार के 4 विजेताओं के चयन का निर्णय भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश श्री एम. एन. वेंकटचलैया की अध्यक्षता वाली एक प्रतिष्ठित चयन समिति द्वारा किया गया है, जो इस प्रकार हैं-**(1) ध्यान फाउण्डेशन, नई दिल्ली**-इस संस्था ने पूरे भारत में गोवंशीय पशुओं सहित लगभग 70000 जानवरों को बचाया और 43 से अधिक पशु आश्रयों एवं गौशालाओं का प्रबन्धन किया है। **(2) फ्रेंड्स ऑफ ट्राइबल सोसाइटी, पश्चिम बंगाल**-यह संस्था भारत के ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्रों में रहने वाले बच्चों को गैर-औपचारिक बुनियादी शिक्षा देने के लिए कार्य कर रही है। इसके अन्तर्गत 1.02 लाख से अधिक गाँवों में 6 से 14 वर्ष आयुवर्ग के 26 लाख से अधिक बच्चे वर्तमान में ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में एकल विद्यालयों में पढ़ रहे हैं। **(3) जन स्वास्थ्य सहयोग 'जेएसएस', छत्तीसगढ़**-यह संस्था एक सस्ती स्वास्थ्य सेवा प्रदान कर रही है जो ग्रामीण या आदिवासी समुदायों के लिए आसानी से सुलभ है। यह 100 बिस्तरों वाले अस्पताल के माध्यम से छत्तीसगढ़ और मध्यप्रदेश के आस-पास के जिलों के 2,500 से अधिक गाँवों के 3,90,000 रोगियों को कम लागत में सेवा प्रदान करता है। **(4) नोंगस्टोइन सोशल सर्विस सोसाइटी, मेघालय**-यह संस्था बच्चों, महिलाओं और व्यक्तियों को मुख्यधारा में लाकर आर्थिक सशक्तीकरण के माध्यम से साधनहीन और आर्थिक तंगी से गुज़ारा करने वालों को कला-कौशल सिखाने के साथ अच्छी खेती की प्रणालियों को बताने में सहायता, मार्गदर्शन और प्रशिक्षण प्रदान करती है। युवाओं के लिए कौशल प्रशिक्षण और विकलांग लोगों के अधिकारों के लिए यह संस्था लगभग 39,000 बच्चों को कठिन एवं विभिन्न परस्थितियों में सहायता कर रही है।

27वें महावीर पुरस्कार हेतु सुनिश्चित 4 श्रेणि जैसे अहिंसा और शाकाहार, शिक्षा, चिकित्सा और सामुदायिक एवं समाज सेवा में नि:स्वार्थ सेवा करने वाले व्यक्तियों एवं संस्थाओं से नामांकन आमन्त्रित है। सम्पर्क सूत्र-श्रीमती समता लखानी, मो.+919962340367, ईमेल-bmfawardsgmail.com

पंजाब सरकार ने जैन महापर्व 'संवत्सरी' पर की अवकाश की घोषणा

पंजाब सरकार ने जैन समाज के महापर्व 'संवत्सरी' के अवसर पर आगामी 19 सितम्बर, 2023 को सरकारी अवकाश घोषित किया है। श्रमण संघीय श्री पुष्पेन्द्र मुनिजी म.सा. की सद्प्रेरणा से एवं पंजाब अल्पसंख्यक आयोग के सदस्य डॉ. सललजी जैन के अथक प्रयासों से संवत्सरी महापर्व पर राजकीय अवकाश घोषित करवाना सकल

जैन समाज के लिए गर्व और आत्मसम्मान की बात है। 'संवत्सरी' पर सरकारी अवकाश घोषित करने वाला पंजाब देश का प्रथम राज्य बन गया है।

-महेन्द्र जैन, चोरू

प्राकृत भाषा एवं साहित्य पर नई दिल्ली में राष्ट्रीय संगोष्ठी

श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली के प्राकृत विभाग द्वारा 19-20 दिसम्बर, 2022 को 'प्राकृत भाषा एवं साहित्य के क्षेत्र में विगत 150 वर्षों में हुए अध्ययन एवं अनुसन्धान का आकलन और भावी दिशाएँ' विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित हुई। संगोष्ठी के उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. मुरलीमनोहरजी पाठक ने की। पुरातत्त्व विशेषज्ञ प्रो. के. एन. दीक्षित ने मुख्य अतिथि के रूप में सम्बोधित किया। संगोष्ठी के निदेशक प्रो. सुदीप कुमारजी जैन ने विषय प्रवर्तन किया। संगोष्ठी की संयोजक प्रो. कल्पनाजी जैन ने स्वागत भाषण दिया। इस संगोष्ठी में प्रो. विजय कुमारजी जैन-लखनऊ, डॉ. प्रेमसुमनजी जैन-उदयपुर, श्री सुदर्शनजी मिश्र-आरा बिहार, प्रो. वीरसागरजी जैन-दिल्ली, प्रो. जयकुमारजी उपाध्ये-श्रवणबेलगोला, प्रो. बलरामजी शुक्ल-दिल्ली, प्रो. अनेकान्त कुमारजी जैन-दिल्ली आदि अनेक विद्वानों ने अपने शोधपत्र प्रस्तुत किए। कई विद्वान् ऑनलाइन भी जुड़े। जिनवाणी सम्पादक प्रो. धर्मचन्दजी जैन, जयपुर ने 'विगत शताब्दी में प्राकृत भाषा के अध्ययन हेतु विद्वानों के प्रयत्न' विषय पर शोधपरक विचार प्रस्तुत किए।

महात्मा गाँधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा में दर्शन महासभा का 95वाँ सत्र आयोजित

महात्मा गाँधी अन्तरराष्ट्रीय विश्वविद्यालय, वर्धा के द्वारा इण्डियन फिलोसोफिकल काँग्रेस के 95वें सत्र का भव्य आयोजन किया गया। 27 से 30 दिसम्बर, 2022 तक आयोजित इस कार्यक्रम में देशभर के दर्शन शास्त्रियों, दर्शनाध्यापकों एवं शोधार्थियों ने विभिन्न पक्षों पर अपने महत्त्वपूर्ण शोधालेख प्रस्तुत किये। इस महासभा में 'पारिस्थितिकी पुनर्स्थापन के लिए दर्शन' विषय को केन्द्रित किया गया तथा एशियाई दर्शन सम्मेलन का आयोजन भी साथ में हुआ। भारतीय दर्शन महासभा के अध्यक्ष प्रो. एस. आर. भट्ट-दिल्ली, महासचिव प्रो. पनीर सेल्वम-चैन्नई, स्थानीय आयोजक सचिव प्रो. जयन्त उपाध्याय एवं वर्धा के समस्त अध्यापकों के सहयोग से लगभग 250 विद्वानों के आवास, भोजन आदि की समुचित व्यवस्था की गई। इस सत्र के अन्तर्गत दर्शनशास्त्र के विभिन्न पक्षों का आलोड़न हुआ। शोधपत्रों के साथ कुछ एण्डोमेण्ट लेक्चर भी आयोजित थे, जिनमें आचार्य तुलसी एण्डोमेण्ट लेक्चर के लिए जिनवाणी सम्पादक प्रो. धर्मचन्दजी जैन-जयपुर को आमन्त्रित किया गया। प्रो. जैन ने 'आचार्य हरिभद्रसूरि का योगविषयक योगदान' विषय पर व्याख्यान दिया।

पल्लीवाल जैन शिक्षा समिति द्वारा बालिका छात्रावास का प्रारम्भ

पल्लीवाल जैन शिक्षा समिति द्वारा समग्र जैन समाज के विद्यार्थियों के लिए छात्रावास का प्रारम्भ किया गया। है, जिसमें 32 छात्राओं के लिए आवास सुविधा उपलब्ध है। छात्राओं का प्रवेश किसी भी आम्नाय के मानने वाले जैन समाज की बालिकाओं के लिए होगा। छात्रावास पूर्ण सुसज्जित आधुनिक सुविधाओं से युक्त, 24 घण्टे महिला वार्डन, गार्ड तथा सी.सी. टीवी कैमरे की सुरक्षा से युक्त है। एक फ़्लोर पर एयरकण्डिशनर कमरे भी उपलब्ध हैं। भोजनालय छात्रावास परिसर में ही उपलब्ध है। छात्रावास में प्रति विद्यार्थी के लिए मात्र 1500 मेंटेनेन्स शुल्क प्रतिमाह देय होगा। प्रवेश के लिए सम्पर्क सूत्र-ओमप्रकाश जैन एडवोकेट-प्रभारी, फोन नं. 0141-2742467, भागचन्द जैन-मन्त्री, मो. 9414499747, छात्रावास का पता-एच 1-2, शिव ऑफिसर्स (आर.ए.एस.) कॉलोनी, पानी की टंकी के सामने, जगतपुरा-जयपुर।

श्रुत रत्नाकर एवं जैना संस्था द्वारा अहमदाबाद में क्षमा विषय पर अन्तरराष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन

गुजरात विश्वविद्यालय के श्यामा प्रसाद मुखर्जी ऑडिटोरियम में अमेरिका की जैना (JAINA) संस्था द्वारा क्षमा विषय पर 21-22 जनवरी 2023 को अन्तरराष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित की गई। संगोष्ठी में लगभग 35 विद्वानों के शोध-पत्र प्रस्तुत हुए तथा 200 से अधिक श्रोताओं ने दोनों दिन श्रवण का लाभ लिया। इस संगोष्ठी में जैना संस्था के पूर्व अध्यक्ष श्री दिलीप वी. शाह और वर्तमान अध्यक्ष श्री हरेशभाई शाह भी उपस्थित थे। उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता गुजरात विश्विद्यालय के कुलपति प्रो. हिमांशु पण्ड्या ने की। आचार्य नन्दिघोषसूरिजी म.सा. ने क्षमा विषय पर बीज वक्तव्य दिया। संगोष्ठी के संयोजक प्रो. जितेन्द्र बी. शाह ने स्वागत भाषण दिया। प्रथम सत्र की अध्यक्षता जिनवाणी के प्रधान सम्पादक प्रो. धर्मचन्द जैन जयपुर ने की, जिसमें डॉ. रोहित शाह, डॉ. द्युति याग्निक ने क्षमा के सम्बन्ध में अनेक प्रश्न उठाये। प्रो. धर्मचन्द जैन ने अपना वक्तव्य देते हुए इन प्रश्नों का समाधान किया तथा स्वयं ने भी अनेक समस्याएँ उठाते हुए उनके समाधान प्रस्तुत किये। इस संगोष्ठी में प्रो. बसन्त कुमार भट्ट, प्रो. दिलीप चारण, प्रो. विजय कुमार जैन, डॉ. सुधीर शाह, डॉ. विपिन दोशी-मुम्बई, डॉ. सुरेन्द्रसिंह पोखरणा-अहमदाबाद, डॉ. नरेन्द्र भण्डारी-अहमदाबाद, डॉ. मयंक बड़जात्या-पुणे, प्रो. अनेकान्त जैन-दिल्ली, डॉ. सेजल शाह-मुम्बई, डॉ. शुद्धात्मप्रकाश-मुम्बई, डॉ. तृप्ति जैन-बैंगलोर, डॉ. सुषमा सिंघवी-जयपुर, डॉ. शोभना शाह-अहमदाबाद आदि ने भी अपने शोध-पत्र प्रस्तुत कर क्षमा के महत्त्व का प्रतिपादन किया।

अमेरिका में कत्लखाना नहीं खुल पाया

अमेरिका की जैन संस्था जैना के पूर्व अध्यक्ष श्री दिलीप वी. शाह के सद् प्रयत्नों से एक कत्लखाना नहीं खुल पाया। उन्होंने एडवोकेट के माध्यम से कोर्ट में इस प्रकार के तर्क उपस्थित कराये कि जिनको सुनकर न्यायाधीश ने कत्लखाना खोलने की प्रक्रिया को निरस्त कर दिया। वहाँ प्रतिदिन 2,000 पशु कटने वाले थे, इसमें जो तर्क दिये गये उनमें प्रमुख हैं-1. 2,000 पशुओं को प्रतिदिन लाने के लिए जितने ट्रकों की आवश्यकता है, उसे यह रोड़ सहन नहीं कर पायेगा। ध्यातव्य है कि यह कत्लखाना राजमार्ग से काफी दूरी पर खोला जा रहा था। 2. पर्यावरण प्रदूषण का भी मुद्दा उठाया गया। 3. प्रक्रिया सम्बन्धी अनेक दोषों को उद्घाटित किया गया। अन्ततः जो फायनेन्स कम्पनी इसमें पैसा लगा रही थी वह 2 वर्षों के संघर्ष के पश्चात् हार मान गई और उसने यह निर्णय लिया कि हम कभी भी कत्लखाना खोलने में अपना पैसा नहीं लगायेंगे। यह घटना भारतीयों के लिए प्रेरणाप्रद है।

पण्डित चैनसुखदास स्मृति व्याख्यान माला का आयोजन

श्री दिगम्बर जैन आचार्य संस्कृत कॉलेज, सांगानेर, जयपुर के द्वारा 23 जनवरी, 2023 को पण्डित चैनसुख दास न्यायतीर्थ स्मृति व्याख्यान माला का आयोजन किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री ताराचंदजी पोल्याका ने की तथा जगद् गुरु रामानन्दाचार्य संस्कृत विश्वविद्यालय जयपुर के कुलपति प्रो. रामसेवक दुबे ने मुख्य अतिथि के रूप में सम्बोधित किया। जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय जोधपुर के पूर्व संस्कृत विभागाध्यक्ष प्रो. धर्मचन्द जैन ने व्याख्यान माला के 'जैन संस्कृत साहित्य में मानवीय मूल्य' विषय पर प्रमुख वक्ता के रूप में सम्बोधित करते हुए कहा कि जो मूल्य मानव-जीवन का महत्त्व बढ़ा दें, वे ही मानवीय मूल्य हैं। जो मानव को पशुता और दानवता से ऊपर उठा दें, किसी को दुःखी देखकर करुणा भाव जाग्रत हो जाय, वे ही मानवीय मूल्य हैं। अहिंसा, करुणा, पारस्परिक सहयोग, आत्महित के साथ परहित, दान एवं सेवा का भाव, स्नेह, सहानुभूति, मैत्री, क्षमाभाव, स्वतन्त्रता, विपदा में धैर्य आदि अनेक मानवीय मूल्यों को उन्होंने आचार्य समन्तभद्र, आचार्य हरिभद्र, आचार्य जिनसेन, आचार्य हेमचन्द्र, आचार्य शुभचन्द्र, आचार्य अमित गति, आचार्य महाप्रज्ञ आदि की संस्कृत कृतियों के

वाक्य उद्धृत करते हुए अपने वक्तव्य को पूर्णता प्रदान की। निदेशक डॉ. शीतलचन्द जैन की पुस्तक 'प्राकृत-संस्कृत वाङ्मय में जैन संस्कृति के विविध आयाम' का विमोचन हुआ। महाविद्यालय के प्राचार्य श्री अनिल कुमार जैन ने सभी आगन्तुक अतिथियों का आभार प्रकट किया।

विद्यार्थियों के जीवन-निर्माण में बनें सहयोगी

छात्र-छात्रा संरक्षण-संवर्द्धन-पोषण योजना

(प्रतिवर्ष एक छात्र के लिए रुपये 24,000 सहयोग की अपील)

आचार्य हस्ती आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान, (सिद्धान्त शाला) जयपुर, संघ एवं समाज के प्रतिभाशाली छात्रों के सर्वांगीण विकास के लिए वर्ष 1973 से सञ्चालित संस्था है। इस संस्था से अब तक सैकड़ों विद्यार्थी अध्ययन कर प्रशासकीय, राजकीय एवं प्रोफेशनल क्षेत्र में कार्यरत हैं। अनेक छात्र व्यावसायिक क्षेत्रों में सेवारत हैं। समय-समय पर ये संघ-समाजसेवी कार्यों में निरन्तर अपनी सेवाएँ भी प्रदान कर रहे हैं। वर्तमान में भी यहाँ अध्ययनरत विद्यार्थियों को धार्मिक-नैतिक संस्कारों सहित उच्च अध्ययन के लिए उचित आवास-भोजन की नि:शुल्क व्यवस्थाएँ प्रदान की जाती हैं। व्यावहारिक अध्ययन के साथ ही छात्रों को धार्मिक अध्ययन की व्यवस्था भी संस्था द्वारा की जाती है। वर्तमान में संस्थान में 71 विद्यार्थियों के लिए अध्ययनानुकूल व्यवस्थाएँ हैं। संस्था को सुचारूरूप से चलाने एवं इन बालकों के लिए समुचित अध्ययनानुकूल व्यवस्था में आप-सबका सहयोग अपेक्षित है। आपसे निवेदन है कि छात्रों के जीवन-निर्माण के इस पुनीत कार्य में बालकों के संरक्षण-संवर्द्धन-पोषण में सहयोगी बनें।

इसमें सहयोगी बनने वाले महानुभावों के नाम जिनवाणी में क्रमिक रूप से प्रकाशित किये जा रहे हैं। संस्थान के लिए पूर्व छात्रों का एवं निम्नलिखित महानुभावों का सहयोग प्राप्त हुआ है-

48. मैसर्स सुराणा एण्ड सुराणा, चेन्नई (तमिलनाडु)	35,000/-
49. श्रीमती नीताजी मेहता, जयपुर (राजस्थान)	30,000/-
50. श्री सम्भवजी कर्णावट, एम.डी. रोड़, जयपुर (राजस्थान)	24,000/-
51. श्रीमती तनुजाजी समदड़िया, मुम्बई (महाराष्ट्र)	24,000/-
52. श्री दानमलजी लोकेशजी जैन, महावीर नगर, जयपुर (राजस्थान)	13,000/-

आप द्वारा दिया गया आर्थिक सहयोग 80जी धारा के तहत कर मुक्त होगा। आप यदि सीधे बैंक खाते में सहयोग कर रहे हैं तो चेक की कॉपी, ट्रांजेक्शनस्लिप एवं सम्बद्ध जानकारी हमें अवश्य भेंजे।

खाते का विवरण:-Name : ***GAJENDRA CHARITABLE TRUST***, Account Type : *Saving*, Account Number : ***10332191006750***, Bank Name : *Punjab National Bank*, Branch : Khadi Board, Bajaj Nagar, Jaipur, Ifsc Code : PUNB0103310, Micr Code : 302022011, Custumer ID : 35288297 **निवेदक :** डॉ. प्रेमसिंह लोढ़ा (व्यवस्थापक), सुमन कोठारी (संयोजक), अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें-दिलीप जैन 'प्राचार्य' 9461456489, 7976246596

(प्रतिवर्ष एक छात्रा के लिए रुपये 24,000 सहयोग की अपील)

श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान (बालिका), मानसरोवर-जयपुर, संघ और समाज की प्रतिभाशाली छात्राओं के सर्वांगीण विकास के लिए वर्ष 2017 से सञ्चालित संस्था है। यहाँ इस संस्था में वर्तमान में

40 अध्ययनरत छात्राओं को धार्मिक-नैतिक संस्कारों सहित उच्च अध्ययन के लिए उचित आवास-भोजन की नि:शुल्क व्यवस्थाएँ प्रदान की जा रही हैं। व्यावहारिक अध्ययन के साथ छात्राओं को धार्मिक अध्ययन की व्यवस्था भी संस्था द्वारा की जाती है। संस्था को सुचारूरूप से चलाने एवं इन बालिकाओं के लिए समुचित अध्ययनानुकूल व्यवस्था में आप-सबका सहयोग अपेक्षित है। आपसे निवेदन है कि छात्राओं के जीवन-निर्माण के इस पुनीत कार्य में तथा उनके संरक्षण-संवर्द्धन-पोषण में सहयोगी बनें।

इसमें सहयोगी बनने वाले महानुभावों के नाम जिनवाणी में क्रमिकरूप से प्रकाशित किये जा रहे हैं। संस्थान के लिए पूर्व छात्रों का एवं निम्नलिखित महानुभावों का सहयोग प्राप्त हुआ है-

16. श्री नरेन्द्र कुमारजी-श्रीमती सुनीताजी डागा, जयपुर, श्री निपुणजी-महकजी डागा
को पुत्ररत्न प्राप्त होने पर। 24,000/-

आप द्वारा दिया गया आर्थिक सहयोग 80जी धारा के तहत कर मुक्त होगा। आप यदि सीधे बैंक खाते में सहयोग कर रहे हैं तो चेक की कॉपी, ट्राँजेक्शनस्लिप तथा सम्बद्ध जानकारी हमें अवश्य भेंजे।

खाते का विवरण:-Name : ***SAMYAGGYAN PRACHARAK MANDAL***, Account Type : *Saving,* Account Number : ***51026632997***, Bank Name : *SBI*, Branch : Bapu Bazar, Jaipur, Ifsc Code : SBIN0031843 **निवेदक :** अशोक कुमार सेठ, मन्त्री। अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क फोन नं. अनिल जैन 9314635755

संक्षिप्त समाचार

जलगाँव-आचार्य भगवन्त 1008 पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म. सा. आदि ठाणा के वर्ष 2000 के जलगाँव वर्षावास में मिली सद्प्रेरणा एवं मार्गदर्शन से गठित 'भाऊमण्डल' के अन्तर्गत रविवारीय सामायिक का उपक्रम विगत 22 वर्षों से निराबाध गति से गतिमान है, इस वर्ष 2023 में नये वर्ष की शुरुआत भाऊ मण्डल की सामायिक से होने के कारण 800 से 1,000 भाई -बहनों की उपस्थिति में सामायिक की साधना से हुई। तपस्वी रत्न पू.श्री कानमुनिजी म. सा. के आज्ञानुवर्ती सन्त श्री पंकजमुनिजी म.सा. एवं महासतीजी श्री सुशीलाकँवरजी म.सा. की शिष्या श्री रंजनाश्रीजी म.सा. आदि ठाणा के प्रवचन का लाभ एवं श्री प्रकाशचन्दजी जैन, जयपुर का उद्बोधन प्राप्त कर भाऊमण्डल ने नया वर्ष हर्षोल्लास से मनाया। *-मनोज संचेती, जलगाँव*

चेन्नई-श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, तमिलनाडु के तत्त्वावधान में 29 दिसम्बर, 2022 को स्वाध्याय भवन साहूकारपेट, चेन्नई में शान्त-दान्त गम्भीर, प्रबल पुरुषार्थी, पण्डित रत्न, उपाध्याय भगवन्त श्री मानचन्द्रजी म.सा का तृतीय स्मृति दिवस जप-तप-त्याग पूर्वक सामायिक-स्वाध्याय दिवस के रूप में मनाया गया। वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री विनोदजी जैन ने आचार्य हस्तीमलजी म.सा. की कृति जैनधर्म के मौलिक इतिहास का वाचन करते हुए उपाध्यायश्री के गुणगाण किये। धर्मसभा में वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री चम्पालालजी बोथरा, महावीरचन्दजी तातेड़, अशोकजी बाफना, गौतमचन्दजी मुणोत, नवरतनमलजी चोरड़िया ने उपाध्याय भगवन्त के जीवन-परिचय संस्मरणों के संग गद्य-पद्य रूप में विस्तृत गुणगाण किये। कार्याध्यक्ष श्री आर. नरेन्द्रजी कांकरिया ने भी उपाध्याय भगवन्त के चारित्रमय जीवन के अनेक संस्मरणों का चित्रण धर्मसभा में रखा। सामायिक परिवेश में उपस्थित श्रावक-श्राविकागण ने व्रत-नियम-प्रत्याख्यान किये। *-आर. नरेन्द्र कांकरिया*

बधाई

श्रीमती अलकारानी जैन

श्री यशराज शिंगी

श्री मोहित जीरावला

जयपुर-श्रीमती अलकारानीजी (अध्यापिका, श्री एस.एस. जैन सुबोध बॉयज सीनियर सैकेण्डरी स्कूल, बापू बाजार, जयपुर) धर्मसहायिका श्री अनिल कुमारजी जैन (सुबोध स्कूल एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल में कार्यरत) अखिल भारतीय पल्लीवाल जैन महासभा के राष्ट्रीय स्तर के त्रैवार्षिक चुनाव में राजस्थान प्रदेश से महिला प्रतिनिधि के पद पर विजयी हुई हैं।

लासलगाँव (नासिक)-चि. यशराजजी सुपुत्र श्री संजयजी एवं सुपौत्र श्री रमेशचन्दजी माँगीलालजी शिंगी ने 22 वर्ष की उम्र में प्रथम प्रयास में सी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण कर नासिक जिले में पाँचवाँ स्थान प्राप्त किया है।

जोधपुर-श्री मोहितजी सुपुत्र श्रीमती संगीता (सी.ए.) गौतमजी जीरावला (कोषाध्यक्ष-अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड) ने चार्टर्ड एकाउण्टेण्ट परीक्षा उत्तीर्ण की है। आप स्व. श्रीमती कमलादेवी-स्व. श्री चम्पालालजी जीरावला के सुपौत्र हैं।

श्रद्धाञ्जलि

अलवर-अनन्य गुरुभक्त, संघसेवी श्री प्रफुल्लजी (सी.ए.) सुपुत्र श्री क्रान्तिचन्दजी मेहता (सी.ए.) का 3 जनवरी,

2023 को सड़क दुर्घटना में आकस्मिक देहावसान हो गया। आप धर्मनिष्ठ एवं होनहार युवा होने के साथ सन्त-सतीवृन्द की सेवा में सदैव तत्पर रहते थे। वाणी की मधुरता, व्यवहार की सरलता एवं मन की निष्कपटता के कारण आप सबके प्रियपात्र थे। आप अलवर पधारने वाले सभी सन्त-सतीवृन्द की विहार सेवा में लाभ लेने के साथ धर्म साधना-आराधना में भी अग्रणी थे। तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. के आप सांसारिक भतीजे थे। मुनिश्री के अलवर चातुर्मास में आपने विशेष धर्म-ध्यान का लाभ लिया था। सम्पूर्ण मेहता परिवार रत्नसंघ की सभी गतिविधियों में सक्रिय रूप से जुड़ा हुआ है। आपके दादाजी वीर पिता स्व. श्री सूरजमल जी मेहता का पल्लीवाल क्षेत्र के संयोजक के रूप में गुरु हस्ती द्वारा प्रेरित सामायिक-स्वाध्याय प्रवृत्ति के प्रचार-प्रसार में महनीय योगदान रहा। आपके पिताजी वीर भ्राता श्री क्रान्तिचन्दजी मेहता ने अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ में पल्लीवाल संभाग के क्षेत्रीय प्रधान के रूप में एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के उपाध्यक्ष रूप में अपनी महनीय सेवाएँ प्रदान की। आपके अग्रज श्री मनीषजी मेहता अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के राष्ट्रीय कार्याध्यक्ष के रूप में अपनी महनीय सेवाएँ प्रदान कर रहे हैं।

-धनपत सेठिया, महामन्त्री

मण्डावर-धर्मनिष्ठ सुश्राविका वीरमाता श्रीमती शकुंतला देवीजी जैन का 4 जनवरी, 2023 को संथारापूर्वक समाधिमरण हो गया। आपकी सन्त-सतीवृन्द के प्रति अगाध श्रद्धा-भक्ति थीं। आपका जीवन सरलता, मधुरता, उदारता, सेवाभावना आदि सद्गुणों से युक्त था। आपने अपने परिवार की लाड़ली को संयम ग्रहण करने की सहर्ष अनुमति प्रदान की जो आज व्याख्यात्री महासती

श्री विमलेशप्रभाजी म.सा. के रूप में जिनशासन की महती प्रभावना कर रहे हैं। आपका सम्पूर्ण परिवार संघ द्वारा सञ्चालित गतिविधियों एवं प्रवृत्तियों से निष्ठापूर्वक जुड़ा हुआ है। आपके सुपुत्र आदरणीय श्री संजयजी जैन–श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, मण्डावर शाखा के अध्यक्ष पद का तथा पुत्रवधू श्रीमती अर्चनाजी जैन–श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, मण्डावर शाखा के सचिव पद का दायित्व बखूबी निर्वहन कर रहे हैं। *–धनपत सेठिया, महामन्त्री*

जलगाँव– धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री पदमचन्दजी सुपुत्र श्री भँवरलालजी बाफना का 17 दिसम्बर, 2022 को 71 वर्ष

की वय में देहावसान हो गया। आप प्रकृति से अत्यंत सरल एवं सेवाभावी थे। असाध्य बीमारी की अवस्था में आपकी धर्मपत्नी शशिजी बाफना ने दीर्घकाल तक जिस प्रकार से आपकी सेवा की वह अपने आप में एक अनुपम एवं दुर्लभ उदाहरण है। आपके एक पुत्र एवं दो पुत्रियाँ हैं। जे जे के नाम से प्रसिद्ध बाफना परिवार आचार्य भगवन्त का अनन्य गुरुभक्त परिवार है। आपके पिता श्री भँवरलालजी ने शासन सेवा समिति के सदस्य के रूप में संघ को अपनी अमूल्य सेवाएँ प्रदान की।

–महावीर बोथरा, जलगाँव

जयपुर–धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री ज्ञानचन्दजी सुपुत्र श्री स्व. श्री हीराचन्दजी लोढ़ा (केकड़ी वाले) का 10 जनवरी,

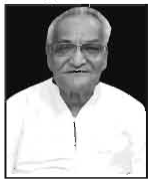

2023 को 75 वर्ष की वय में संथारा सहित देवलोकगमन हो गया। कर्मयोगी, दूरदृष्टि, निडरता एवं निष्पक्षता आदि गुणों से सम्पन्न आपने जयपुर के जवाहरात उद्योग में अपना वर्चस्व स्थापित किया। आपकी गम्भीरता, ईमानदारी जैसे गुणों के कारण आपको जयपुर के कस्टम वैल्यू अप्रैज़र के पद पर लम्बे समय तक नियुक्त किया गया। आपका हृदय सदा करुणा से ओत–प्रोत था। आप दानवीर प्रवृत्ति के धनी, गरीबों के मसीहा, कर्मचारियों एवं उनके परिवार के लोगों का दु:ख दूर करने के लिए सदा तत्पर रहते थे। आप देव–गुरु–धर्म के प्रति समर्पित श्रावक थे। *–नमन डागा, जयपुर*

कंवलियास–धर्मनिष्ठ, उदारमना सुश्रावक श्री गुलाबचन्दजी सुराणा का 24 जनवरी, 2023 को देहावसान हो गया।

आप सन्त–सतियों की सेवाभक्ति में सदैव तत्पर रहते थे। आप श्री पुखराजजी पारसमलजी सुराणा के भाई थे। आप नियमित रूप से गुरु भगवन्तों के दर्शन–वन्दन एवं प्रवचन श्रवण का लाभ प्राप्त करने वाले अग्रणी श्रावक थे। आप प्रतिदिन सामयिक साधना किया करते थे। आपका सम्पूर्ण परिवार गुरु भगवन्तों की सेवा में तत्पर रहता है। *–मनीष सुराणा, मुम्बई*

जोधपुर–संघसेवी, धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती गुलाबकँवरजी धर्मसहायिका स्व. श्री सायरमलजी मेहता का 4

जनवरी, 2023 को 93 वर्ष की वय में देहावसान हो गया। आपकी सन्त–सतियों के प्रति गहरी श्रद्धा–भक्ति थी। परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर, उपाध्यायप्रवर एवं रत्नसंघीय सभी सन्त–सतीवृन्द के चातुर्मास में आप सहित समस्त मेहता परिवार ने तन–मन–धन से अपूर्व धर्मध्यान का लाभ प्राप्त किया। आपका सम्पूर्ण परिवार संघ की गतिविधियों से जुड़ा हुआ है। आपकी इच्छानुसार मरणोपरान्त आपका देहदान एम्स, जोधपुर में किया गया। *–नवरतन गिडिया, मन्त्री*

जोधपुर–सरलमना सुश्राविका श्रीमती सज्जनकँवरजी धर्मसहायिका स्व. श्री जीतमलजी बालड़ का 8 दिसम्बर,

2022 को स्वर्गवास हो गया। आप स्व. श्रीमती मोहिनी देवी–स्व. श्री त्रिलोकचन्द जी सर्राफ की सुपुत्री थी। आप एक धर्मप्रेमी एवं तपस्विनी सुश्राविका थी। आपके परिवार से आपकी सांसारिक दोहित्री महासती श्री धर्मिष्ठाजी म.सा. ज्ञानगच्छ में दीक्षित हैं। *–धीरज डोसी, जोधपुर*

जोधपुर-धर्मनिष्ठ सरल हृदया सुश्री अदितिजी सुपुत्री श्री नरेन्द्रजी मेहता (सुपौत्री श्रीमती सुशीलाजी-स्व. श्री

कँवलराजजी मेहता) (दोहित्री स्व. श्री तखतराजजी-स्व. श्रीमती सुन्दरदेवीजी गेमावत) का 16 जनवरी, 2023 को देहावसान हो गया। बचपन से विरासत में प्राप्त सुसंस्कारों के कारण अदितिजी सदैव ज्ञान-ध्यान सीखने में और गरीबों की सेवा करने में अग्रणी रहती थीं। आपकी सभी सन्त-सतियों के प्रति अगाध श्रद्धाभक्ति थी। आप सदैव हँसमुख, मिलनसार स्वभाव वाली थीं। आप सहित आपका सम्पूर्ण परिवार संघ की गतिविधियों में तन-मन-धन से जुड़ा हुआ है। आपके दादाजी संघ समर्पित श्रावकरत्न स्व. श्री कंवलराजजी मेहता का आचार्य शोभाचन्द ज्ञान भण्डार में हस्तलिखित शास्त्रों का डिजिटलाइजेशन करवाने में अपूर्व सहयोग प्राप्त हुआ था। *-नवरतन गिड़िया, मन्त्री*

मुम्बई-धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री पार्श्वकुमारजी सुपुत्र श्री कन्हैयालालजी मेहता (मूल निवासी बड़ी सादड़ी) का 3

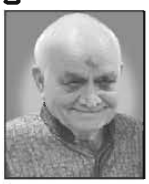

दिसम्बर, 2022 को 89 वर्ष की वय में समाधिमरण हो गया। आप 'साहित्य धर्मरत्न' में गोल्ड मेडलिस्ट थे। आपने सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा प्रकाशित साहित्य 'सामायिक-प्रतिक्रमणसूत्र' के सम्पादन में विशेष सहयोग प्रदान किया। आप लगभग 50 वर्षों तक जयपुर में रहे। आप श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन पाठशाला, रायपुर में लगभग 5 वर्षों तक प्रधानाध्यापक के पद पर कार्यरत रहे। आप पर्युषण पर्व में स्वाध्यायी के रूप में बाहर जाकर सेवा प्रदान की। आप राजस्थान सरकार में मेडिकल डाइरेक्ट्रेट में कार्यरत थे। आप अपने पीछे सुपुत्र श्री नवरत्नजी-कविताजी, दिलीपजी-प्रमिलाजी सहित भरा-पूरा परिवार छोड़ कर गए हैं।

जोधपुर/हुबली-धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती स्नेहलताजी (सुधाजी जैन) धर्मसहायिका स्व. श्री रिखबराजजी जैन

पुत्रवधू स्व. श्री गुमानमलजी ओस्तवाल का 4 जनवरी, 2023 को 69 वर्ष की वय में स्वर्गगमन हो गया। आप शालीनता, कर्त्तव्य परायणता, आत्मीयता, सहनशीलता, वाणी की मधुरता आदि सद्गुणों से सम्पन्न होने के साथ देवगुरु-धर्म के प्रति समर्पित थीं। आपने पुत्रियों एवं समस्त परिवार को सुसंस्कारित कर उनका धर्ममय जीवन बनाने में महत्त्वपूर्ण दायित्व निभाया। आप कई वर्षों से सुबह-शाम सामायिक करती थीं।

पलडम (तमिलनाडु)-धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती चन्द्राजी धर्मसहायिका श्री शान्तिलालजी डाकलिया का 24 जनवरी, 2023 को 67 वर्ष की आयु में सात उपवास के साथ संथारे सहित समाधिमरण हो गया। आपको तिरपुर से पधारे श्रावकजी ने पच्चक्खाण कराये। आप मृदुभाषी, सरलस्वभावी, मिलनसार, हँसमुख धार्मिक प्रवृत्ति की श्राविका थी। आपने अपने जीवन में अनेक छोटी-बड़ी तस्याएँ की। पलडम पधारने वाले सन्त-सतीवृन्द की सेवाभक्ति में अग्रणी थी। आप अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड़कर गयी हैं। *-धीरेन्द्र डाकलिया, चौपड़ा*

कोटा-धर्मनिष्ठ श्राविका श्रीमती लक्ष्मी देवीजी धर्मसहायिका स्व. श्री रूपचन्दजी जैन का 25 दिसम्बर, 2022 को

देवलोकगमन हो गया। आपकी सन्त-सतीवृन्द के प्रति गहरी श्रद्धाभक्ति थी। वाणी की मधुरता, व्यवहार की सरलता, निस्पृह सेवा-भावना के फलस्वरूप आप सबकी प्रिय थी। आपका जीवन त्याग-प्रत्याख्यान से युक्त था। आपने दो बार वर्षीतप, कई बार अठाई एवं तेलों की तपस्या की। नियमित सामायिक-स्वाध्याय की साधना के साथ एकाशन, आयम्बिल, उपवास भी समय-समय पर किया करती थीं। आपके रात्रिभोजन का त्याग था। स्वास्थ्य की प्रतिकूलता होने पर भी आप समभाव में रमण करती रहीं। आप गुरु सेवा में समर्पित रहे संघसेवी श्रावक शिक्षाविद स्व. श्री जगदीश प्रसादजी जैन चकेरी वालों (गुरुजी) की बड़ी बहिन थी। *-रविन्द्र-आनन्द जैन, चकेरी*

जयपुर-धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती रामदेवी जी (केसरबाईजी) धर्मपत्नी स्व. श्री भगवतीलालजी जैन (बरगमा वाले-हिण्डौन सिटी) का 13 जनवरी, 2023 को 92 वर्ष की वय में चौविहार संलेखना-संथारापूर्वक समाधिमरण हो गया। आपको 05 जनवरी, 2023 को सायंकाल लगभग 6 बजे चेतनावस्था में विधिवत् चौविहार संथारा के प्रत्याख्यान करवाए गए। नौ दिन के संथारे में लगातार सभी परिवारजनों तथा दर्शनार्थी बन्धुओं द्वारा आपको भजन, जाप, स्तोत्र, आलोचना, बारह भावना, संथारा छत्तीसी, आगमोक्ति आदि का श्रवण कराया गया तथा आप भी सजगता, स्थिरता एवं समता से अपने अन्तिम मनोरथ को सफल कर रही थीं। आप एक सरल स्वभावी तथा गुरु भगवन्तों में अपार श्रद्धा रखने वाली श्राविका थीं। धार्मिक संस्कार आपको अपने ससुराल बरगमा में मिले, जहाँ गुरु भगवन्तों का विचरण-विहार अधिक रहता था। आपकी रुचि प्रवचन, धार्मिक कथाएँ, भजन आदि सुनने में अधिक थी। आप अपने पीछे तीन पुत्र-पुत्रवधू श्री जिनेशजी-कमलाजी, श्री वीरेन्द्रजी-गुणमालाजी, श्री प्रमोदजी-आरतीजी, तीन पुत्रियाँ, पौत्र, प्रपौत्र सहित भरापूरा परिवार छोड़कर गयी हैं।

-विकास जैन

उपर्युक्त दिवगंत आत्माओं को अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल एवं सभी सम्बद्ध संस्थाओं के सदस्यों की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

गुरु की महिमा

श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा.

- गुरु का सान्निध्य प्राप्त होने पर ही व्यक्ति अपने जीवन की पहचान कर सकता है।
- सच्चा गुरु, भक्त को भगवान से जोड़कर स्वयं पृथक् हो जाता है।
- सद्गुरु का सान्निध्य गुणों की वृद्धि तो करता ही है, दोष भी दूर करता है।
- गुरु करता तो कुछ नहीं, पर सब-कुछ गुरु के हाथ में होता है।
- शिष्य का गुरु के प्रति विनय विशेष प्रकार का होता है। शिष्य का विनय दूध-मिश्री की तरह होता है। एकमेक हो जाने का आनन्द कुछ और ही होता है।
- सद्गुरु सच्चा और अच्छा होता है, इसीलिए गुरु बनाने के पहले शिष्य को अपने दोष बाहर निकालने चाहिये।
- विनय-वैयावृत्य से शिष्य की हृदयरूपी भूमि उर्वरक होती है, जिसमें बोया बीज अधिक पैदावार देता है। ठीक वैसे ही गुरु अपने भक्तों को बहुत-कुछ देता ही है।
- गुरु-सान्निध्य से भक्तों को सुख, शान्ति, समाधि और आनन्द मिलता है।
- गुरु का विनय-वैयावृत्य करके हम ध्यान-मौन, त्याग-तप और साधना-आराधना में आगे बढ़ सकते हैं।
- गुरु के प्रति अनन्य आस्था और अगाध भक्ति से आध्यात्मिक ऊर्जा प्राप्त होती है और शिष्य का समर्पण उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है।
- गुरु के आचरण को देखकर भक्त अपने दोषों-दुर्गुणों का निवारण करते हुए गुणवर्धन करता ही है।
- गुरु-सेवा से दुःख-दुविधाएँ और कष्ट-विपदाएँ पहले तो आती ही नहीं हैं और आ जायें तो टिकती नहीं हैं।
- जब होता है भक्त परेशानियों से चूर, तब गुरु करते हैं हर गम को दूर।

-संकलन : श्री नौरतनमल मेहता, सह सम्पादक

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 89
ISSN 2249-2011

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

1000/-जिनवाणी पत्रिका की आजीवन (अधिकतम 20 वर्ष) सदस्यता हेतु प्रत्येक

16381 श्री सुशील कुमारजी गोलेच्छा, सूरत (गुजरात)

16382 श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ, गंगाशहर-बीकानेर

जिनवाणी प्रकाशन योजना हेतु

100000/-सौ. प्रेमलताजी सोहनलालजी बोथरा, सौ. रञ्जनाजी महावीरजी बोथरा, जलगाँव (महाराष्ट्र)

जिनवाणी मासिक पत्रिका हेतु साभार

11000/-श्री क्रान्तिचन्दजी मेहता, अलवर, सुपुत्र सी. ए. श्री प्रफुल्लजी मेहता का 3 जनवरी, 2023 को देहावसान हो जाने पर उनकी पुण्यस्मृति में।

11000/-श्री प्रेमचन्दजी-कान्तामालाजी चपलोत, जयपुर, सुपौत्र प्रेरितजी जैन (सुपुत्र श्री धर्मेन्द्रजी-श्रीमती प्रभाजी जैन) संग सौ.कां. अदिति का शुभविवाह 13 दिसम्बर, 2022 को सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में।

5100/- श्री नवरतनजी, दिलीपजी मेहता, मुम्बई-जयपुर, श्री पार्श्व कुमारजी मेहता का 3 जनवरी, 2023 को समाधिमरण हो जाने पर उनकी पुण्यस्मृति में।

5000/- श्रीमती सुनीताजी-नरेन्द्र कुमारजी डागा, जयपुर, सुपुत्र श्री निपुणजी-महकजी डागा के पुत्ररत्न प्राप्त होने के उपलक्ष्य में।

5000/- श्रीमती सुनीताजी डागा, जयपुर, पूज्य पिताजी श्री ज्ञानचन्दजी लोढ़ा का 10 जनवरी, 2023 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्यस्मृति में।

5000/- श्री रिखबचन्दजी, विनयजी लोढ़ा, जयपुर, पूज्य पिताजी श्री ज्ञानचन्दजी लोढ़ा का 10 जनवरी, 2023 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्यस्मृति में।

3100/- श्री लालचन्दजी जरगड़, जयपुर की ओर से सप्रेम।

3100/- श्री प्रवीणजी सुखलेचा, जयपुर की ओर से सप्रेम।

3100/- श्री त्रिलोकचन्दजी जैन, सवाईमाधोपुर, सुश्री स्वराजी सुपुत्री श्री राहुलजी तथा प्रियनजी सुपुत्र श्री अक्षयजी जैन (हैप्पी) के जन्मदिवस के उपलक्ष्य में।

2111/- श्री सौभागमलजी, हरकचन्दजी, हनुमान प्रसादजी, महावीर प्रसादजी, कपूरचन्दजी जैन (बिलोता वाले), मातुश्री के 27वें पुण्यस्मृति दिवस पर सप्रेम।

2100/- श्री अचलराजजी डागा एवं डागा परिवार, जोधपुर, सुश्रावक श्री सुमेरनाथजी मोदी का 8 दिसम्बर, 2022 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्यस्मृति में।

2100/- श्रीमती बसन्तीजी सिंघवी, जोधपुर, सुपौत्री सुश्री निकिताजी सुपुत्री श्री निर्मलजी सिंघवी की सगाई होने के उपलक्ष्य में।

2100/- श्री गौतमचन्दजी, नीतेश कुमारजी कटारिया (पीपाड़ वाले), चेन्नई की ओर से सप्रेम।

2100/- श्री विजय कुमारजी, श्रीमती प्रमिलाजी जैन (फ़ाजिलाबाद वाले), जयपुर, पूज्य पिताजी श्री कल्याण प्रसादजी जैन की 18 फरवरी, 2023 को 27वीं पुण्यतिथि के उपलक्ष्य में।

2000/- श्रीमती शिखाजी पारख, जोधपुर, सुश्राविका श्रीमती बजूजी धर्मपत्नी श्री लेखराजजी पारख का 19 दिसम्बर, 2022 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्यस्मृति में।

2000/- श्रीमती शिल्पाजी पारख, जोधपुर, सुश्राविका श्रीमती बजूजी धर्मपत्नी श्री लेखराजजी पारख का 19 दिसम्बर, 2022 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्यस्मृति में।

1111/- श्री महेन्द्र कुमारजी, श्रीमती वन्दनाजी जैन (पुसेदा वाले), मण्डी रोड़-सवाईमाधोपुर, सुपुत्री डॉ. मुस्कानजी जैन के राजस्थान आयुर्वेदिक विश्वविद्यालय से बी.एच.एम.एस. की डिग्री प्राप्त होने के उपलक्ष्य में।

1100/- श्री अभिषेकजी बैद, जोधपुर, सुश्राविका श्रीमती बजूजी धर्मपत्नी श्री लेखराजजी पारख का 19 दिसम्बर, 2022 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्यस्मृति में।

1100/- श्री सुरेशचन्दजी, गौतमचन्दजी जैन (श्यामपुरा वाले), कोटा, पूजनीय माताजी श्रीमती लक्ष्मीदेवीजी धर्मपत्नी श्री रूपचन्दजी जैन का 25 दिसम्बर, 2022 को देहावसान हो जाने पर उनकी पुण्यस्मृति में।

1100/- श्री नितेशजी जैन, सवाईमाधोपुर, श्रीमती दाखाबाईजी की पुण्यस्मृति में।

1100/- श्रीमती मालाजी, प्रिया-प्रशान्तजी, प्रीशा-प्रिशीताजी मेहता, जोधपुर, स्व. डॉ. प्रमोदजी मेहता की पावन-स्मृति में।

1100/- श्री पंकज कुमारजी जैन, इन्दौर, स्व. श्रीमती पतासीबाईजी धर्मपत्नी श्री लड्डूलालजी जैन की पुण्यस्मृति में।

गजेन्द्र निधि/गजेन्द्र फाउण्डेशन हेतु

स्व. श्री रतनचन्दजी भण्डारी की पुण्य तिथि पर उनकी धर्मसहायिका श्रीमती पुष्पाजी, सुपुत्र-सुपुत्रवधू डॉ. सुरेन्द्रजी-डॉ. शशिजी एवं सुपौत्र-सुपौत्रवधू डॉ. साहिलजी-जूहीजी, सुपौत्री डॉ. महकजी, मुम्बई।

(2) श्री अजयजी, मनीषजी, अवयानजी, प्रयानजी नाहर (बरेली वाले), भोपाल (मध्यप्रदेश)

(3) श्री जम्बू कुमारजी सुपुत्र श्री पारसमलजी पारख, श्री प्रसूनजी, श्रीमती प्रभाजी, सी. ए. आयुषजी, पूर्वीजी पारख, मुम्बई।

(4) श्री बसन्तजी, श्रीमती संगीताजी, श्री विकासजी लोढ़ा, बैंकॉक-जयपुर।

परोपकार

संकलन

सन् 1720 में फ्रांस के मार्सेल्स शहर में एकाएक महामारी फैलने से आदमी मक्खियों की तरह मरने लगे। श्मशान में लाशों के ढेर लग गए। इतने आदमी मरते गए कि कोई उन्हें जलाने और दफ़नाने वाला भी नहीं मिला। सारा प्रान्त मृत्यु के महाभय महामारी से काँप उठा। चिकित्सकों के सभी बाह्य उपचार निष्फल हो गए। कई बार तो डॉक्टर स्वयं रोग का शिकार बन जाता था। मृत्यु का नगाड़ा बज उठा था। इस भयंकर रोग के निदान के लिए प्रसिद्ध चिकित्सकों की एक सभा जुड़ी, जिसमें इस रोग पर काफी विचार विनिमय हुआ। सभी एक निर्णय पर आए कि यह रोग सामान्य उपचारों से मिटने वाला नहीं है। महामारी के रोग से मरे हुए मनुष्य की लाश चीरकर देखे बिना इसका निदान होना असम्भव है, पर प्लेग से मृत व्यक्ति के शव को चीरे कौन? यह तो यमराज को आगे होकर न्यौता देना है।

सारी सभा विसर्जित होने वाली थी, तभी एक युवक खड़ा हुआ। उसकी आँखों में करुणा और होठों पर निर्णय था। सभी डॉक्टर का ध्यान उस युवक डॉक्टर हेनरी गायन की ओर खिंच गया। उसने आगे बढ़कर विनम्रतापूर्वक कहा-"आप जानते ही हैं कि अपनी ज़िन्दगी का मोह छोड़े बिना दूसरों को जीवनदान नहीं दिया जा सकता। मेरे शरीर के दान से हजारों-लाखों भाई-बहिनों और माताओं के आँसू रुकते हों तो मैं अपना तन अर्पण करने को तैयार हूँ। मेरे आगे-पीछे कोई नहीं है। मेरी यह सम्पत्ति महामारी के रोगियों के लिए खर्च करना।"

वृद्ध डॉक्टर देखते ही रह गये। वे अपने शरीर का मोह-ममत्व छोड़ न सके, जो इस युवक ने बात ही बात में छोड़ दिया। इसके बाद हेनरी गायन तुरन्त ऑपरेशन कक्ष में प्रविष्ट हुआ। महामारी से मरे हुए मनुष्य की लाश को चीरने लगा। भयंकर बदबू के मारे नाक फटा जा रहा था। फिर भी वह लाश को चीरता गया। रोग का निदान करता गया। उसने जन्तुओं के आक्रमण के स्थान और कारणों की एक नोंद तैयार की। यह नोंद उसने रासायनिक द्रव्यों में रखी ताकि इसे छूने वालों को यह चेपीरोग न लगे। हेनरी गायन ने अपना काम पूरा किया। उसका शरीर तो कभी का बुखार से तप चुका था। वह खड़ा होने लगा, लेकिन प्लेग के कीटाणु उसके शरीर को अपना घरौंदा बना चुके थे। वह धड़ाम से नीचे गिर पड़ा, परन्तु उसके मुँह पर अपनी शोध पूरी करने का सन्तोष था। हालांकि हेनरी गायन मर गया, परन्तु अपना अनुसन्धान छोड़ गया जिससे लाखों मानवों और रोगियों को जीवनदान मिला। उसने मानव जाति की रक्षा के लिए अपने प्राणों का त्याग भरी जवानी में कर दिया। **"देह का बलिदान मानव जाति को जीवन दान।"**

-श्री एस. कन्हैयालाल गोलेच्छा,
7/25, कामराज सालै आर.ए. पुरम चेन्नई-600028

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 91
ISSN 2249-2011

बाल-जिनवाणी

प्रतिमाह बाल-जिनवाणी के अंक पर आधारित प्रश्नोत्तरी में भाग लेने वाले अधिकतम 20 वर्ष की आयु के श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को सुगनचन्द प्रेमकँवर रांका चेरिटेबल ट्रस्ट-अजमेर द्वारा श्री माणकचन्दजी, राजेन्द्र कुमारजी, सुनीलकुमारजी, नीरजकुमारजी, पंकजकुमारजी, रौनककुमारजी, नमनजी, सम्यक्जी, क्षितिजजी रांका, अजमेर की ओर से पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-600 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-400 रुपये, तृतीय पुरस्कार- 300 रुपये तथा 200 रुपये के तीन सान्त्वना पुरस्कार। पुरस्कार राशि सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा भिजवाई जाती है। उत्तर प्रदाता अपने नाम, पते, आयु तथा मोबाइल नम्बर के साथ बैंक विवरण-बैंक का नाम, खाता संख्या, आई.एफ.एस. कोड आदि का भी उल्लेख करें।

परोपकार

संकलित

एक गरीब किसान के दो पुत्र थे। दोनों में परोपकार की भावना कूट-कूट कर भरी हुई थी। अपने आवश्यक कार्यों को छोड़कर भी दोनों भाई दीन-हीन की सेवा में लगे रहते थे। अपने पुत्रों को गृहकार्यों के प्रति लापरवाही बरतते देखकर उसके पिता ने नाराज होकर एक दिन उन्हें घर छोड़ने की आज्ञा दे दी।

दोनों भाई निकल पड़े। चलते-चलते शाम हो गई। दोनों ने एक पेड़ के नीचे सूखे पत्ते और घास को इकट्ठा कर बिछौना बनाया और उसी पर सो गए। नींद आ ही रही थी कि एक कबूतर, जो किसी बहेलिए के तीर से घायल हो गया था, फड़फड़ाते हुए बिछौने पर आ गिरा। दोनों भाइयों की नींद उड़ गई। दोनों भाइयों ने सारी रात जागकर उसकी सार-सम्भाल एवं सेवा की।

प्रात: सूर्योदय होने पर वे अगले पड़ाव के लिए रवाना हुए। साथ में वह कबूतर भी था। कबूतर आगे-आगे उड़ता जा रहा था। दोनों भाई भी उसके पीछे-पीछे जा रहे थे। क्योंकि उनका भी कोई निश्चित मार्ग न था इसलिए वे भी कबूतर को मार्गदर्शक मानकर उसके पीछे-पीछे चलते रहे। चार-पाँच कोस चलने के बाद एक नगर आ गया और कबूतर उस नगर के राजमहल की ओर जाने लगा। दोनों भाइयों ने विचार किया कि शायद इस कबूतर का घर राजमहल में है अत: वे वापस लौटने लगे। लेकिन तभी राजमहल से राजकुमार के साथ वही कबूतर बाहर निकला। राजकुमार ने दोनों भाइयों से पूछा कि यह कबूतर तुमको कहाँ मिला? तब दोनों भाइयों ने सारी घटना राजकुमार को कह सुनाई। राजकुमार ने उन दोनों भाइयों से कहा-"यह मेरा प्रिय कबूतर है और इसके वियोग से मैं बहुत शोकमग्न था। आप दोनों ने इसकी घायल अवस्था में सेवा करके इसे पुन: स्वस्थ करके मेरे पास पहुँचाया, इसके लिए मैं आप दोनों को धन्यवाद देता हूँ।"

राजकुमार उन दोनों भाइयों की सहृदयता एवं प्राणिमात्र पर अनुकम्पा के भाव से बड़ा प्रसन्न हुआ और उपहार स्वरूप उन्हें ढेर सारे सोने-चाँदी के सिक्के दिए। उनको अपने राज्य में विशेष पद भी दे दिये। कुछ समय पश्चात् दोनों भाई घर आये और अपने पिता को परोपकार से प्राप्त सफलता का वृत्तान्त कहा। किसान अपने दोनों बेटों से बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने परोपकार की महत्ता को समझा और वह भी अपने पुत्रों के साथ उसी राज्य में चला गया जहाँ उसके पुत्र रहने लगे थे।

शिक्षा-दूसरों की भलाई करना सबसे बड़ा पुण्य है एवं दूसरों को पीड़ा पहुँचाना सबसे बड़ा पाप है।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने कहा है–

आभरण नर देह का, बस एक पर–उपकार है,
हार को भूषण कहे, उस बुद्धि को धिक्कार है।
स्वर्ण की जंजीर बाँध, श्वान फिर भी श्वान है,
धूलि धूसर भी कहीं, पाता सदा सम्मान है।।

–पुस्तक 'प्रेरक कथाएँ' से साभार

अपना चिन्तन शुभ रखना

श्री मोहन कोठारी 'विनर'

जीवन के हर पल, हर क्षण में,
अपना चिन्तन तुम शुभ रखना।
प्रतिकूल प्रसंग के आने पर,
समभावों में ही तुम रहना।।टेर।।

सही सोच हमारी जीवन में,
जीवन को ऊँचा उठाती है,
शुभ भाव रहे गर अन्तर में,
चेहरे की चमक बढ़ जाती है।
बढ़ते हैं क़दम सद्राहों पर,
अपनी श्रद्धा में दृढ़ रहना,
जीवन के हर पल, हर क्षण में .... ।।1।।

औरों के हित की तुम सोचो,
और भला सभी का नित चाहो,
दु:खियों के आँसू पोंछो तुम,
उनके मसीहा तुम बन जाओ।
रहे परोपकार की सोच सदा,
पुण्यवानी से झोली भरना,
जीवन के हर पल, हर क्षण में .... ।।2।।

यह मन है विचारों का सागर,
रह–रहकर यह लहराता है,
जो मन के पीछे चलता है,
वह इक दिन धोखा खाता है।
नहीं उत्पात मचाए मन अपना,
मन को अपने वश में करना,
जीवन के हर पल, हर क्षण में .... ।।3।।

कर्मों को काटता शुभ चिन्तन,
इस मन को समाधि मिलती है,
अपनापन बढ़ता रिश्तों में,
खुशियों की क्यारी खिलती है।
तुम वीर सिपाही हो भाई,
काँटे आए तो मत डरना,
जीवन के हर पल, हर क्षण में .... ।।4।।

–जनता साड़ी सेंटर, फरिश्ता कॉम्प्लेक्स, स्टेशन रोड़, दुर्ग (राज.)

शब्द रचे जाते हैं

श्री शुभम बोहरा

शब्द रचे जाते हैं, शब्द गढ़े जाते हैं,
शब्द मढ़े जाते हैं, शब्द लिखे जाते हैं,
शब्द पढ़े जाते हैं, शब्द बोले जाते हैं,
शब्द तौले जाते हैं, शब्द टटोले जाते हैं,
शब्द खंगाले जाते हैं।
इस प्रकार
शब्द बनते हैं, शब्द सँवरते हैं,
शब्द सुधरते हैं, शब्द निखरते हैं,
शब्द हँसाते हैं, शब्द मनाते हैं,
शब्द रुलाते हैं, शब्द मुस्कुराते हैं,
शब्द खिलखिलाते हैं, शब्द गुदगुदाते हैं,
शब्द मुखर हो जाते हैं, शब्द प्रखर हो जाते हैं
शब्द मधुर हो जाते हैं।
इतना होने के बाद भी
शब्द चुभते हैं, शब्द बिकते हैं,
शब्द रूठते हैं, शब्द घाव देते हैं,
शब्द ताव देते हैं, शब्द लड़ते हैं,
शब्द झगड़ते हैं, शब्द बिगड़ते हैं,
शब्द बिखरते हैं, शब्द सिहरते हैं।
परन्तु
शब्द कभी मरते नहीं, शब्द कभी थकते नहीं

शब्द कभी रुकते नहीं, शब्द कभी चुकते नहीं।
अतएव
शब्दों से खेलें नहीं, बिन सोचे बोले नहीं
शब्दों को मान दें, शब्दों को सम्मान दें
शब्दों पर ध्यान दें, शब्दों को पहचान दें
ऊँची लम्बी उड़ान दें, शब्दों को आत्मसात् करें
उनसे उनकी बात करें, शब्दों का आविष्कार करें
गहन सार्थक विचार करें।
क्योंकि
शब्द अनमोल हैं, ज़ुबाँ से निकले बोल हैं
शब्दों में धार होती है,
शब्दों की महिमा अपार होती है
शब्दों का विशाल भण्डार होता है
और ... सच तो यह है कि
शब्दों का भी अपना एक संसार होता है।

-नयनतारा गेस्ट हाउस, मोहदी रोड़, जलगाँव-425001 (महाराष्ट्र)

ज्ञानवृद्धि के 11 बोल

संकलित

सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति और वृद्धि के लिए दिये गये बोलों का ध्यान रखिए-

1. ज्ञान सीखने का **उद्यम** करने से ज्ञान बढ़ता है।
2. **नींद कम करके** अभ्यास करने से ज्ञान बढ़ता है।
3. **भूख से कम खाकर** अभ्यास करने से ज्ञान बढ़ता है।
4. **मौन** रखकर अभ्यास करने से ज्ञान बढ़ता है।
5. **ज्ञानी के पास** अभ्यास करने से ज्ञान बढ़ता है।
6. **गुरु का विनय** करके अभ्यास करने से ज्ञान बढ़ता है।
7. **संसार के प्रति वैराग्य** के साथ ज्ञान सीखने से ज्ञान बढ़ता है।
8. सीखे हुए ज्ञान का **परावर्तन** करने से ज्ञान बढ़ता है।
9. **पाँचों इन्द्रियों को वश** में करके अभ्यास करने से ज्ञान बढ़ता है।
10. **ब्रह्मचर्य का पालन** करके अभ्यास करने से ज्ञान बढ़ता है।
11. **कपटरहित तप** करने से ज्ञान बढ़ता है।

-पुस्तक 'जैन पाठ्यक्रम' से साभार

प्रतिक्रमण-प्रश्नोत्तर

प्र. 1- आवश्यकसूत्र का प्रसिद्ध दूसरा नाम क्या है?

उत्तर- प्रतिक्रमणसूत्र।

प्र. 2- आवश्यकसूत्र को प्रतिक्रमणसूत्र क्यों कहा जाता है?

उत्तर- आवश्यकसूत्र के छह आवश्यकों में से प्रतिक्रमण आवश्यक सबसे बड़ा एवं महत्त्वपूर्ण है। इसलिये वह प्रतिक्रमण के नाम से प्रचलित हो गया है। दूसरा कारण यह है कि प्रथम तीन आवश्यक प्रतिक्रमण की पूर्व क्रिया के रूप में और शेष दो आवश्यक उत्तर क्रिया के रूप में किये जाते हैं।

प्र. 3- प्रतिक्रमणसूत्र में प्रकाश और अन्धकार का पाठ कौनसा है?

उत्तर- दर्शन समकित का पाठ प्रकाश का और अठारह पापस्थान का पाठ अन्धकार का है।

-'श्रावक सामायिक प्रतिक्रमणसूत्र' पुस्तक से

Question Answers

Shri Dulichand Jain

Q 1. How does Jaina religion protect the environment?

Ans. Yes, Jainism has given utmost importance to the protection of our environment. The principle of *parasparopagraho jivānāma,* a Jaina aphorism from the *Tattvārtha Sūtra*, translates as, "All life is bound together by mutual support and interdependence." It means that all life-bearing agencies of nature like earth, water, fire and air, as well as vegetation, animals and humans are interdependent creatures. Worms,

insects and animals help to keep the ecological balance. We cannot survive unless we offer protection to all of them.

Hence, Jainism teaches us to use minimum water, keep the air clean, not cut trees and not harm the smaller creatures. By followings these rules, we can continue to protect our environment.

-Chennai (Tamilnadu)

Some very good and bad things

Shri Shrikant Gupta

The most destructive habit	*Worry*
The greatest Joy	*Giving*
The greatest loss	*Loss of self-respect*
The most satisfying work	*Helping others*
The ugliest personality trait	*Selfishness*
The most endangered species	*Dedicated leaders*
Our greatest natural resource	*Our youth*
The greatest "shot in the arm"	*Encouragement*
The greatest problem to overcome	*Fear*
The most effective sleeping pill	*Peace of mind*
The most crippling failure disease	*Excuses*
The most powerful force in life	*Love*
The most dangerous pariah	*A gossiper*
The world's incredible computer	*The brain*
The worst thing to be without	*Hope*
The deadliest weapon	*The tongue*
The two most power-filled words	*"I Can"*
The greatest asset	*Faith*
The most worthless emotion	*Self-pity*
The most beautiful attire	*Smile*
The most prized possession	*Integrity*
The most powerful channel of communication	*Prayer*
The most contagious spirit	*Enthusiasm*

-Jodhpur (Rajasthan)

ज़िन्दगी शानदार है, जी भरकर जीएँ

श्री जयदीप ढड्ढा

कहते हैं मनुष्य जन्म बड़ी मुश्किल से मिलता है। इसे अच्छा जीओ और जी भरकर जीओ। लेकिन जीवन कभी एक-सा नहीं रहता। कभी दुःख तो कभी सुख, धूप-छाँव की तरह आते रहते हैं। ढेरों चुनौतियाँ आती हैं। लेकिन जिन्हें जीवन जीने का सलीका आ जाता है, उनके लिए चुनौतियाँ मायने नहीं रखतीं। जिसे मुस्कराकर हौसलों से आगे बढ़ना आ जाता है, उसकी सभी मुश्किलें आसान हो जाती हैं। जिसे खुद से और सबसे प्रेम करना आ जाता है, उसे जीवन श्रेष्ठ और शानदार लगने लगता है।

जब आप प्रकृति के करीब होते हैं, उसका आनन्द लेते हैं, तो सारे जहान की खुशियाँ आपकी झोली में आ जाती हैं। सुबह होते ही सूर्य अपनी आभा बिखेरने लगता है। फूल खिलने लगते हैं, पक्षियों की चहचहाहट शुरू हो जाती है। दूर कहीं से झरनों की कल-कल आवाज़ सुनाई देती है; मानो मधुर संगीत बज रहा हो। भोर की शुद्ध, निर्मल हवा दिलों दिमाग पर छाने लगती है। तन-मन ताजगी से भर उठता है। नई ऊर्जा का सञ्चार होता है। मन करता है, हम भी अपने कर्म-पथ पर निकल पड़ें। यह सब सुहानी प्रकृति की देन है। जितना हम उसके करीब जायेंगे, जीवन को उतना ही शान्त और सुन्दर जी सकेंगे। यही स्वर्ग का आभास है। प्रकृति ने हमें बहुत कुछ दिया है। इसका हमें आभार मानना चाहिए।

प्रकृति का साथ पाने के लिए हम सुबह टहलने जा सकते हैं। योगा कर सकते हैं। मन्द मधुर स्वर में संगीत सुन सकते हैं। प्रभु का स्मरण कर सकते हैं, जिससे गुरुजन के दर्शन कर सकते हैं। चार दोस्तों के साथ घूमने जा सकते हैं। पशु-पक्षियों से दोस्ती कर सकते हैं, जिससे वे हमसे निर्भय और हम उनसे निर्भय। यही तो जीवन की सार्थकता है। सारा विश्व आपको मित्र नज़र आएगा। एक दूसरे के लिए अहिंसा और सद्भाव रखने से ही जीवन चलता है। आप भी खुश और दूसरे भी खुश। जब आपका दिल और दिमाग शान्त और सुकून से भरा होगा तो आप मदद कर सकते हैं दूसरों की भी और खुद की भी। अच्छे विचार आयेंगे। आप जीवन का आनन्द ले सकेंगे। ऐसा लगेगा जैसे पूरा विश्व आप में समाया हुआ है।

-ढड्ढा मार्केट, जौहरी बाजार, जयपुर-302003 (राज.)

10 फरवरी 2023
जिनवाणी 95
ISSN 2249-2011

बाल-स्तम्भ

मेरी छोटी बहिन सन्तोष

श्रीमती प्रीति जैन

बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित रचना को पढ़कर अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर 20 वर्ष की आयु तक के पाठक 15 मार्च, 2023 तक जिनवाणी सम्पादकीय कार्यालय, ए-9, महावीर उद्यान पथ, बजाज नगर, जयपुर-302015 (राज.) के पते पर प्रेषित करें। उत्तर के साथ अपना नाम, आयु, मोबाइल नम्बर तथा पूर्ण पते के साथ बैंक विवरण-बैंक का नाम, खाता संख्या, आई.एफ.एस. कोड इत्यादि का भी उल्लेख करें। श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर द्वारा अपनी धर्मपत्नी एवं श्रीमती अरुणा जी, श्री मनोजकुमार जी, श्री कमलेश कुमार जी बाफना की माताश्री स्व. श्रीमती मोहिनीदेवी जी बाफना की पुण्य-स्मृति में पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-500 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-300 रुपये, तृतीय पुरस्कार-200 रुपये तथा 150 रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार। पुरस्कार राशि सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा भिजवाई जाती है।

मैंने सुना है कि जो काम दवा से नहीं होता, वह काम हवा से हो जाता है और जो काम हवा से भी नहीं होता, वह काम दुआ से हो जाता है। दुआएँ बहुत सस्ती होती हैं, पर न जाने क्यों हम इन्हें खरीद नहीं पाते हैं। हमारे आस-पास के परिवेश में अनेक ऐसे भी लोग हैं जो दुआओं का खजाना साथ लेकर चलते हैं, पर हम उनसे वे दुआएँ प्राप्त करने का कोई उपक्रम ही नहीं कर पाते हैं।

10 अगस्त 2022 की बात है। मेरा छोटा पुत्र अतिशय जो कि अभी गत 28 जुलाई को ही 10 वर्ष का हुआ है, उसके स्कूल बस ड्राइवर के आवश्यक कार्य होने से आज स्कूल बस का अवकाश था। इस कारण सुबह तो मेरे पति जिनका नाम निमित्त है, उन्होंने अतिशय को स्कूल छोड़ दिया था। लेकिन अपने व्यवसाय की एक आवश्यक मीटिंग में व्यस्त होने के कारण वे अतिशय को स्कूल से लाने में असमर्थ थे। इसलिए अतिशय को स्कूल से लाने के लिए मुझे स्कूटी लेकर जाना पड़ा।

जब मैं स्कूटी से घर की ओर लौट रही थी, तब अचानक रास्ते में मेरा बैलेंस बिगड़ा और मैं और मेरा बेटा हम दोनों स्कूटी से नीचे गिर गए। मेरे शरीर पर कई खरोंचें आईं, लेकिन शुक्र था कि अतिशय को कहीं भी चोट नहीं लगी थी। हमें नीचे गिरा हुआ देखकर आसपास कुछ लोग इकट्ठे हो गए और उन्होंने हमारी मदद करनी चाही। तभी संयोग से वहीं पास में रहने वाली मेरी कामवाली बाई सन्तोष वहाँ से गुज़र रही थी, उसने दूर से ही मुझे देख लिया और वह दौड़ी चली आई। उसने मुझे सहारा देकर खड़ा किया और अपने एक परिचित से मेरी स्कूटी एक दुकान पर खड़ी करवा दी। वह मुझे कन्धे का सहारा देकर एवं अतिशय को अंगुली पकड़कर पास ही स्थित अपने घर ले आई।

जैसे ही हम घर पहुँचे, वैसे ही उसके दोनों बच्चे दौड़कर हमारे पास आ गए। सन्तोष ने मुझे एक जर्जर सी कुर्सी पर बिठाया और मिट्टी के घड़े का ठण्डा जल पिलाया। शीघ्र ही अपने पल्लु से बँधा हुआ 100 का नोट निकाला और अपने बेटे सोनू को 100 का नोट देकर दूध, पेनकिलर टेबलेट, बैंडेज एवं एंटीसेप्टिक क्रीम लाने के लिए भेजा। अपनी बेटी सुन्दरी को पानी गर्म करने के लिए बोल दिया। थोड़ी ही देर में पानी गर्म हो गया। वह मुझे लेकर कपड़े का परदा लगे बाथरूम में ले गई और वहाँ पर उसने मेरे सारी खरोंचों एवं जख्मों को गर्म पानी से अच्छी तरह से धोकर साफ किया और मुझे सहारा देती हुई बाहर लाकर पुनः उसी कुर्सी पर बिठा दिया। फिर वह एक नया टावेल और एक नया

गाउन मेरे लिए लेकर आई। उसने टावेल से मेरा पूरा बदन पोंछा। इतने में ही सन्तोष का बेटा सोनू भी दूध आदि वस्तुएँ ले आया। सबसे पहले मुझे एक पेनकिलर टेबलेट दी और जहाँ आवश्यक था वहाँ बैंडेज लगाई और साथ ही जहाँ मामूली चोट थी वहाँ पर एन्टीसेप्टिक क्रीम लगा दी। अब मुझे कुछ राहत-सी महसूस हो रही थी।

सन्तोष ने मुझे पहनने के लिए नया गाउन दिया और बोली-''मालकिन! यह गाउन मैंने कुछ दिन पहले ही खरीदा था, लेकिन आज तक नहीं पहना है। आप यही पहन लीजिए और थोड़ी देर आराम कर लीजिए। आपके कपड़े गन्दे हो गये हैं, मैं इन्हें धोकर सुखा दूँगी और फिर सूखने के बाद आप अपने कपड़े बदल लेना।''

मेरे पास कोई विकल्प नहीं था। मैं जब तक गाउन पहनकर बाथरूम से बाहर आई तब तक सन्तोष ने झटपट अलमारी में से एक नई बेडशीट निकाली और पलंग पर बिछाकर बोली-''आप थोड़ी देर यहीं आराम कीजिए।'' इतने में ही उसकी सुन्दरी बिटिया ने दूध भी गर्म कर दिया था। सन्तोष ने दूध में एक चम्मच हल्दी मिलाई और मुझे पीने को दिया तथा बड़े विश्वास से कहा-''मालकिन! आप यह हल्दी वाला गर्म दूध पी लीजिए, आपके सारे ज़ख्म जल्दी भर जाएँगे।'' लेकिन अब मेरा ध्यान मेरे शरीर पर लगी चोटों पर नहीं था, बल्कि मेरे अपने मन पर था।

मेरा मन उद्विग्न होकर विचार कर रहा था कि कहाँ संकुचित हृदय वाली मैं और कहाँ यह उदारहृदयी सन्तोष? जिस सन्तोष को मैं फटे-पुराने कपड़े पहनने को देती थी, उसने आज मुझे नया टावेल दिया, नया गाउन दिया और मेरे लिए नई बेडशीट बिछाई। धन्य है प्रेम-स्नेह की प्रतिमूर्ति यह सन्तोष।

एक ओर मेरे मन में यह सब चल रहा था कि दूसरी ओर सन्तोष गरम-गरम चपाती और आलू की सब्जी बना रही थी। थोड़ी देर में वह थाली लगाकर ले आई। वह कहने लगी-''मालकिन! आप और अतिशय बाबूजी दोनों खाना खा लीजिए।'' सन्तोष को पता था कि अतिशय को आलू की सब्जी अधिक पसन्द है और उसे रोटी भी गरम-गरम ही अच्छी लगती है। इसलिए ही उसने ये खाना बनाया था।

सन्तोष की बिटिया सुन्दरी बड़े प्यार से मेरे बेटे अतिशय को आलू की सब्जी और रोटी खिला रही थी और मैं इधर मन ही मन प्रायश्चित्त की अग्नि में जल रही थी। मैं सोच रही थी कि जब भी इसका बेटा सोनू इसके साथ मेरे घर आता था, तब मैं तिरस्कार की दृष्टि से उसे देखती थी और उसे एक तरफ बिठा देती थी। जबकि इन सब लोगों के मन में हमारे प्रति कितना प्रेम है। यह सब सोचकर मैं आत्मग्लानि से भरी जा रही थी। मेरा मन दुःखी और पश्चात्ताप से उद्वेलित था। तभी मेरी नज़र सोनू के पैरों पर गई, जो कुछ लंगड़ा कर चल रहा था। मैंने सन्तोष से पूछा-''सन्तोष! इसके पैर को क्या हो गया है और तुमने इसका इलाज नहीं करवाया क्या?''

सन्तोष ने बड़े दुःख भरे शब्दों में कहा-''मालकिन! इसके पैर का ऑपरेशन करवाना है, जिसका खर्च लगभग 20,000 रुपये है। मैंने और सोनू के पापा ने दिन-रात काम करके 10,000 रुपये तो जोड़ लिए हैं, अभी 10,000 रुपये की और आवश्यकता है। थोड़े दिनों में इकट्ठा करके इसके पैर का ऑपरेशन करवाना है। हमने उधार लेने की भी बहुत कोशिश की, लेकिन कहीं से व्यवस्था नहीं हो सकी। लेकिन हमें पूर्ण विश्वास है कि हम कुछ दिनों में पैसा इकट्ठा करके इसका इलाज करवा लेंगे।''

इस बात को सुनकर मुझे याद आया कि पिछले महीने सन्तोष ने एक बार मुझसे 10,000 रुपये एडवान्स माँगे थे और मैंने झूठा बहाना बनाकर सन्तोष को मना कर दिया था। आज वही सन्तोष अपने पल्लु में बँधे सारे रुपये हम पर खर्च करके भी खुश थी और मेरे पास पैसे होते हुए भी मैं बहाना बनाकर देने से मुकर गई। उस समय यह भी सोच रही थी कि मना करके इस बला को टाल दिया। आज मुझे पता चला कि उस वक्त इसे ऑपरेशन के लिए ही पैसों की जरूरत थी।

मैं अपनी ही नज़रों में गिरती चली जा रही थी। अब मुझे अपने शारीरिक ज़ख्मों की चिन्ता बिल्कुल नहीं थी, बल्कि उन जख्मों की चिन्ता सता रही थी, जो मेरी आत्मा को मैंने ही लगाए थे। आत्मग्लानि से भरपूर मैंने उस समय ही दृढ़-निश्चय कर लिया कि जो हुआ सो तो हुआ, लेकिन आगे जो होगा वह अच्छा ही होगा। मैंने उसी समय सन्तोष के घर में जिन-जिन वस्तुओं का अभाव देखा, उसकी सूची अपने दिमाग में तैयार कर ली। अब मुझे थोड़ा ठीक-ठीक भी लग रहा था। थोड़ी देर में ही निमित्त मुझे लेने के लिए भी आ गये और मैंने अपने कपड़े परिवर्तित किये। लेकिन वह गाउन मैंने अपने पास ही रखा और सन्तोष को बोला- ''सन्तोष! यह गाउन अब तुम्हें कभी भी नहीं दूँगी, यह गाउन मेरी जिन्दगी का सबसे अमूल्य तोहफ़ा है।'' तभी सन्तोष बोली-''मालकिन! पर यह तो बहुत कम रेंज का गाउन है।'' सन्तोष की बात का मेरे पास कोई जवाब नहीं था। मैं निमित्त के साथ घर आ गई, लेकिन सारी रात सो नहीं पाई। मुझे अपराधबोध सा हो गया और मैंने उसका प्रायश्चित्त करने की ठान ली।

सुबह उठकर मैंने अपनी सहेली के पति, जो कि हड्डी रोग विशेषज्ञ थे, उनसे सन्तोष के बेटे सोनू को दिखाने के लिए अगले दिन का अपॉइन्टमेन्ट ले लिया। दूसरे दिन मेरी किटी पार्टी भी थी, लेकिन मैंने उसमें जाना भी रद्द कर दिया। उस दिन मैंने सन्तोष के घर पर जरूरत का सामान खरीदा, जिसकी मैंने मेरे दिमाग में सूची बनाई थी। वह सामान लेकर मैं सन्तोष के घर पहुँच गई।

सन्तोष कुछ भी समझ नहीं पा रही थी कि मैं इतना सारा सामान एक साथ उसके घर पर क्यों लेकर आई। मैंने उसको अपने पास में बिठाया और बोला- ''मुझे अब मालकिन मत कहना और मुझे अपनी बहन ही समझो और मुझे अब दीदी कहा करना। हाँ, याद रखना कल सुबह 9 बजे सोनू को दिखाने डॉक्टर के भी चलना है, उसका ऑपरेशन जल्द से जल्द करवा लेंगे और तब सोनू पूरी तरह ठीक भी हो जाएगा।''

खुशी से सन्तोष की आँखों से अश्रुधारा बह पड़ी और रोते-रोते कहती रही कि -''मालकिन! आप यह सब क्यों कर रहे हो? हम बहुत छोटे लोग हैं, हमारे यहाँ तो ये सब परेशानियाँ चलती रहती हैं।'' सन्तोष मेरे पैरों में झुकने लगी। यह सब सुनकर और देखकर मेरा मन भी द्रवित हो उठा और मेरी आँखों से भी आँसू के झरने बहने लगे। मैंने उसको दोनों हाथों से ऊपर उठाया और गले लगा लिया। मैंने बोला-''बहन रोने की जरूरत नहीं है, अब इस घर की सारी ज़िम्मेदारी मेरी है।''

मैंने मन ही मन कहा कि-सन्तोष तुम नहीं जानती हो कि मैं कितनी छोटी हूँ और तुम कितनी बड़ी हो। आज तुम्हारे श्रेष्ठ व्यवहार के कारण ही मेरी आँखें खुल सकी हैं।

मेरे पास इतना सब कुछ होते हुए भी मैं भगवान से और-और अधिक की भीख माँगती रही, मैंने कभी सन्तोष का अनुभव नहीं किया और एक यह है सन्तोष जो वाकई सन्तोष रूपी धन की मालकिन है। आज जाकर मैंने मेरा नाम जो कि प्रीति है, उस प्रीति का आचरण करके अपने नाम को सार्थक किया है। मैंने आज जान लिया है कि असली खुशी पाने में नहीं, देने में है। अब सन्तोष मेरी कामवाली बाई नहीं होकर, मेरी छोटी बहिन के जैसी थी।

-37/67, रजत पथ, मानसरोवर, जयपुर-302020
(राजस्थान)

प्र. 1 लेखिका का मन उद्विग्न होकर क्या विचार कर रहा था?

प्र. 2 सन्तोष ने किस तरह अपनी मालकिन का साथ दिया?

प्र. 3 कहानी के आधार पर सन्तोष के चरित्र की कोई चार विशेषताएँ लिखिए।

प्र. 4 प्रस्तुत कथा में निहित सन्देश लिखिए।

प्र. 5 लेखिका को ऐसा क्यों लग रहा था कि वह अपनी ही नज़रों में गिरती चली जा रही है?

प्र. 6 प्रस्तुत कथा से चार विशेषण शब्द छाँटकर उनका वाक्यों में प्रयोग कीजिए।

बाल–स्तम्भ [दिसम्बर–2022] का परिणाम

जिनवाणी के दिसम्बर-2022 के अंक में बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत 'अहं का सिर नीचा' के प्रश्नों के उत्तर जिन बालक-बालिकाओं से प्राप्त हुए, वे धन्यवाद के पात्र हैं। पूर्णांक 25 हैं।

पुरस्कार एवं राशि	नाम	अंक
प्रथम पुरस्कार-500/-	सागर जैन, अलीगढ़-रामपुरा (राजस्थान)	24
द्वितीय पुरस्कार-300/-	मौलिक जैन, जयपुर (राजस्थान)	23
तृतीय पुरस्कार- 200/-	पूनम किरण अलीझाड़, भुसावल (महाराष्ट्र)	22
सान्त्वना पुरस्कार (5) - 150/-	सिद्धार्थ जैन, सरवाड़-अजमेर (राजस्थान)	21
	हार्दिक भण्डारी, जोधपुर (राजस्थान)	21
	काव्य जैन, सवाईमाधोपुर (राजस्थान)	21
	काव्य जैन, जोधपुर (राजस्थान)	21
	वृद्धि जैन, देई-बूँदी (राजस्थान)	21

बाल–जिनवाणी जनवरी, 2023 के अंक से प्रश्न (अन्तिम तिथि 15 मार्च, 2023)

प्र. 1. 'नववर्ष में नया संकल्प लो' कविता में निहित सन्देश लिखिए।
प्र. 2. दादी ने पीहू के मम्मी–पापा को तुरन्त क्यों बुलाया?
प्र. 3. हम स्वयं से क्यों हारने लगते हैं? कारण सहित स्पष्ट कीजिए।
प्र. 4. सुरेश का अहंकार कैसे धूमिल हुआ?
प्र. 5. व्रती और अव्रती दोनों के लिए प्रतिक्रमण करना आवश्यक है, क्यों?
प्र. 6. What is the secret of success?
प्र. 7. How can we make our life beautiful?
प्र. 8. 'बालक' कविता में बालक को देश का भविष्य क्यों कहा है?
प्र. 9. 'अहसान का भुगतान' कहानी हमें क्या शिक्षा देती है?
प्र. 10. Write three synonyms of each given words- Precious, Achieve, Deeds & Eternal

बाल–जिनवाणी [नवम्बर–2022] का परिणाम

जिनवाणी के नवम्बर-2022 के अंक की बाल-जिनवाणी पर आधृत प्रश्नों के उत्तरदाता बालक-बालिकाओं का परिणाम इस प्रकार है। पूर्णांक 40 हैं।

पुरस्कार एवं राशि	नाम	अंक
प्रथम पुरस्कार-600/-	रुनझुन जैन, सवाईमाधोपुर (राजस्थान)	39
द्वितीय पुरस्कार-400/-	साक्षी भण्डारी, जोधपुर (राजस्थान)	38
तृतीय पुरस्कार- 300/-	सक्षम जैन, जयपुर (राजस्थान)	37
सान्त्वना पुरस्कार (3)- 200/-	भूमि सिंघवी, जोधपुर (राजस्थान)	36
	रोहित जैन, आलनपुर-सवाईमाधोपुर (राजस्थान)	36
	प्राची जैन, भवानीमण्डी (राजस्थान)	36

बाल-जिनवाणी, बाल-स्तम्भ के पाठक ध्यान दें

बाल–जिनवाणी एवं बाल–स्तम्भ के अन्तर्गत प्रत्येक अंक में दिए जा रहे प्रश्नों के उत्तर प्रदाताओं से निवेदन है कि वे अपना नाम, पूर्ण पता, मोबाइल नम्बर, बैंक विवरण–(खाता संख्या, आई.एफ.एस.सी. कोड, बैंक का नाम इत्यादि) भी साथ में स्पष्ट एवं साफ अक्षरों में लिखकर भिजवाने का कष्ट करें ताकि आपका पुरस्कार उचित समय पर आपको प्रदान किया जा सके। जिन्हें अब तक पुरस्कार राशि प्राप्त नहीं हुई है, वे श्री अनिल कुमारजी जैन से (मो. 9314635755) सम्पर्क कर सकते हैं। *–सम्पादक*

अहंकार के वृक्ष पर
विनाश के फल लगते हैं।

ओसवाल मेट्रीमोनी बायोडाटा बैंक

जैन परिवारों के लिये एक शीर्ष वैवाहिक बायोडाटा बैंक

विवाहोत्सुक युवा/युवती
तथा पुनर्विवाह उत्सुक उम्मीदवारों की
एवं उनके परिवार की पूरी जानकारी
यहाँ उपलब्ध है।

ओसवाल मित्र मंडल मेट्रीमोनियल सेंटर

४७, रत्नज्योत इंडस्ट्रियल इस्टेट, पहला माला,
इरला गांवठण, इरला लेन, विलेपार्ले (प.), मुंबई - ४०० ०५६.

7506357533 ✆ : 9022786523, 022-26287187

ई-मेल : **oswalmatrimony@gmail.com**

सुबह १०.३० से सायं ४.०० बजे तक प्रतिदिन (बुधवार और बैंक छुट्टियों के दिन सेंटर बंद है)

गजेन्द्र निधि

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

उज्ज्वल भविष्य की ओर एक कदम.....

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

Acharya Hasti Meghavi Chatravritti Yojna Has Successfully Completed 13 Years And Contributed Scholarship To Nearly 4500 Students. Many Of The Students Have Become Graduates, Doctors, Software-Professionals, Engineers And Businessmen. We Look Forward To Your Valuable Contribution Towards This Noble Cause And Continue In Our Endeavour To Provide Education And Spirituals Knowledge Towards A Better Future For The Students. Please Donate For This Noble Cause And Make This Scholarship Programme More Successful. We Have Launched Membership Plans For Donors.

We Have Launched Membership Plans For Donors

MEMBERSHIP PLAN (ONE YEAR)		
SILVER MEMBER RS.50000	GOLD MEMBER RS.75000	PLATINUM MEMBER RS.100000
DIAMOND MEMBER RS.200000		KOHINOOR MEMBER RS.500000

Note - Your Name Will Be Published In Jinwani Every Month For One Year.

The Fund Acknowledges Donation From Rs.3000/- Onwards. For Scholarship Fund Details Please Contact M.Harish Kavad, Chennai (+91 95001 14455)

The Bank A/c Details is as follows - Bank Name & Address - AXIS BANK Anna Salai, Chennai (TN)

A/c Name- Gajendra Nidhi Acharya Hasti Scholarship Fund IFSC Code - UTIB0000168

A/c No. 168010100120722 PAN No. - AAATG1995J

Note- Donation to Gajendra Nidhi are exempted u/s 80G of Income Tax Act 1961.

छात्रवृत्ति योजना में सदस्यता अभियान के सदस्य बनकर योजना की निरन्तरता को बनायें रखने में अपना अमूल्य योगदान कर पूण्यार्जन किया, ऐसे संघनिष्ठ, श्रेष्ठीवर्यो एवं अर्थ सहयोग एकत्रित करने करने वालों के नाम की सूची -

KOHINOOR MEMBER (RS.500000)

श्रीमान् मोफतराज जी मुणोत, मुम्बई।
श्रीमान् राजीव जी नीता जी डागा, ह्यूस्टन।
युवारत्न श्री हरीश जी कवाड़, चैन्नई।
श्रीमती इन्द्राबाई सूरजमल जी भण्डारी, चैन्नई (निमाज-राज.)।

DIAMOND MEMBER (RS.200000)

श्रीमान् प्रकाशचन्द जी भण्डारी, हरलूर रोड, बैंगलोर
M/s Prithvi Exchange (India) Ltd., Chennai
श्रीमान् सुगनचन्द सा सरोजाबाई जी मुथा, डबल रोड, बैंगलोर

SILVER MEMBER (RS.50000)

श्रीमान् महावीर सोहनलाल जी बोथरा, जलगांव (घोपालगढ़)
श्रीमान् अमीरचन्द जी जैन (गंगापुरसिटी वाले), मानसरोवर, जयपुर
श्रीमती बीना सुरेशचन्द्र जी मेहता, उमरगांव (घोपालगढ़ वाले)।
श्रीमान् गुप्त सहयोगी, जबलपुर
श्रीमान् प्रकाशचन्द शायरचन्द जी मुथा, औरंगाबाद (महा.)
श्रीमती लाडकंवर जी धर्मपत्नी श्रीमान् अमरचन्द जी सांड, विजयनगर, राजस्थान
श्रीमान पारसमलजी सुशीलजी बोहरा, तिरूवन्नमलई (तमिलनाडू)
श्रीमान् सिद्धार्थजी भण्डारी, जागृति नगर, इन्दौर (मध्य प्रदेश)

GOLD MEMBER (RS. 75000)

श्रीमती पुष्पाबाई सुभाषचन्द जी बागरेचा, शिरपुर (महा.)

PLATINUM MEMBER (RS.100000)

श्रीमान् वूलीचन्द बाघमार एण्ड संस, चैन्नई।
श्रीमान् वलीचन्द जी सुरेश जी कवाड़, पून्नामल्लई।
श्रीमान् राजेश जी विमल जी पवन जी बोहरा, चैन्नई।
श्रीमान् अम्बालाल जी बसंतीदेवी जी कर्नावट, चैन्नई।
श्रीमान् सम्पतराज जी राजकवंर जी भंडारी, ट्रिपलीकेन-चैन्नई।
प्रो. डॉ. शैला विजयकुमार जी सांखला, चालीसगांव (महा.)।
श्रीमान् विजयकुमार जी मुकेश जी विनीत जी गोठी, मदनगंज-किशनगढ़।
श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, तमिलनाडू।
श्रीमती पुष्पाजी लोढ़ा, नेहरू पार्क, जोधपुर।
श्रीमान जी. गणपतराजजी, हेमन्तकुमारजी, जेपेन्द्रकुमारजी, कोयम्बटूर (कोसाणा वाले)
श्रीमान् गुप्त सहयोगी, तिरूवल्लुवर (तमिलनाडू)।
श्रीमती कंचनजी बापना, श्री संजीव जी बापना, कलकत्ता (जोधपुर वाले)
श्रीमान पारसमलजी सुशीलजी बोहरा, तिरूवन्नमलई (तमिलनाडू)
श्रीमती शान्ता डॉ. उमरावसिंह जी लोढा, रावजी की हवेली, जोधपुर

सहयोग के लिए चैक या ड्राफ्ट कार्यालय के इस पते पर भेजें - M.Harish Kavad - No. 5, Car Street, Poonamallee, CHENNAI-56
छात्रवृत्ति योजना से संबंधित जानकारी के लिए सम्पर्क करें - मनीष जैन, चैन्नई (+91 95430 68382)

'छोटा सा चिंतन परिग्रह को हल्का करने का, लाभ बड़ा गुरु भाइयों को शिक्षा में सहयोग करने का'

जिनवाणी प्रकाशन की योजना के लाभार्थी बनें

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा जिनवाणी पत्रिका के प्रकाशन हेतु एक योजना प्रारम्भ की गयी है, जिसके अन्तर्गत एक-एक लाख रुपये की राशि प्रदान करने वाले दो महानुभावों के द्वारा प्रेषित प्रकाश्य सामग्री एक-एक पृष्ठ में एक माह प्रकाशित की जाती है। इसके साथ ही वर्ष भर उनके नामों का उल्लेख भी जिनवाणी में किया जाता है। सन् 2020 की जुलाई से अनेक महानुभाव इस योजना में जुड़े हैं, उन सबके हम आभारी हैं।

अर्थसहयोगकर्ता जिनवाणी (JINWANI) के नाम से चैक प्रेषित कर सकते हैं अथवा जिनवाणी के निम्नाङ्कित बैंक खाते में राशि नेफ्ट/नेट बैंकिंग/चैक के माध्यम से सीधे जमा करा सकते हैं।

बैंक खाता नाम-JINWANI, बैंक-State Bank of India, बैंक खाता संख्या-51026632986, बैंक खाता-SAVING Account, आई.एफ.एस. कोड-SBIN0031843, ब्रॉच-Bapu Bazar, Jaipur

राशि जमा करने के पश्चात् राशि की स्लिप एवं जमाकर्ता का पेन नं., मण्डल कार्यालय को प्रेषित करने की कृपा करें, जिससे आपकी सेवा में रसीद प्रेषित की जा सके। 'जिनवाणी' के खाते में जमा करायी गई राशि पर आपको आयकर विभाग की धारा 80G के अन्तर्गत छूट प्राप्त होगी, जिसका उल्लेख रसीद पर किया हुआ है।

वित्तीय वर्ष 2022-23 हेतु लाभार्थी

(1) श्रीमती शान्ताजी, प्रदीपजी, मधुजी मोदी, जयपुर।
(2) श्री तेजमलजी, अभयमलजी लोढ़ा, नागौर-जयपुर।
(3) न्यायाधिपति श्री प्रकाशजी टाटिया, जोधपुर।
(4) श्री कनकराजजी कुम्भट, जोधपुर।
(5) श्री पूनमचन्दजी जामड़ (किशनगढ़ वाले), जयपुर।
(6) श्री सुशीलजी बाफना, जलगाँव।
(7) श्री सोहनलालजी, गौतमचन्दजी हुण्डीवाल, चेन्नई।
(8) मैसर्स अमरप्रकाश फाउण्डेशन प्रा. लि., चेन्नई।
(9) श्री सुबाहु कुमारजी, मनोजजी, मनीषजी (सी.ए.) जैन, बजरिया-सवाईमाधोपुर (राजस्थान)
(10) श्री श्रीपाल मलजी-श्रीमती मधुजी, श्री चिरागजी-श्रीमती लक्ष्याजी सुराणा (नागौर वाले), चेन्नई
(11) श्री कनकराजजी, महेन्द्रजी, देवांशजी कुम्भट, जोधपुर-मुम्बई
(12) सी. आर. कोठारी मेमोरियल चैरिटेबल ट्रस्ट (रजि), जयपुर-वडोदरा-मुम्बई
(13) नाहर परिवार मुम्बई, भोपाल, इन्दौर, बरेली।
(14) सौ. प्रेमलताजी सोहनलालजी, सौ. रञ्जनाजी महावीरजी बोथरा, जलगाँव (महाराष्ट्र)

-अशोक कुमार सेठ, मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, 9314625596

उदारमना लाभार्थियों की अनुमोदना एवं स्वेच्छा से नये जुड़ने वाले लाभार्थियों का हार्दिक स्वागत।

CLUB REGALIA
AT NAVKAR CITY

CLUB REGALIA

SWIMMING POOL

AMENITIES

- NON-ALCOHOLIC CLUB
- 100%VEGETARIAN CLUB
- INDOOR SQUASH COURT
- SPA & WELLNESS CENTRE
- OUTDOOR SWIMMING POOL
- INDOOR BADMINTON COURT
- MULTI-CUISINE RESTAURANT
- OUTDOOR BANQUET LAWN
- INDOOR BANQUET HALL
- BILLIARDS LOUNGE
- KID'S POOL AREA
- BOWLING ALLEY
- MUSIC ROOM
- LIBRARY
- SALON

KID'S PLAY ROOM

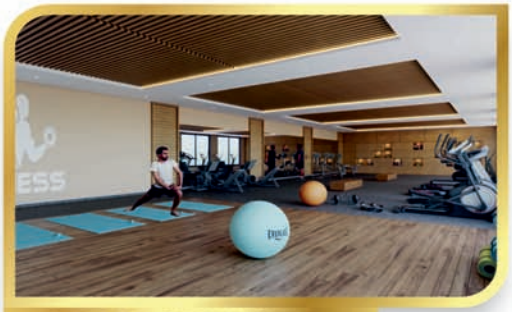

INDOOR GYMNASIUM

8504 000 222

Near DPS Circle, Navkar City, Jodhpur (Raj.)

Disclaimer: Visual representations shown are only informative and indicative of the envisaged developments subject to variation and modification made by the company as approved by the competent authorities

JVS
PURITY

JVS Foods Pvt. Ltd.

Manufacturer of :

NUTRITION FOODS
BREAKFAST CEREALS
FORTIFIED RICE KERNELS
WHOLE & BLENDED SPICES
VITAMIN AND MINERAL PREMIXES

Special Foods for undernourished Children
Supplementary Nutrition Food for Mass Feeding Programmes

With Best Wishes :

JVS Foods Pvt. Ltd.

CERTIFIED ISO 22000 CERTIFIED

G-220, Sitapura Ind. Area,
Tonk Road, Jaipur-302022 (Raj.)
Tel.: 0141-2770294
Email-jvsfoods@yahoo.com
Website-www.jvsfoods.com
FSSAI LIC. No. 10012013000138

Food Safety System Certification 22000

KALPA-TARU®

WELCOME TO A HOME THAT DOESN'T FORCE YOU TO CHOOSE.
BUT, GIVES YOU EVERYTHING INSTEAD.

Life is all about choices. So, at the end of your long day, your home should give you everything, instead of making you choose. Kalpataru welcomes you to a home that simply gives you everything under the sun.

022 3064 3065

Centrally located in Thane (W) | Sky park | Sky community | Lavish clubhouse | Swimming pools | Indoor squash court | Badminton courts

PROJECT
IMMENSA
THANE (W)
EVERYTHING UNDER THE SUN

TO BOOK 1, 2 & 3 BHK HOMES, CALL: +91 22 3064 3065

Site Address: Bayer Compound, Kolshet Road, Thane (W) - 400 601. | **Head Office**:101, Kalpataru Synergy, Opposite Grand Hyatt, Santacruz (E), Mumbai - 400 055. | Tel: +91 22 3064 5000 | Fax: +91 22 3064 3131 | **Email**: sales@kalpataru.com | **Website**: www.kalpataru.com

In association with HDFC PROPERTY FUND

This property is secured with Axis Trustee Services Ltd. and Housing Development Finance Corporation Limited. The No Objection Certificate/Permission would be provided, if required. All specifications, designs, facilities, dimensions, etc. are subject to the approval of the respective authorities and the developers reserve the right to change the specifications or features without any notice or obligation. Images are for representative purposes only. *Conditions apply.

If undelivered, Please return to

Samyaggyan Pracharak Mandal
Above Shop No. 182,
Bapu Bazar, Jaipur-302003 (Raj.)
Tel. : 0141-2575997

स्वामी सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के लिए प्रकाशक, मुद्रक - अशोक कुमार सेठ द्वारा डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर राजस्थान से मुद्रित एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, शॉप नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-3 राजस्थान से प्रकाशित। सम्पादक-डॉ. धर्मचन्द जैन